वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं० १३६

कल्याण कल्पतरु स्तोत्र

[छन्द विज्ञान सहित]

रचयित्री :
चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज के प्रथम
पट्ट शिष्य आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज की
सुशिष्या, जंबूद्वीप रचना की पावन
प्रेरिका गणिनी आर्यिकारत्न
श्री ज्ञानमती माताजी



प्रकाशक
दि० जैन त्रिलोक शोध संस्थान
हस्तिनापुर (मेरठ) उ० प्र०

प्रथम संस्करण 1100 | रक्षाबन्धन पर्व वी० नि० सं० २५१८ १३ अगस्त १९९२ | मूल्य १२ रुपये

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला मे दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, सस्कृत, प्राकृत, कन्नड, अग्रेजी, गुजराती, मराठी, आदि भाषाओ के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयो पर लघु एव वृहद् ग्रन्थो का मूल एव अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाये भी प्रकाशित होती रहती हैं।

संस्थापिका व प्रेरणास्त्रोत :

गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी

समायोजन :

आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

निर्देशक

पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी

ग्रन्थमाला सम्पादक :

बाल ब्र० रवीन्द्र कुमार जैन

मुद्रक : सुमन प्रिण्टर्स, शारदा रोड, मेरठ।  २४३१६

विषय-दर्पण

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या

(२) छन्द विज्ञान

(३) समवर्ण छन्द

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या



पुरोवाक्

—गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

"ऊँ, मा। सो व्यात्।" पचपरमेष्ठी वाचक "ऊँ" यह बीजाक्षर है वह मेरी रक्षा करे। महापुराण मे "व्याकरण, छद और अलकार" इन तीनो को "वाङ्मय" कहा है[1]। इस वाङ्मय मे उपलब्ध आज के ग्रथो मे कई एक ग्रथो को मैंने अपनी शिष्या आ० जिनमती आदि को सन् १९५५ से १९५८ तक पढाया था। पुन हस्तिनापुर क्षेत्र पर सन् १९७५ मे कु० माधुरी आदि शिष्याओ को छदशास्त्र "वृत्तरत्नाकर" पढा रही थी। उन्ही दिनो मेरे मन मे इन एकाक्षरी छदो से लेकर छब्बीस अक्षरी तक छदो मे "चतुर्विशति तीर्थंकर" का स्तोत्र रचने की भावना जागृत हुई। तभी मैने "ऊँ मा। सोऽव्यात्" इस एकाक्षरी छद से स्तोत्र रचना प्रारम्भ कर दी।

इसके "नामकरण" के बारे मे श्री पूज्यपाद स्वामी का एक श्लोक मुझे स्मरण मे आया—

जिनपतयस्तत्प्रतिमास्तदालयास्तन्निषद्यकास्थानानि।
ते ताश्च ते च तानि च, भवन्तु भवघातहेतवो भव्यानाम्॥

जिनपति-तीर्थंकर भगवान, उनकी प्रतिमायें, उन प्रतिमाओ के मदिर और तीर्थकरो के निषद्या-पचकल्याण क्षेत्र ये चार हैं। ते-वे तीर्थकर, ता—वे प्रतिमाये, ते-वे मदिर और तानि वे स्थल भव्यो के ससार का नाश करने वाले होते हैं।

इस पद्य मे तीर्थंकर भगवान ही सर्वश्रेष्ठ माने गये हैं क्योकि आगे के तीनो उन तीर्थंकरो से ही या तीर्थंकरो के ही होते हैं। इसी अभिप्राय के अनुसार मैंने कल्याण-हित के इच्छुक जनो के लिये "कल्पतरु" कल्पवृक्ष के समान इच्छित-मुहमागा फल देने वाले ऐसे तीर्थंकर भगवान के इस स्तोत्र का "कल्याणकल्पतरु स्तोत्र" यह उत्तम नाम दिया। इसमे मैंने

---

१ महापुराण, पर्व १६, श्लोक १११ से ११५ तक, २ नन्दीश्वर भक्ति सस्कृत, श्लोक ३६,

"उक्ता" आदि एकाक्षरी छद से लेकर "उत्कृति" नाम के छब्बीस अक्षरी छदो के अन्तर्गत १४० छदो का प्रयोग किया है और २७ अक्षरी दो तथा ३० अक्षरी एक ऐसे तीन दण्डक छद भी लिये हैं, इस स्तोत्र में दो मात्रा छद हैं ऐसे कुल १४५ प्रकार के छद हैं। इस स्तोत्र मे दो सौ तेरह (२१३) पद्य हैं और ये १४५ छदो मे निबद्ध हैं।

इस स्तोत्र की रचना वीर नि० स० २५०१, श्रावण शुक्ला पूर्णिमा, दिनाक २१-८-१९७५ मे हुई है। पुन इस स्तोत्र का क्रमश. सम्यग्ज्ञान पत्रिका मे प्रकाशन करने हेतु वीर नि० स० २५१३ ज्येष्ठसुदी ७, (४-६-१९८७) के दिन मैने इसका अन्वयार्थ-अर्थ लिखा था। अभी इसे जिनस्तोत्रसग्रह पुस्तक मे मूल सस्कृत ही दिया गया, अब इसे अर्थ और छन्द लक्षण सहित सर्वांगीण प्रकाशित करने का अवसर आया है।

कल्याणकल्पतरुस्तोत्र का विषय—

इस स्तोत्र मे महापुराण उत्तरपुराण के आधार से सक्षेप मे चौबीसो तीर्थंकरो का "जीवन परिचय" भी आ गया है। इसमे छद और अलकारो की विशेषता तो है ही है साथ मे भक्ति, वैराग्य और अध्यात्म भावनाये भी प्रमुख हैं। भक्त भगवान की भक्ति करते हुये उसके फल की भी याचना करता है सो इन स्तुतियो मे स्वात्मसुख और मोक्षपद की ही याचना की गई है। श्रीकुदकुददेव के शब्दो मे यह याचना दोषास्पद नही है प्रत्युत् गुणकारी ही है। यथा—चौबीस तीर्थंकर भक्ति मे कहा है—

चदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहियपहा सत्ता।
सायरमिव गभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसतु ॥

जो चन्द्रमा से अधिक निर्मलतर है, सूर्य से भी अधिक प्रभा वाले हैं और सागर के समान गभीर हैं ऐसे सिद्ध भगवान हमे सिद्धि प्रदान करें। पुन ये ही आचार्य मूलाचार मे कहते है—

भासा असच्चमोसा, णवरि हु भत्तीय भासिदा एसा।
ण हु खीणरागदोसा, दिंति समाहिं च बोहिं च ॥५६६॥

पूर्व मे की गई याचना एक "असत्यमृषा"—अनुभय भाषा है, वास्तव मे यह केवल भक्ति से ही कही गई है क्योकि रागद्वेष से रहित भगवान समाधि और बोधि को नही देते हैं। इन उद्धरणो से स्पष्ट है कि भगवान की भक्ति करने हुये उसके फल की याचना जब महान आचार्य

भी करते रहे हैं तब हम जैसे तुच्छ भक्त के लिये वह अग्राह्य कैसे हो सकता है ?

इसमे उन-उन तीर्थंकरो की जन्मनगरी, माता-पिता के नाम, पांचो कल्याणको की तिथियाँ, तीर्थंकर के शरीर का वर्ण, शरीर की ऊचाई, उनका वंश, उनकी आयु और उनके चिह्न आदि का भी वर्णन है। जैसे "सभव-जिन" के स्तवन मे एक "मदलेखा" छद में चार चरण मे चार विध परिचय आ गये। यथा—

मदलेखा छन्द—

> शाम्यत्तापसमूहः, स्वर्णाभो जिनदेवः।
> श्रावस्त्या दृढराजो, धन्योऽभूत् जनकस्ते ॥८॥

हे भगवन्! आप ससार के ताप समूह को शात करने वाले हैं, आप जिनेन्द्र भगवान के शरीर की स्वर्ण जैसी आभा है, श्रावस्ती नगरी मे आपका जन्म हुआ है और आपके पिता का नाम "दृढराज" है। इत्यादि। इस स्तोत्र की विशेषता तो निर्मत्सर भाव से स्तोत्र पढने वालो को स्वय ही ज्ञात हो जावेगी अधिक कहने से क्या ?

इसी ग्रथ मे मैंने छद का लक्षण, उसके वर्ण और मात्रा के भेदो को तथा इस ग्रथ मे आये हुये छदो से अतिरिक्त भी छदो को लिया है उसका "छन्दो विज्ञान" ऐसा नाम दे दिया है कि जिससे स्तोत्र के पाठक गण छन्द ज्ञान को प्राप्त करके अनेक प्रकार के "छन्द लक्षण" को एक ग्रथ से ही प्राप्त कर ले।

महापुराण मे कहा है—

> छदोविचितिमप्येव, नानाध्यायैरुपादिशत्।
> उक्तात्युक्तादिभेदांश्च, षड्विंशतिमदीदृशत् ॥११३॥
>
> प्रस्तार नष्टमुद्दिष्टमेकद्वित्रिलघुक्रियाम्।
> सख्यामथाध्वयोगं च व्याजहार गिरांपतिः ॥११४॥

भगवान ऋषभदेव ने अपनी पुत्रियो को नाना अध्यायो मे विभक्त ऐसे छन्दशास्त्र का भी उपदेश दिया था और उसके "उक्ता, अत्युक्ता" आदि छब्बीस भेद भी दिखलाये थे। सभी विद्याओ के अधिपति भगवान ने प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, एकद्वित्रिलघुक्रिया, सख्या और अध्वयोग छन्द-शास्त्र के इन छह प्रत्ययो का भी निरूपण किया था।"

वर्तमान में "वृत्तरत्नाकर" नाम के छन्दशास्त्र में ये "उक्ता" आदि छब्बीस भेद उपलब्ध हैं तथा प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट आदि छह प्रत्यय भी मिलते हैं। यथा—

छह प्रत्ययों के नाम

प्रस्तारो नष्टमुद्दिष्ट-मेकद्व्यादिलग क्रिया।
सख्यानमध्वयोगश्च, षडेते प्रत्यया. स्मृता ॥१॥

प्रस्तार का लक्षण—

पादे सर्वगुरावाद्या-ल्लघुं न्यस्य गुरोरधः।
यथोपरि तथा शेष, भूयः कुर्यादमु विधिम् ॥२॥
ऊने दद्याद्गुरूनेव, यावत्सर्वलघुर्भवेत्।
प्रस्तारोऽय समाख्यातश्छन्दोविचितिवेदिभिः ॥३॥

नष्ट का लक्षण—

नष्टस्य यो भवेदकस्तस्यार्धेऽर्धे समे लः।
विषमे चैकमाधाय, स्यादर्धेऽर्धे गुरुर्भवेत् ॥४॥

उद्दिष्ट का लक्षण—

उद्दिष्ट द्विगुणानाद्या-दुपर्यंकान् समालिखेत्।
लघुस्था ये च तत्रांकास्तै· सैकैर्मिश्रितैर्भवेत् ॥५॥

एकद्व्यादिलगक्रिया—

वर्णान्वृत्तभवान् सैका-नौत्तराधर्यत स्थितान्।
एकादिक्रमतश्चैता-नुपर्युपरि निक्षिपेत् ॥६॥
उपान्त्यतो निवर्तेत, त्यजन्नेकैकमूर्ध्वत.।
उपर्याद्याद् गुरोरेक गेकद्व्यादिलगक्रिया ॥७॥

सख्या का लक्षण—

लगक्रियांकसदोहे, भवेत्सख्या विमिश्रिते।
उद्दिष्टाकसमाहारः, सैको वा जनयेदिमाम् ॥८॥

अच्वयोग का लक्षण—

सव्येव द्विगुणैकोना, सद्भिरध्वा प्रकीर्तितः
वृत्तस्यांगुलिकी व्याप्ति-रधः कुर्यात्तथांगुलिम् ॥६॥

यद्यपि यह ग्रन्थ "श्रीभट्टकेदारप्रणीत" है वैदिक सम्प्रदाय का है फिर भी यह जैन शास्त्रो के अनुसार ही वर्णित है अत इन छन्दो को क्रम से और पूर्णतया कहने वाला कोई जैन ग्रन्थ अवश्य होगा किन्तु खेद है कि ऐसा "सर्वांगीण पूर्ण" कोई जैन छन्द ग्रन्थ हमे आज उपलब्ध नही हो रहा है। वैदिक ग्रन्थो मे एक "छन्दो-मजरी" ग्रन्थ गगादास कविकृत है उसमे भी "उक्ता" आदि से लेकर छब्बीस अक्षरी छन्दो का इस 'वृत्त-रत्नाकार' ग्रन्थ जैसा ही सारा वर्णन है। कही-कही कुछ छन्द के लक्षण जरा बदले भी हैं। किन्तु अधिकतर ज्यो के त्यो ही हैं। यथा—

स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः ॥२८॥
उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ ॥२९॥ (वृत्तरत्नाकर)
स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः ॥१॥
उपेन्द्रवज्रा प्रथमे लघौ सा ॥२॥ (छन्दोमजरी)

इस स्तोत्र ग्रन्थ मे मैंने पद के अन्त मे या चरण के अन्त मे "म्" का नियम नही रखा है जैसे—ॐ मा,/नमामि त्रिकाल/इत्यादि, क्योंकि "कातत्ररूपमाला" नाम की जैन व्याकरण मे ऐसा नियम आया है। यथा—

"वा विरामे ॥९२॥ पदान्तो मकारोऽनुस्वारमापद्यते न वा विरामे। देवाना, देवानाम्। इत्यादि। पद के अन्त का मकार विराम-पाद या वाक्य के अन्त मे अनुस्वार हो जाता है अथवा नही भी होता है। इसी प्रकार से जैसे त्वम् + करोषि है इसमे भी—

"वर्गे तद्वर्गपचम वा ॥९३॥ पदान्तो मकारो वर्गे परे तद्वर्गपचम-मापद्यते न वा" त्वङ्करोषि, त्व करोषि इत्यादि। पदान्त मकार वर्ग के परे उसी वर्ग का पचम अक्षर हो जाता है अथवा नही भी होता है तो अनुस्वार हो जाता है। इसी नियम से यहाँ अनुस्वार भी रखा गया है। यथा—त्वदंघ्रि इत्यादि।

कतिपय विद्वान् इन शब्दो को व्याकरण से अशुद्ध कह देते हैं उन्हें कातन्त्ररूपमाला के इन सूत्रो को ध्यान में रखना चाहिये।

इस ग्रन्थ मे अलकार चिन्तामणि ग्रन्थ से काव्य रचना के लिये कुछ आवश्यक जानकारी दी गई है—यद्यपि इसमें कहा है कि भगवान की स्तुति या चरित्र मे गणो या वर्णों का कोई नियम नही है फिर भी प० खूबचन्द शास्त्री कहा करते थे कि महापुराण मे श्री जिनसेनाचार्य के द्वारा प्रारम्भ के मगलाचरण मे "रगण" का प्रयोग हो गया इससे वे इस ग्रन्थ को पूरा नही कर पाये मध्य मे ही उनकी समाधि हो गई। समाधि से पूर्व ही उन्होने आज्ञा दी थी अत उनके योग्य शिष्य श्री गुणभद्र सूरि ने उस ग्रन्थ को पूर्ण किया है। वह मगलाचरण यह है—

श्रीमते सकलज्ञान-साम्राज्यपदमीयुषे।
धर्मचक्रभृते भर्त्रे, नम· संसारभीमुषे॥

यहाँ "श्रीमते" यह रगण है।
S I S

जो भी हो मैने प्राय अपने ग्रन्थो मे प्रारम्भ मे "सिद्ध" पद का प्रयोग किया है। जैसे—बाहुबली स्तोत्र मे" सिद्धिप्रद मुनिगणेन्द्रशतेन्द्र-वद्य।" इन्द्रध्वजविधान मे—"सिद्धो की करूं वदना।" सिद्धान् त्रैलो-क्यमूर्धस्थान्" नियमसार प्राभृत की स्याद्वाद चन्द्रिका टीका के प्रारम्भ में—

"सिद्धेः कारणमुत्तम जिनपते श्रीपादपद्मद्वयम्।"

मैंने "कातत्रव्याकरण" सन् १६५४ मे पढी थी उसमे "सिद्धो वर्णसमाम्नाय" सूत्र पढा था तभी से प्रारम्भ मे "सिद्ध" या "सिद्धि" शब्द को रखना प्रिय हो गया था।

इस "छन्द विज्ञान" मे मैंने अर्धसमवर्णछन्द और विषमवर्णछन्द के कुछ भेद दिये हैं। पुन मात्रा छन्द के भी नाम मात्र ही भेद दे दिये हैं। मैंने इन छन्दो के लक्षण मे "वृत्तरत्नाकर" का ही प्रमुखतया उपयोग

किया है। कतिपय छन्द वृत्तरत्नाकर की टीका से एव कई एक छन्द छन्दोमजरी से भी लिये है। अन्त मे मैंने "सभाष्य नाममाला" सस्कृत ग्रथांक ६ (ज्ञानपीठ से प्र०) ग्रन्थ से उद्धृत कर "एकाक्षरी कोश" भी इसमे दे दिया है। यह कोश "श्रीअमरकीर्ति" जैन कवीन्द्र द्वारा विरचित है।

इस प्रकार यह "कल्याणकल्पतरु स्तोत्र" चौबीस तीर्थंकरो के स्तवन के साथ-साथ एक सुन्दर "छन्दशास्त्र" भी बन गया है। छन्दशास्त्र के जिज्ञासुओ को यह ग्रन्थ पठनीय, मननीय तो है ही, कठाग्र करने योग्य है। यह ग्रन्थ सभी जिनभक्तो के लिये कल्पवृक्ष के समान इच्छित फल देने वाला होवे, इसी मगलकामना के साथ जिनेद्रदेव के चरणो मे अनतश नमस्कार करते हुये मैं स्वय यही प्रार्थना करती हूँ कि—

जिने भक्तिर्जिने भक्ति जिने भक्तिर्दिने दिने।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु, सदा मेऽस्तु भवे भवे ।।

वैशाख शु० ५, वीरनि० स० २५१८
जबूद्वीप, हस्तिनापुर, मेरठ (उ० प्र०)



ब्राह्मी की प्रतिमूर्ति–गणिनी आर्यिका ज्ञानमतीजी

लेखिका—आर्यिका चन्दनामती

जम्बूद्वीप रचना की पावन प्रेरिका परम पूज्या गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी जिनका परिचय लिखने का प्रयास मैं कर रही हूँ उन्हे एक कुशल शिल्पी कहूँ या कुमारिकाओ की पथप्रदर्शिका, आशु-कवयित्री कहूँ या विदुषी लेखिका, सरस्वती की चल प्रतिमा कहूँ या पूर्णिमा की चाँदनी। सारे ही विशेषण उनके चतुरक्षरी "ज्ञानमती" नाम मे समाहित हो जाते हैं।

उत्तर प्रदेश के बाराबकी जिले मे छोटे से कस्बे टिकैतनगर के श्रेष्ठी छोटेलालजी क्या कभी सोच भी सके होगे कि मेरी सुकुमार मैना सारे विश्व मे मेरा और मेरे कस्बे का नाम रोशन करेगी? उन्होने सोचा हो या नही, माता मोहिनी ने तो मैना की बाल दुर्लभ ज्ञानवर्धक वार्ताओ से अनुमानित कर लिया था कि यह एक गृहिणी के रूप में माँ न बनकर जगन्माता बनेगी। वि० स० १९९१ (२२ अक्टूबर, सन् १९३४) की शरद्-पूर्णिमा ने तो मैना की जन्म-कुडली ही खोलकर रख दी थी कि इसकी ज्ञान चाँदनी से समस्त ससार को शीतलता प्राप्त होने वाली है।

जीवन के १७ वर्ष पूर्ण हुए थे, वैराग्य के बढते कदमो को सबल मिला आचार्य श्री देशभूषण महाराज का, अतः वि० स० २००८ (सन् १९५२) की शरद् पूर्णिमा को सप्तम प्रतिमा रूप ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। पुन वि० स० २००९ चैत्र कृ० एकम (सन् १९५३) मे महावीर जी अतिशय क्षेत्र पर क्षुल्लिका दीक्षा ग्रहण कर "वीरमती" नाम प्राप्त किया। अनन्तर आचार्यश्री शातिसागर महाराज के दर्शन करके उनकी सल्लेखना के पश्चात् वि० स० २०१३, वैशाख कृ० २ (सन् १९५६) को माधोराजपुरा (राज०) मे आचार्यश्री के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर महाराज से आर्यिका दीक्षा धारण कर ज्ञानमती नाम से अलकृत हुई। सघर्षों की विजेत्री एव दृढता की मूर्ति स्वरूप आपका यह चार लाइनो का परिचय ही आपकी जीवन्त ज्योति को प्रज्वलित कर रहा है।

इन्होंने जैसे अपने जीवन का निर्माण किया उसी प्रकार कई पुरुषो के जीवन को सस्कारो की टाकी से उकेर-उकेर कर मुनि का रूप प्रदान कराया पुन: उन्हे स्वय नमस्कार भी करने लगी। इसलिए मैंने "कुशल-शिल्पी" की सज्ञा से सम्बोधित किया है।

आप "कुमारिकाओ की पथ प्रदर्शिका" इसलिए हैं कि उनका रत्नत्रय पथ आपने प्रशस्त किया है। उससे पूर्व बीसवी शताब्दी मे किसी कुमारी कन्या ने दीक्षा धारण नही की थी। इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम आदि महाविधानो एव विशाल टीका ग्रन्थो के सृजन से आशुकवयित्री एव विदुषी लेखिका का रहस्य भी स्वयमेव प्रगट हो जाता है। सरस्वती का वरदान तो आपको प्राकृतिक रूप मे ही प्राप्त है इसीलिए आज सारा विद्वज्जगत् मूक स्वर से यह स्वीकार करता है कि वर्तमान मे पूज्य ज्ञानमती माताजी के समान ज्ञानवान अन्य कोई व्यक्तित्व नही है। शरद्-पूर्णिमा की चाँदनी तो आपके पीछे-पीछे चलकर सबको ज्ञानामृत से सतृप्त कर रही है। इसीलिए ज्ञानमती इस नाम मे आपका सारा अस्तित्व समाविष्ट हो जाता है।

शताधिक ग्रन्थो की रचना, जम्बूद्वीप रचना निर्माण मे सम्प्रेरणा, ज्ञानज्योति की भारत यात्रा का प्रवर्तन, सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका का लेखन आदि आपके चतुर्मुखी कार्यकलापो से सारा देश सुपरिचित है।

साहित्य सृजन की इसी श्रृंखला मे यह "कल्याण कल्पतरु स्तोत्र—छन्द लक्षण सहित" एक अद्वितीय कृति है। "जिनस्तोत्र सग्रह" नामक ग्रन्थ मे भी पूज्य माता जी ने इस स्तोत्र को दिया है। जिसकी समीक्षा मे डॉ० श्री जयकुमार जैन मुजफ्फरनगर वालो ने लिखा है—

"सस्कृत साहित्य मे इतने अधिक छन्दो वाले स्तोत्र तो क्या कदाचित् मेरी निगाह मे महाकाव्य भी नही है। इस दृष्टि से पूज्य माताजी का यह महनीय अवदान है।

इसमे एक अक्षर वाले छन्द से लेकर सत्ताईस अक्षर वाले छन्द तक के १४३ पद्य तथा तीस अक्षर वाले एक अर्णोदण्डक छन्द का प्रयोग हुआ है। ऐसी स्थिति सस्कृत के स्तोत्र साहित्य मे कही भी दृष्टिगोचर नही हुई है। इस स्तोत्र की यह अपनी अप्रतिम विशेषता है।

इन स्तोत्रो के पर्यालोचन को एक लघु निबन्ध मे प्रस्तुत करना सर्वथा दुष्कर है। भविष्य मे किसी शोधार्थी को माताजी के सस्कृत

स्तोत्रो पर पी० एच० डी० हेतु शोध कराने की भावना है। यदि यह कार्य सुसम्पन्न करा सका तो मैं अपना गौरव समझूंगा।"

इस लघु पुस्तक मे ऊपर तो स्तोत्र है और नीचे छन्द दिए गए हैं जिससे छन्द ज्ञान के इच्छुक जन अपूर्व लाभ प्राप्त करेंगे इसमे कोई सदेह नही है।

जहाँ हिन्दुस्तान भर में आपके विधानो की धूम मची हुई है वहीं हस्तिनापुर मे निर्मित जम्बूद्वीप की रचना आपकी एक अमरकृति है। यहाँ आकर प्रत्येक नर-नारी के मुख से यही निकलता है—यहाँ तो स्वर्ग जैसी सुख-शान्ति है, पूज्य माता जी ने जगल मे मगल ही कर दिया है। राजस्थान से आए कुछ तीर्थयात्री तो माता जी के चरण सानिध्य मे आकर कहने लगे—"अब तक तो हमने केवल शास्त्रों में पढ़ा था कि स्वर्ग से इन्द्र आकर तीर्थंकरो की जन्म नगरियो की रचना करता है किन्तु वर्तमान का हस्तिनापुर देखकर तो ऐसा प्रतीत होता है कि मानो सचमुच मे ही इन्द्र ने आकर नगरी बसाई है।"

भगवान जिनेन्द्र देवसे यही प्रार्थना है कि पूज्या गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी स्वस्थ रहते हुए चिरकाल तक भव्यो को मार्गदर्शन देती रहे।



दो शब्द

पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

स्वयं अविरल पढ़ना-लिखना तथा शिष्य मण्डली को भी निरन्तर पढ़ने-लिखने मे लगाये रखना यह प्रस्तुत ग्रन्थ की रचयित्री पूज्य गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी का परिचय है। माताजी की लेखनी से समुत्पन्न प्रत्येक कृति ऐसी होती है जिसका रसास्वादन प्रत्येक वय वाले ले सकते हैं।

यह तो माताजी अच्छी तरह जानती है कि जैन समाज मे सस्कृत के ज्ञाता नगण्य है अतः संस्कृत की रचनाओ को लगे हाथ हिन्दी गद्य/पद्य मे परिवर्तित करके जो भक्ति अजली जिन-वाणी माता के चरणो मे अर्पित की है उसी मे भक्तगण अवगाहन करके कृत-कृत्य हो रहे हैं। चाहे माताजी की लिखी हुई स्तुतियाँ हो या विधान, स्वाध्याय के ग्रन्थ समयसार हो जैन भारती, बाल विकास हो या प्रतिज्ञा परीक्षा आदि उपन्यास, सभी एक से बढकर एक ऐसी कृतियाँ निर्मित हुई, जिनसे समाज के सभी वर्ग के लोग लाभान्वित हो रहे हैं।

आपके हाथो मे जो यह "कल्याण कल्पतरु" नाम की कृति है यह भी पाठको को कल्पवृक्ष समान अचित्य फल को प्रदान करेगी ऐसी भगवान जिनेन्द्र से प्रार्थना है।

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर

२३ जुलाई, १९९२

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के सहयोगी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत "वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला" का निर्माण सन् १९७४ में किया गया। तब से अब तक लाखों की संख्या मे ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है और निरन्तर हो रहा है। ग्रन्थमाला से पाठको को ग्रन्थ सस्ती कीमत मे प्राप्त हो सकें इस दृष्टि से ग्रन्थमाला मे एक संरक्षक योजना अगस्त सन् १९९० से प्रारम्भ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत निम्न महानुभाव अब तक संरक्षक बनकर अपना सहयोग प्रदान कर चुके हैं।

परम संरक्षक—

१ श्री मागीलाल बाबूलालजी पहाडे, हैदराबाद (आ० प्र०)

२ श्रीमती शकुन्तला देवी जैन ध० प० श्री लाला सुमतप्रकाश जैन गज्जू कटरा शाहदरा दिल्ली

संरक्षक—

१. श्रीमती आदर्श जैन ध० प० स्व० श्री अनन्तवीर जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमार जैन, हस्तिनापुर

२. श्रीमती राजूबाई मातेश्वरी श्री शिखरचन्द भाई देवेन्द्र कुमार लखमीचन्द जैन, सनावद (म० प्र०)

३ श्री चिमनलाल चुन्नीलाल दोशी, कीका स्ट्रीट, बम्बई

४ श्रीमती अरुणाबेन मन्नूभाई कोटड़िया, सी. पी. टैंक रोड, बम्बई

५ श्रीमती ताराबेन चन्दूलाल दोशी, फ्रेन्च ब्रिज, बम्बई

६. श्री रतिलाल चुन्नीलाल दोशी, बम्बई

७. श्री मथुरा बाई खुशालचन्द जैन की पुण्य स्मृति मे द्वारा—श्री रतनचन्द खुशालचन्द गाधी के सुपुत्र श्री धन्यकुमार, अशोक कुमार, शिरीष कुमार, धर्मराज गांधी, फलटन, (सातारा) महा०

८. श्री शातिलाल खुशालचन्द गांधी, फलटन (सातारा) महा०

९. श्री अनन्तलाल फूलचन्द फड़े, अकलूज (सोलापुर) महा०

१०. श्री हीरालाल माणिकलाल गाधी, अकलूज (सोलापुर) महा०

११ श्री जयकुमार खुशालचन्द गाधी, अकलूज (सोलापुर) महा०

१२. श्रीमती बदामीदेवी मातेश्वरी श्री पदमकुमार जैन गंगवाल, कानपुर (उ० प्र०)

१३ श्रीमती कमला देवी ध. प स्व० श्री महेन्द्र कुमार जैन, घटे वाले हलवाई, दरियागंज–नई दिल्ली
१४. श्रीमती उषादेवी ध. प. श्री श्रवणकुमार जैन, चावड़ी बाजार, दिल्ली
१५ श्री मुकेश कुमार जैन, कटरा शहनशाही, चादनी चौक, दिल्ली
१६ श्री हुकमीचन्द मागीलाल शाह, धान मडी, उदयपुर (राज०)
१७ श्री किरणचन्द जैन, कटरा धूलियान, चादनी चौक, दिल्ली
१८. श्रीमती बिमला देवी ध प श्री महावीर प्रसाद जैन इंजीनियर विवेक विहार, दिल्ली
१९ श्रीमती उषादेवी ध प. श्री अशोक कुमार जैन (खेकडा निवासी) पो० बहराइच (उ० प्र०)
२० श्रीमती लीलावती ध. प श्री हरीशचन्द जैन, शकरपुर, दिल्ली
२१ श्री दुलीचन्द जैन, बाहुबली एक्लेव, दिल्ली
२२. श्री रतिलाल केवलचन्द गाधी की पुण्य स्मृति मे, पापूलर परिवार सूरत, (गुजरात)
२३ श्रीमती भवरीदेवी ध प स्व० श्री सदासुख जी जैन पाड्या की स्मृति मे इन्दरचन्द सुमेरमल जैन पाड्या, शिलाग (मेघालय)
२४ श्रीमती सोहनी देवी ध० प० श्री तनसुखराय सेठी, फैसी बाजार, गौहाटी (आसाम)
२५ श्रीमती धापूबाई ध प. श्री कस्तूरचन्द जैन, रामगजमडी (राज)
२६ श्री मिट्ठनलाल चन्द्रभान जैन, कविनगर, गाजियाबाद (उ०प्र०)
२७ श्रीमती शकुन्तला देवी ध० प० श्री सुरेशचन्द जी जैन, बर्तन वाले, खुड मौहल्ला, देहरादून (उ० प्र०)
२८ श्री देवेन्द्र कुमार गुणवन्त कुमार टोग्या, बडनगर (म० प्र०)
२९ श्री दिगम्बर जैन समाज, तहसील फतेहपुर (बाराबकी) उ० प्र० अध्यक्ष—श्री सरोज कुमार जैन, मत्री श्री मुन्नालाल जैन, कोषाध्यक्ष श्री प्रेमप्रकाश जैन
३० श्री मन्नालाल रामलाल जैन डूगरवाला, भानपुरा (मन्दसौर)
३१ श्री इन्दरचन्द कैलाशचन्द जैन चौधरी, सनावद (म० प्र०)
३२ श्री अमोलकचन्द प्रकाशचन्द जैन सर्राफ, सनावद (म० प्र०)
३३ श्री विमल चन्द जैन, रखबचन्द दशरथ सा, सनावद (म० प्र०)
३४ श्री आजाद कुमार जैन शाह (सनावद वाले), श्योपुर कलां, (म० प्र०)
३५. श्रीमती सुषमा देवी ध० प० श्री राकेश कुमार जैन, मवाना

३६. श्रीमती कुसुम जैन ध० प० श्री रमेश चन्द जैन, किशनपुरी, बागपत रोड, मेरठ (उ० प्र०)

३७. श्रीमती किरन जैन ध० प० श्री पद्मप्रसाद जैन एडवोकेट मेरठ (उ. प्र.)

३८. श्री प्रभा चन्द गोधा, सिविल लाइन, जयपुर (राज०)

३९. श्रीमती विमला देवी ध प श्री जिनेन्द्र प्रसाद जैन ठेकेदार, टोडरमल रोड, नई दिल्ली-११०००१

४० श्रीमती क्षमा देवी जैन, मधुवन, दिल्ली-११००९२

४१. श्रीमती कमला देवी ध० प० श्री राजेन्द्र कुमार जैन टोडरका, थाणा (महा०)

४१ श्री अजितप्रसाद जैन बब्बेजी, श्रीराजकुमार श्रवणकुमार जैन, लखनऊ

४२ श्री अजीत प्रसाद जैन बब्बे जी, श्री राजकुमार श्रवण कुमार जैन ताल कटोरा रोड लखनऊ

४३. श्री गोपीचन्द विपिन कुमार, सुबोध कुमार जैन गंज बाजार सरधना (उ० प्र०)

४४. श्रीमती रतन सुन्दरी देवी ध० प० श्री वीर चन्द जैन, चिकन वाले लखनऊ (उ० प्र०)

४५. श्री अमितकुमार सुपुत्र डॉ० सुभाष चन्द जैन जोधपुर (राज०)

४६. श्रीमती आशा जैन ध० प० श्री प्रमोद कुमार जैन मुजफ्फरनगर वाले, रांची (बिहार)

बाल ब्र० रवीन्द्र कुमार जैन
सम्पादक

संस्थान का परिचय

जिस सस्थान द्वारा उपरोक्त ग्रन्थ का प्रकाशन हो रहा है उसकी संक्षिप्त जानकारी पाठको को देना मैं आवश्यक समझता हूं।

संस्थान का जन्म—

पू० गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से दि० जैन त्रिलोक शोध सस्थान का जन्म सन् १९७२ मे हुआ। इस सस्थान का रजिस्ट्रेशन दिल्ली सोसायटी एक्ट के अन्तर्गत सन् १९७२ में ही करा लिया गया।

सस्थान की कार्यकारिणी—

सस्थान के नियमानुसार प्रत्येक तीन वर्ष मे सस्थान की कार्यकारिणी का गठन किया जाता है। डा० कैलाशचन्द जैन (राजा टायज) निवासी दिल्ली इस सस्थान के सर्वप्रथम १९७२ मे अध्यक्ष मनोनीत किये गये थे। महामन्त्री श्रीवैद्य शान्तिप्रसाद जैन (दिल्ली), कोषाध्यक्ष ब्र० श्री मोतीचन्द जैन, मन्त्री श्री कैलाशचन्द जैन (करोलबाग) नई दिल्ली, एव उपमन्त्री ब्र० रवीन्द्रकुमार जैन आदि पदाधिकारी मनोनीत किये गये थे। उसके बाद सस्थान के अध्यक्ष पद पर श्री मदनलाल जी चादवाड रामगज मडी (राज०) ६ वर्ष तक रहे, पश्चात् ६ वर्ष तक श्री अमरचन्द जी पहाडिया (कलकत्ता) सस्थान के अध्यक्ष पद पर रहे। महामन्त्री स्व०श्री कैलाशचन्द जैन सरधना (उ० प्र०) तथा उनके बाद श्री गणेशीलाल जी रानीवाला (कोटा) राज० को महामन्त्री पद पर मनोनीत किया गया। वर्तमान १९९१) त्रिवर्षीय कार्यकारिणी मे लगभग ९१ सदस्य सारे भारतवर्ष के मनोनीत हैं, जिसमे साहू श्री अशोककुमार जैन दिल्ली, श्री अमरचन्दजी पहाडिया कलकत्ता, व श्री निर्मलकुमार जी सेठी लखनऊ, सरक्षक पद पर, ब्र० श्री रवीन्द्रकुमार जैन अध्यक्ष, श्री गणेशीलाल जी रानीवाला, कोटा कार्याध्यक्ष, श्री जिनेन्द्रप्रसाद जैन ठेकेदार, दिल्ली महामन्त्री, श्री अमरचन्द जैन, होम ब्रेड, मेरठ महामन्त्री तथा श्री कैलाशचन्द जैन (करोल बाग) नई दिल्ली कोषाध्यक्ष पद पर मनोनीत हैं। इसके अतिरिक्त अनेक गणमान्य महानुभाव संस्थान के उपाध्यक्ष एव अन्य पदो पर पदासीन हैं।

हिसाब एवं धन की व्यवस्था—

संस्थान का आय व्यय प्रतिवर्ष आडीटर से आडिट कराया जाता है एवं कार्यकारिणी की बैठक मे हिसाब पास किया जाता है। धन के सम्बन्ध में सस्थान की सम्पूर्ण आय रसीद अथवा कूपन से प्राप्त होती है तथा स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, हस्तिनापुर, न्यू बैंक ऑफ इण्डिया, हस्तिनापुर एव बैंक ऑफ बड़ौदा, दिल्ली में सस्थान के नाम से खाते हैं, जिसका सचालन सस्थान के अध्यक्ष एवं महामन्त्री या मन्त्री उपरोक्त तीन मे से किन्ही दो हस्ताक्षरों से होता है।

निर्माण—

सन् १९७४ से हस्तिनापुर में निर्माण कार्य प्रारम्भ किया गया। अब तक जम्बूद्वीप स्थल पर जम्बूद्वीप की रचना के निर्माण के साथ ही यात्रियो, शोधार्थियो एवं पर्यटको के लिये लगभग २०० कमरे व फ्लेट बन चुके हैं। तीन मूर्ति मदिर का निर्माण हुआ है, जिसमें तीन वेदियां हैं। मुख्य वेदी मे भगवान आदिनाथ, भरत व बाहुबली की मूर्ति विराजमान हैं तथा अगल-बगल की वेदी मे भगवान् पार्श्वनाथ, भगवान नेमिनाथ की प्रतिमा विराजमान हैं। भगवान महावीर स्वामी का नया कमल मदिर बन चुका है, जिसका कलशारोहण व मदिर वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव मई, १९९० में सम्पन्न हो चुकी है। इसके अलावा साधुओं के लिये रत्नत्रय निलय, कार्य सचालन के लिये कार्यालय एवं पानी की सुविधा के लिये टंकी भी बनवाई जा चुकी है। अन्य निर्माण कार्य भी योजनानुसार चल रहे हैं, जिनका वर्णन भविष्य में समाज के समक्ष प्रस्तुत होगा।

शैक्षणिक गतिविधियां—

निर्माण के अतिरिक्त सस्थान के द्वारा शिक्षा एव धर्म प्रचार का कार्य भी समय-समय पर किया जाता है। शिक्षण प्रशिक्षण शिविर, सेमिनार, अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार आदि के आयोजन भी कई बार किये जा चुके हैं।

सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका का प्रकाशन—

पू० गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित चारो अनुयोगों से युक्त एव धर्म प्रभावना के समाचारों से सहित सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका का प्रकाशन जुलाई १९७४ से इसी संस्थान के अन्तर्गत प्रारम्भ किया गया था, जिसका विमोचन प० पू० आचार्यश्री धर्मसागर

जी महाराज के करकमलो से ऐतिहासिक दिगम्बर जैन लाल मंदिर दिल्ली में १ जुलाई, १९७४ को किया गया था। भारतवर्ष के प्रत्येक प्रांत में लगभग सभी नगरो मे इस पत्रिका के सदस्य हैं तथा पिछले १७ वर्षों से इस मासिक पत्रिका का प्रकाशन प्रतिमाह निराबाध चल रहा है।

वीरज्ञानोदयग्रन्थमाला—

सस्थान के अन्तर्गत वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला की स्थापना सन् १९७४ मे की गई, जिसमे प्रथम पुष्प के रूप मे अष्टसहस्री के एक भाग का प्रकाशन १९७४ मे हुआ था। उसके बाद पू० ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित लगभग १०० से अधिक ग्रन्थो का प्रकाशन अब तक हो चुका है। बच्चो के लिये बाल विकास (चार भाग) एव इन्द्रध्वज मण्डल विधान, कल्पद्रुम मण्डल विधान, तीन लोक मण्डल विधान आदि अनेक प्रकाशन अत्यन्त लोकप्रिय रहे हैं।

आचार्य श्री वीरसागर सस्कृत विद्यापीठ—

सन् १९७९ मे पू० माताजी की प्रेरणा से जम्बूद्वीप स्थल पर आचार्यश्री वीरसागर सस्कृत विद्यापीठ का शुभारम्भ हुआ। अब तक इस विद्यापीठ से पढकर कई विद्वान समाज सेवा मे सलग्न हो चुके हैं।

जम्बूद्वीप पारमार्थिक औषधालय—

नवम्बर १९८५ से जम्बूद्वीप स्थल पर नि शुल्क आयुर्वेदिक औषधालय भी प्रारम्भ किया गया है, जिसमे राजवैद्य शीतल प्रसाद एण्ड सन्स दिल्ली के सौजन्य से आयुर्वेदिक औषधि प्राप्त होती हैं।

जम्बूद्वीप पुस्तकालय—

सस्थान के अन्तर्गत एक विशाल पुस्तकालय की योजना रखी गई है, जिसका नाम जम्बूद्वीप पुस्तकालय रखा गया है। इस पुस्तकालय मे विश्वविद्यालय के पुस्तकालयो के अनुसार ही पुस्तको को सचित किया जा रहा है।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठायें—

प्रथम पचकल्याणक प्रतिष्ठा सन् १९७५ मे भगवान् महावीर स्वामी की सवा नौ फुट ऊँची प्रतिमा की हुई थी। इसके लिये उस समय कारण-वश एक छोटे से कमरे का ही निर्माण हो सका था। इस कमरे को हटाकर वर्तमान मे भव्य कमल मन्दिर का निर्माण कार्य सम्पन्न हुआ है। इस

पचकल्याणक मे चारित्र चक्रवर्ती १०८ आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज के तृतीय पट्टाचार्य श्री धर्मसागर जी महाराज विशाल सघ सहित एव एलाचार्य श्री विद्यानन्द जी व गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी का सान्निध्य प्राप्त हुआ था। प्रतिष्ठाचार्य पं० श्री वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री, सोलापुर निवासी थे।

द्वितीय पचकल्याणक ८४ फुट ऊँचे सुमेरु पर्वत के १६ जिनबिम्बो का २९ अप्रैल से ३ मई १९७९ तक आयोजित किया गया। इस पचकल्याणक महोत्सव मे आचार्यश्री शिवसागर जी महाराज के शिष्य आचार्यकल्प श्री श्रेयाससागर जी महाराज का सान्निध्य एव गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी का सान्निध्य प्राप्त हुआ था। इस आयोजन के प्रतिष्ठाचार्य ब्र० सूरजमल जी, निवाई थे।

तृतीय पचकल्याणक प्रतिष्ठा २८ अप्रैल, १९८५ से २ मई १९८५ तक सम्पन्न हुआ। यह आयोजन जम्बूद्वीप के समस्त जिनबिम्बो के पच-कल्याणक का आयोजन था। यह समारोह राष्ट्रीय स्तर पर सम्पन्न हुआ। इसमे सान्निध्य प्राप्त हुआ आचार्यश्री धर्मसागर जी महाराज के सघस्थ साधुगणो का एव आ० श्री सुबाहुसागर जी तथा गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी के सघ का। प्रतिष्ठाचार्य ब्र० सूरजमल जी थे। समारोह मे भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त से धर्मानुरागी बन्धुओ ने भाग लिया। तथा उ० प्र० सरकार का भी प्रशासन की ओर से अच्छा सहयोग रहा। उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री नारायण दत्त तिवारी ने जम्बूद्वीप का उद्घाटन किया था। अन्य केन्द्रीय व उत्तर प्रदेश के मन्त्रीगण व सासद भी समारोह मे उपस्थित हुए थे। केन्द्रीय भारत सरकार के रक्षामन्त्री श्री पी० वी० नरसिंहराव भी आयोजन मे सम्मिलित हुए थे।

चतुर्थ पचकल्याणक ६ मार्च से ११ मार्च १९८७ तक सम्पन्न हुआ। इस महोत्सव में भगवान् पार्श्वनाथ व भगवान् नेमीनाथ की दो विशाल पद्मासन प्रतिमाओ का पचकल्याणक महोत्सव हुआ। इस कार्यक्रम मे आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज के विशाल सघ का सान्निध्य तथा गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी के सघ का सान्निध्य प्राप्त हुआ। इस प्रतिष्ठा के प्रतिष्ठाचार्य प० श्री शिखरचन्द जी भिण्ड थे। इसी शुभ अवसर पर सुमेरु पर्वत पर स्वर्ण कलशारोहण भी किया

गया। मुख्य अतिथि के रूप मे माधवराव सिंधिया, केन्द्रीय रेल मन्त्री तथा श्री जे० के० जैन पूर्व सांसद भी आये।

ज्ञानज्योति प्रवर्तन —

४ जून, १९८२ को लालकिला मैदान, दिल्ली से जम्बूद्वीप ज्ञान-ज्योति का प्रवर्तन तत्कालीन प्रधानमन्त्री स्व० श्रीमती इन्दिरा गांधी के कर-कमलो से हुआ था। निरन्तर १०४५ दिनों तक इस ज्ञानज्योति का प्रवर्तन सम्पूर्ण भारतवर्ष के नगर-नगर मे हुआ, जिससे अहिंसा, चरित्र-निर्माण एवं विश्व बन्धुत्व का व्यापक प्रचार-प्रसार किया गया। इस प्रवर्तन में अनेक प्रान्तो के राज्यपाल, मुख्यमन्त्री, सासद, कमिश्नर, डी० एम०, एस० डी० एम० आदि अनेक राजकीय अधिकारियो का सान्निध्य प्राप्त हुआ। दिगम्बर जैन आचार्यों, मुनियो, आर्यिकाओ और भट्टारको का भी स्थान-स्थान पर आशीर्वाद व सान्निध्य प्राप्त हुआ। प्रवर्तन मे तत्कालीन सासद श्री जे० के० जैन का सराहनीय सहयोग समय-समय पर प्राप्त होता रहा।

ज्ञानज्योति की हस्तिनापुर मे अखण्ड स्थापना—

१०४५ दिनो तक सारे भारतवर्ष मे प्रवर्तन के बाद ज्ञानज्योति की अखण्ड स्थापना २८ अप्रैल, १९८५ को जम्बूद्वीप मेन गेट के ठीक सामने स्थाई तौर पर हस्तिनापुर मे कर दी गई है। यह स्थापना श्री जे० के० जैन, सासद की अध्यक्षता मे तत्कालीन रक्षामन्त्री, भारत सरकार श्री पी० वी० नरसिहराव के कर-कमलो से हुई थी।

जम्बूद्वीप स्थल पर भव्य दीक्षायें—

पू० गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी के शिष्य एव शिष्याओ के दीक्षा समारोह भी जम्बूद्वीप स्थल पर समय-समय पर आयोजित किये गये हैं। सर्वप्रथम सघस्थ ब्र० श्री मोतीचन्द जैन, सनावद (म० प्र०) की क्षुल्लक दीक्षा का कार्यक्रम ८ मार्च, १९८७ को सम्पन्न हुआ। यह दीक्षा आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज के कर-कमलो से सम्पन्न हुई थी। दीक्षा के उपरान्त उनका नाम क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी रखा गया।

द्वितीय दीक्षा समारोह कु० माधुरी शास्त्री, जो कि पू० ज्ञानमती माताजी की शिष्या एव गृहस्थावस्था की लघु भगिनी हैं, उनकी दीक्षा

१३ अगस्त १९८९ को विशाल स्तर पर सम्पन्न हुई। गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी के कर-कमलो से दीक्षा प्राप्त करके आर्यिका श्री "चन्दनामती" नाम रखा गया।

तृतीय दीक्षा ब्र० श्यामाबाई की १५ अक्टूबर १९८९ को सम्पन्न हुई। पू० गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी के कर-कमलो से उन्हें क्षुल्लिका दीक्षा प्रदान करके क्षुल्लिका "श्रद्धामती" नाम रखा गया।

पंचम पंचकल्याणक एवं पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव—

३ मई से ७ मई १९९० तक जम्बूद्वीप स्थल पर अखिल भारतीय स्तर पर पचकल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव सम्पन्न हुआ। इस महोत्सव में इन्द्रध्वज के ४५८ जिनबिम्बो की पचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई।

इसी शुभ अवसर पर पचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव का आयोजन किया गया। यह आयोजन जम्बूद्वीप निर्माण के बाद प्रथम बार किया गया है, तथा यह निश्चय किया गया है कि प्रति पाच वर्ष मे जम्बूद्वीप महामहोत्सव का आयोजन विशाल स्तर पर आगामी वर्षों मे होता रहेगा। इस महोत्सव मे ४ मई १९९० को केन्द्रीय उद्योग मन्त्री भारत सरकार श्री अजीतसिह एव ६ मई १९९० को उत्तर प्रदेश के महामहिम राज्यपाल श्री बी० सत्यनारायण रेड्डी मुख्य अतिथि के रूप में सम्मिलित हुए। राज्यपाल महोदय के कर-कमलो से कमल मन्दिर का उद्‌घाटन कार्यक्रम भी सम्पन्न हुआ।

इस प्रकार दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध सस्थान में विभिन्न बहुमुखी योजनायें चल रही हैं, जिनमे भारतवर्ष के समस्त दिगम्बर जैन समाज का सहयोग प्राप्त होता रहता है।

हस्तिनापुर—२७ अप्रैल, १९९१

ब्र० रवीन्द्र कुमार जैन
अध्यक्ष
दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध सस्थान
हस्तिनापुर, मेरठ



आभार

प्रस्तुत पुस्तक कल्याण कल्पतरु स्तोत्र के प्रकाशन में प्रयुक्त कागज श्री अनिल कुमार जैन, चावडी बाजार-दिल्ली के सौजन्य से प्राप्त हुआ है। एतदर्थ संस्थान आपका हृदय से आभारी है।

आप पूज्य माताजी के सान्निध्य मे समय-समय पर आकर धार्मिक अनुष्ठानो मे भाग लेते रहते है एव संस्थान की योजनाओ मे उदारतापूर्वक सहयोग भी देते रहते हैं। आपके इस उदार सहयोग के प्रति धन्यवाद।

× × ×

सहारनपुर निवासी श्री राजेन्द्र कुमार जैन वकील एव उनकी ध० प० श्रीमती शोभा जैन नानोता वाले अत्यन्त धर्मनिष्ठ एव देवशास्त्र गुरु भक्त है।

प्रस्तुत पुस्तक कल्याणकल्पतरु स्तोत्र के प्रकाशन मे आपके सौजन्य से ५००१/-रु० आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ है। आपके इस सहयोग के लिये सस्थान आपका आभारी है।

आशा है भविष्य मे भी सस्थान की योजनाओ मे सहयोग देकर पुण्योपार्जन करते रहेगे।

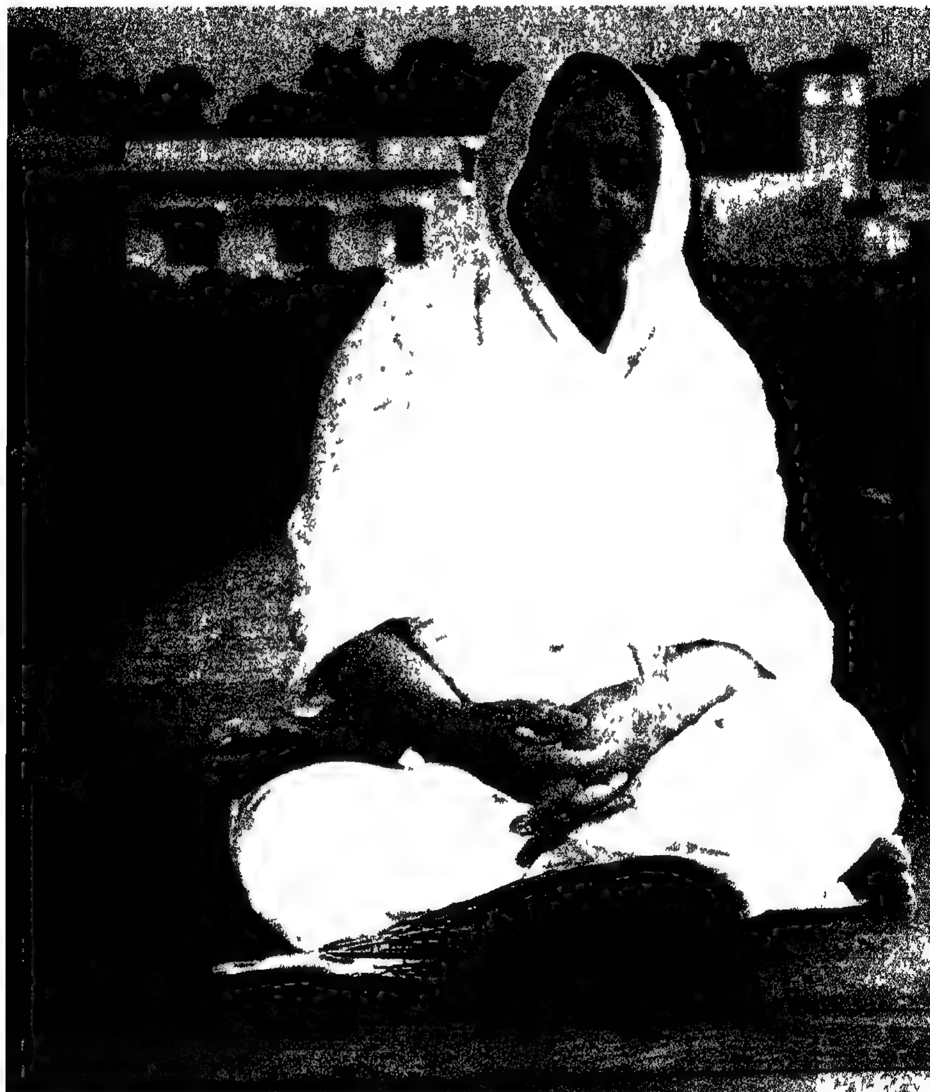
मंगल कामना सहित।

बाल ब्र० रवीन्द्र कुमार जैन

सम्पादक

सिद्धान्त वाचस्पति, न्यायप्रभाकर, गणिनी आर्यिकारत्न

श्री ज्ञानमती माताजी



जन्म	क्षुल्लिका दीक्षा	आर्यिका दीक्षा
टिकैतनगर (बाराबंकी उ.प्र.)	आ० श्री देशभूषण जी से	आ० श्री वीरसागर जी से
सन् १९३४ वि.स. १९९१	श्री महावीरजी मे	माधोराजपुरा (राज०) मे
असोज शु. १५ (शरद पू०)	वि.स. २००९ चैत्र कृ.१	स. २०१३ वैशाख कृ. २



जम्बूद्वीप हस्तिनापुर



कल्याण कल्पतरु स्तोत्र

(छंद लक्षण सहित)

रचयित्री—गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

इस "कल्याण कल्पतरु स्तोत्र" मे चौबीस तीर्थंकरो का स्तवन है। इसमे एकाक्षरी वर्णिक छन्द से लेकर छब्बीस अक्षरी छन्दो तक का प्रयोग किया गया है, पुनः आगे सत्ताईस अक्षरी और तीस अक्षरी दडक छन्दो को भी लिया है। छन्द लक्षण के साथ-साथ प्रत्येक स्तोत्र मे १ तीर्थंकर भगवान का नाम, २ उनके माता-पिता के नाम, ३ जन्म नगरी, ४ पाचो कल्याणको की तिथिया, ५ तीर्थंकर प्रभु के शरीर का वर्ण, ६. उनकी आयु, ७ शरीर की अवगाहना, ८ तीर्थंकर के चिन्ह और ९ वश का भी वर्णन है। अत मे समुदायरूप से चौबीसो तीर्थंकरो का स्तवन करते हुये उसमे भी उपसहाररूप से तीर्थंकरो के वर्ण, वश, मुक्ति के स्थान का वर्णन किया गया है तथा कौन-कौन से तीर्थंकर किस-किस आसन से मोक्ष को प्राप्त हुये है इसका भी स्पष्टीकरण है।

इस प्रकार इस स्तोत्र में संक्षेप से चौबीस तीर्थंकरो का जीवन चरित्र ही निबद्ध है इसमे पंचकल्याणक की तिथि आदि का सारा वर्णन उत्तरपुराण ग्रथ के आधार से है।

यह स्तोत्र "कल्याण"—आत्महित के इच्छुक भव्यो को "कल्पतरु"—कल्पवृक्ष के समान फल देने वाला है अतः इसका "कल्याण कल्पतरु" यह नाम सार्थक है। वास्तव में एक अकेली जिनेद्रदेव की भक्ति ही भक्त को ससार के समस्त अभ्युदयो को देकर अन्त मे मोक्ष सुख को भी देने में समर्थ है ऐसा जैनचार्यों ने कहा है।

कल्याण कल्पतरु स्तोत्रम्

(छद लक्षण सहित)

श्री वृषभजिन स्तोत्र

श्री छन्द[1]—(१ अक्षरी)

ॐ, मां । सोऽ-व्यात् ॥१॥

स्त्री छन्द[2]—(२ अक्षरी)

जैनी, वाणी । सिद्धि, दद्यात् ॥२॥

केसा छन्द[3]—(३ अक्षरी)

गणीन्द्र !, त्वदंघ्रि । नमामि, त्रिकाल ॥३॥

मृगी छन्द[4]—(३ अक्षरी)

श्री-जिनैः, सतत । मन्मनः, पूयताम् ॥४॥

नारी छन्द[5]—(३ अक्षरी)

श्री-देवो, नाभेयः । वंदेऽहं, त मूर्ध्ना ॥५॥

एकाक्षरी छन्द

१ गुः श्री.—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक-एक गुरु हो, उसे 'श्री छद'
ऽ ऽ कहते हैं।

द्विअक्षरी छन्द

२ गौ स्त्री—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में दो-दो गुरु हो, उसे 'स्त्री छन्द'
ऽ ऽ कहते हैं।

त्रिअक्षरी छन्द

३ यकेसा—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक-एक यगण हो, उसे 'केसा
। ऽ ऽ छन्द' कहते हैं।

४ रो मृगी—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक-एक रगण हो, उसे 'मृगी
ऽ । ऽ छन्द' कहते हैं।

५ मो नारी—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक-एक मगण हो, उसे
ऽ ऽ ऽ 'नारी छन्द' कहते हैं।

श्री वृषभजिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(ॐ) ओम् यह पंच परमेष्ठी वाचक मन्त्र है, (स.) वह (मा) मेरी (अव्यात्) रक्षा करे ॥१॥

अर्थ—अरहत, अशरीरी–सिद्ध, आचार्य उपाध्याय और मुनि–साधु इन पाच परमेष्ठी के प्रथम अक्षर से "ओम्" मन्त्र बना है, वह ओम्–ॐ मेरी रक्षा करे।

अन्वयार्थ– (जैनी वाणी) जिनेंद्र की वाणी (सिद्धि) सिद्धि को (दद्यात् देवे ॥२॥

अर्थ—जिनेद्रदेव की वाणीरूप शास्त्र मुझे सिद्धि प्रदान करे।

अन्वयार्थ—(गणीन्द्र !) हे गणधरदेव ! (त्वदंघ्रि) आपके चरण युगल को (त्रिकाल) मैं त्रिकाल मे (नमामि) नमस्कार करता हू ॥३॥

अर्थ—हे गणधर देव ! मैं आपके चरण कमलो को तीनो कालो में नमस्कार करता हूँ।

अन्वयार्थ—(श्री जिनै) श्री जिनेन्द्रदेव (सतत) हमेशा (मन्मन) मेरा मन (पूयताम्) पवित्र करे ॥४॥

अर्थ—श्री जिनेन्द्रदेव नित्य ही मेरा मन पवित्र करे।

अन्वयार्थ—(नाभेय.) नाभिराजा के पुत्र (श्री देव.) श्री देवाधिदेव हैं। (अह) मै (त मूर्ध्ना) उनको मस्तक झुकाकर (वदे) वदन करता हूँ ॥५॥

अर्थ—श्री नाभिराजा के पुत्र प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिनाथ को मैं सिर झुकाकर नमस्कार करता हूँ।

कन्या छन्द[1]—(४ अक्षरी)

पूः साकेता, पूता जाता। त्वत्सूतेः सा, सेंद्रैर्मान्या ॥६॥

व्रीडा छन्द[2]—(४ अक्षरी)

महासत्यां, मरुदेव्यां। सुतोऽभूस्त्व, जगत्पूज्यः ॥७॥

लासिनी छन्द[3]—(४ अक्षरी)

युगादिजो, जिनेश्वरः। ददातु मे, शिवश्रियं ॥८॥

सुमुखी छन्द[4]—(४ अक्षरी)

नाभिनृपः, तेऽस्ति पिता। आदिजिनः, पातु मम ॥९॥

सुमति छन्द[5]—(४ अक्षरी)

सुखकारी, भवहारी। पुरुदेवो, वस मेऽन्तः ॥१०॥

समृद्धि छन्द[6]—(४ अक्षरी)

ज्ञानसिंधुं, सर्वबंधुं। सर्व सिद्धयै, नौमि नित्य ॥११॥

चतुरक्षरी छन्द

१ म्गौ चेत्कन्या—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण और एक गुरु
ऽ ऽ ऽ ऽ हो, उसे 'कन्या छन्द' कहते हैं।

२ यगौ व्रीडा—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक यगण और एक गुरु हो,
। ऽ ऽ ऽ उसे 'व्रीडा छन्द' कहते हैं।

३. ज्गा लासिनी—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक जगण और एक गुरु
। ऽ । ऽ हो, उसे 'लासिनी छन्द' कहते हैं।

४ भ्गौ सुमुखी—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक भगण और एक गुरु
ऽ । । ऽ हो, उसे 'सुमुखी छन्द' कहते हैं।

५. सुमति. स्गौ—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक सगण और एक गुरु
। । ऽ ऽ हो, उसे 'सुमति छन्द' कहते हैं।

६ गौं समृद्धि—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक रगण और एक गुरु हो,
ऽ । ऽ ऽ उसे 'समृद्धि छन्द' कहते हैं।

अन्वयार्थ—(तत्वत्सूते) आपके जन्म से (सा साकेता पू) वह अयोध्यापुरी (सेन्द्रै मान्या) इन्द्रो से मान्य (पूता जाता) पवित्र हो गई ॥६॥

अर्थ—हे भगवन् ! आपके जन्म लेने से वह अयोध्या नगरी पवित्र हो गई और इन्द्रो तथा देवगणों से मान्य हो गई ।

अन्वयार्थ—(महासत्याम्) महासती (मरुदेव्यां) मरुदेवी के (सुत·) पुत्र (त्व जगत्पूज्य· अभू) आप जगत मे पूज्य हो गये ॥७॥

अर्थ—सती शिरोमणी माता मरुदेवी के सुपुत्र आप तीन लोक मे पूज्य है ।

अन्वयार्थ—(युगादिजः) युग की आदि मे जन्म लेने वाले (जिनेश्वर) जिनराज (मे) मुझे (शिवश्रिय) मोक्ष लक्ष्मी (ददातु) प्रदान करे ॥८॥

अर्थ—इस कर्म भूमि के प्रारम्भ मे जिन्होने जन्म लिया है ऐसे वे ऋषभ जिनेश्वर मुझे मुक्ति सम्पदा प्रदान करे ।

अन्वयार्थ—(नाभिनृप) नाभिराजा (ते पिता अस्ति) आपके पिता हैं । (आदिजिन) ऐसे आदिनाथ भगवान (मम पातु) मेरी रक्षा करे ॥९॥

अर्थ—अतिम कुलकर महाराजा नाभिराय जिनके पिता हैं ऐसे आदि ब्रह्मा भगवान ऋषभदेव मेरी रक्षा करे ।

अन्वयार्थ—(सुखकारी) सुख को करने वाले (भवहारी) भव को हरने वाले (पुरुदेवो) भगवान आदिनाथ (मे अन्त) मेरे अन्त.करण मे (वस) बसे ॥१०॥

अर्थ—जो सम्पूर्ण सुखो को देने वाले हैं और ससार के दुखो से छुडाने वाले हैं ऐसे वृषभदेव भगवान मेरे हृदय मे सदा विराजमान रहे ।

अन्वयार्थ—(ज्ञानसिंधु) ज्ञान के सागर (सर्वबधु) सर्वजन के बाधव को (नित्य) मैं नित्य ही (सर्वसिद्धयै) सर्वसिद्धि के लिये (नौमि) नमस्कार करता हूँ ॥११॥

अर्थ—जो केवलज्ञान के सागर हैं और सर्वजनो के अकारण बधु हैं उन्हे मैं सर्वदा अपनी मुक्ति प्राप्ति के लिये नमस्कार करता हूँ ।

पंक्ति छन्द[1]—(५ अक्षरी)

हाटकवर्णं, सद्गुण पूर्णम् ।
सिद्धिवधूस्त्वां, सा स्म वृणीते ।।१२।।

शशिवदना छन्द[2]—(६ अक्षरी)

मुनिनुतपादः, त्रिभुवननाथः ।
विगलितमोहः, निजसुखमाप्नोत् ।।१३।।

मदलेखा छन्द[3]—(७ अक्षरी)

देवेंद्रैः परिपूज्यो, योगीन्द्रैरनुचिन्त्यः ।
चक्रेशैरभिवंद्यो, वदे त वृषभेशम् ।।१४।।

अनुष्टुप् छन्द[4]—(८ अक्षरी)

आषाढेऽसितपक्षे स्याद्, द्वितीया तिथिरुत्तमा ।
सर्वार्थसिद्धितश्च्युत्वा, मातुर्गर्भे समागतः ।।१५।।

पचाक्षरी छन्द

१ म्नौ गिति पंक्ति—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक भगण और दो
ऽ । । ऽ ऽ गुरु हो, उसे 'पक्ति छन्द' कहते हैं।

षट् अक्षरी छन्द

२ शशिवदना न्यौ—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण और एक
। । । । ऽ ऽ यगण हो, उसे 'शशिवदना' छन्द कहते हैं।

सप्ताक्षरी छन्द

३ म्सौ गाः स्यान्मदलेखा—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक मगण, एक
ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ सगण और एक गुरु हो, उसे 'मदलेखा छन्द' कहते हैं।

अष्टाक्षरी छन्द

४. अनुष्टुप् छन्द—जिसके चारो चरण मे पाँचवा अक्षर लघु हो तथा छठा और आठवा दीर्घ हो एव प्रथम व तीसरे चरण का सातवा अक्षर दीर्घ हो, दूसरे और चौथे चरण का दूसरा वर्ण लघु हो उसे 'अनुष्टुप्' छद कहते हैं। इसका दूसरा नाम 'श्लोक' छन्द है।

अन्वयार्थ—(हाटकवर्णं) सुवर्ण सदृश वर्ण वाले (सद्‌गुणपूर्णं) श्रेष्ठ-गुणो से परिपूर्ण (त्वा) ऐसे आपको (सा सिद्धिवधू) उस सिद्धिकन्या ने (वृणीते स्म) वरण किया है ॥१२॥

अर्थ—भगवान आदिनाथ का वर्ण सुवर्ण सदृश था वे सर्वगुणो से परिपूर्ण थे अत. सिद्धि कन्या ने उनका वरण किया था, अर्थात् उन्होने मुक्तिपद को प्राप्त किया है।

अन्वयार्थ—(मुनिनुतपाद) मुनियो ने जिनके चरणो को नमस्कार किया है, (त्रिभुवननाथ) जो तीन भुवन के स्वामी हैं, (विगलितमोह:) और जिनका मोह नष्ट हो गया है ऐसे प्रभु ने (निजसुख) अपने आत्मसुख को (आप्नोत्) प्राप्त कर लिया है ॥१३॥

अर्थ—भगवान् आदिनाथ के चरणो को मुनियो ने भी नमस्कार किया है, वे तीनो लोको के स्वामी हैं और उन्होने मोह का सर्वथा नाश कर दिया है तभी उन्होने अपने आत्मसुख को प्राप्त किया है।

अन्वयार्थ—(देवेन्द्रै परिपूज्य) जो देवेन्द्रो से पूज्य हैं, (योगीन्द्रै: अनुचिन्त्य) योगीन्द्रो के चितवन के योग्य हैं (चक्रेशै अभिवद्य) चक्रवर्तियो से वद्य हैं (त वृषभेश) उन वृषभदेव को (वदे) मैं नमस्कार करता हूँ ॥१४॥

अर्थ—जो सौ इन्द्रो से पूज्य हैं, योगियो के अधिपति गणधर देव भी जिनका ध्यान करते हैं और चक्रवर्ती आदि महापुरुष भी जिनकी वदना करते हैं ऐसे उन ऋषभदेव तीर्थंकर की मैं वदना करता हूँ।

पचकल्याणक वर्णन—

अन्वयार्थ—(आषाढे असितपक्षे) आषाढ मास के कृष्णपक्ष मे (उत्तमा तिथि द्वितीया स्यात्) उत्तमतिथि द्वितीया थी (सर्वार्थसिद्धित च्युत्वा) आप सर्वार्थसिद्धि से च्युत होकर (मातु गर्भे समागत) माता के गर्भ मे आये ॥१५॥

अर्थ—भगवान् आदिनाथ आषाढ कृष्णा द्वितीया तिथि मे सर्वार्थ-सिद्धि विमान से च्युत होकर माता मरुदेवी के गर्भ मे आये।

नवम्यां चैत्रकृष्णे त्वं,
जन्म प्राप्य प्रजापतिः ।
ब्रह्मा स्रष्टा विधाताभूद्,
युगादौ तीर्थनायकः ॥१६॥

चैत्रकृष्णे नवम्यां हि,
स्वयम्भूर्दीक्षितोऽभवत् ।
फाल्गुनेऽसितपक्षेऽभू-
देकादश्यां सुकेवली ॥१७॥

माघकृष्णे चतुर्दश्यां,
कैलाशे गिरिमस्तके ।
निर्वृतिं परमां लब्ध्वा,
सिद्धिकांतापति-र्बभौ ॥१८॥

आयुश्चतुरशीत्यामा,
लक्षपूर्व-प्रमाणकः ।
इक्ष्वाकुवशभास्वान् यो,
पुरुदेवो पुनातु मे ॥१९॥

द्विसहस्रकरोत्तुंगो,
वृषभो वृषलाञ्छनः ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथोऽसौ,
स्याद्वादामृतशासनः ॥२०॥

अन्वयार्थ—(चैत्रकृष्णे नवम्या) चैत्रकृष्णा नवमी के दिन (त्वा) आप (जन्म प्राप्य) जन्म प्राप्तकर (युगादौ) इस युग की आदि मे (प्रजापतिः ब्रह्मा स्रष्टा विधाता तीर्थनायक अभूः) प्रजापति, ब्रह्मा, स्रष्टा, विधाता और तीर्थ के स्वामी हुये ॥१६॥

अर्थ—भगवान् आदिनाथ ने चैत्र कृष्णा नवमी के दिन जन्म लेकर इस युग की आदि मे सर्वजगत् के प्रजापति, ब्रह्मा धर्मसृष्टि के स्रष्टा, विधाता और तीर्थ के प्रवर्तक हुये हैं।

अन्वयार्थ—(चैत्रे कृष्णे नवम्या हि) चैत्र कृष्णा नवमी के दिन ही (स्वयंभू) स्वयभू भगवान (दीक्षितः अभवत्) दीक्षित हुये (फाल्गुनेऽसित-पक्षे) फागुन कृष्णा (एकादश्या) ग्यारस के दिन (सुकेवली अभूत्) केवल-ज्ञानी हो गये ॥१७॥

अर्थ—चैत्र वदी नवमी के दिन ही भगवान् आदिनाथ स्वय दीक्षा लेकर 'स्वयभू' हुये, पुन. फागुन वदी ग्यारस के दिन केवलज्ञान प्राप्तकर केवली हो गये।

अन्वयार्थ—(माघकृष्णे चतुर्दश्या) माघ वदी चतुर्दशी के दिन (कैलाशे गिरिमस्तके) कैलाश पर्वत के शिखर से (परमा निर्वृतिं) परम निर्वाण को (लब्ध्वा) प्राप्तकर (सिद्धिकातापति) सिद्धिकाता के स्वामी (बभौ) हुये ॥१८॥

अर्थ—माघ वदी चौदश के दिन कैलाश पर्वत से मोक्ष प्राप्त कर मुक्तिरूपी स्त्री के पति हो गये।

अन्वयार्थ—(आयु. चतुरशीत्या अमा) आयु-चौरासी के साथ (लक्ष-पूर्वप्रमाणक) लाख पूर्व प्रमाण वाले (य इक्ष्वाकुवशभास्वान्) जो इक्ष्वाकु-वश के सूर्य हैं (पुरुदेव मे पुनातु) वे पुरुदेव मुझे पवित्र करे ॥१९॥

अर्थ—जिनकी आयु चौरासी लाख वर्ष पूर्व है जो इक्ष्वाकु वश कुल के सूर्य हैं ऐसे आदिनाथ भगवान मुझे पवित्र करे।

अन्वयार्थ—(द्विसहस्रकरोत्तुग) दो हजार हाथ के जो ऊचे थे (वृष-लाछन) बैल का जिनका लाछन है (स्याद्वादामृतशासन) और स्याद्वाद-रूपी अमृत ही जिनका शासन है (असौ त्रैलोक्यनाथ वृषभ) ऐसे तीन-लोक के स्वामी वृषभदेव (जीयात्) जयशील होवे ॥२०॥

अर्थ—जिनके शरीर की ऊचाई पाच सौ धनुष-दो हजार हाथ (५००×४=२०००) प्रमाण* थी जिनका चिह्न बैल का था और जिनका शासन अमृतमय है ऐसे तीनलोक के नाथ भगवान् आदिनाथ सदा जयवत होवे।

*एक धनुष मे चार हाथ माने हैं।

शार्दूलविक्रीडित छन्द*—(१९ अक्षरी)

यः क्रोधादिरिपून् विजित्य सहसा, स्वात्मोत्थ-सौख्यामृतं ।
पायं पायमहर्निशं भवभयात्, स्वात्मानमुद्धृत्य वै ॥
त्रैलोक्याग्रपदे धृतश्च निवस-त्यद्याप्यनंतावधि ।
दिश्यात् श्रीवृषभो स एष भगवान्, मे ज्ञानमत्यं श्रियं ॥२१॥

श्री अजितजिन स्तोत्र

प्रीति छन्द[1]—(५ अक्षरी)

कर्मजित्योऽभूत्, सोऽजितः ख्यातः ।
तीर्थकृन्नाथः, तं नुवे भक्त्या ॥१॥

सती छन्द[2]—(५ अक्षरी)

पुरी विनीता, भुवि प्रसिद्धा ।
त्रिलोक-पूज्या, सुरेन्द्रवंद्या ॥२॥

मन्दा छन्द[3]—(५ अक्षरी)

माता विजया, धन्या भुवने ।
देवैर्महितं, पुत्रं जनिता ॥३॥

पंचाक्षरी छन्द

१ गौं गिति प्रीति —जिस छंद के प्रत्येक चरण मे एक रगण दो गुरु
ऽ । ऽ ऽ ऽ हो उसे 'प्रीति छंद' कहते हैं।

२. सती जगौ गः—जिस छंद के प्रत्येक चरण मे एक जगण और दो गुरु
। ऽ । ऽ ऽ हो उसे 'सती छंद' कहते हैं।

३ मन्दा तलगः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक तगण एक लघु और
ऽ ऽ । । ऽ एक गुरु हो उसे 'मंदा छंद' कहते हैं।

टिप्पण—*इसका लक्षण १९ अक्षरी छंद मे दिया जायेगा।

अन्वयार्थ—(य सहसा क्रोधादिरिपून्) जो सहसा क्रोध आदि शत्रुओं को (विजित्य) जीतकर (अहर्निश) हमेशा (स्वात्मोत्थसौख्यामृत) आत्मा से उत्पन्न सुखरूपी अमृत को (पाय पाय) पी-पी कर (भवभयात्) ससार के भय से (स्वात्मान) अपने आत्मा को (उद्धृत्य वै) निकाल कर (त्रैलोक्याग्रपदे) तीनलोक के अग्रभाग पर (धृत) पहुँचाया है। (च) और (अनतावधि) अनतकाल से (अद्यापि) आज तक भी (निवसति) वही पर निवास कर रहे हैं। (स एष श्रीवृषभ भगवान्) ऐसे ये श्री आदिनाथ भगवान् (मे ज्ञानमत्यै) मुझ ज्ञानमती के लिये (श्रिय) मुक्तिसपदा (दिश्यात्) प्रदान करे ।।२१।।

अर्थ– जिन्होने क्रोध आदि भाव कर्मों को शीघ्र ही जीतकर नित्य ही आत्मा से उत्पन्न सुखरूपी अमृत को बार-बार पीकर ससार के दु ख से अपने आपको निकाल तीनलोक के मस्तक पर विराजमान हो गये है वहाँ आज तक भी व अनतानत काल तक वैसे ही विराजमान रहेगे, ऐसे वे आदिनाथ भगवान् मुझ ज्ञानमती को मोक्षलक्ष्मी प्रदान करे।

श्री अजितजिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(य कर्मजित् अभूत) जो कर्मों को जीत चुके हैं, (स अजित ख्यात) वे 'अजित' इस नाम से प्रसिद्ध हुये हैं। (तीर्थकृत् नाथ.) वे तीर्थंकर स्वामी हैं (त भक्त्या नुवे) उन्हे मैं भक्ति से नमस्कार करता हूँ ।।१।।

अर्थ—जो कर्मों को जीतकर 'अजित' इस नाम से जगत् मे ख्यात हो चुके हैं, तीर्थ के कर्ता हैं और जगत् के स्वामी हैं उन्हे मैं भक्ति से नमन करता हूँ।

अन्वयार्थ—(विनीता पुरी) अयोध्यानगरी (भुवि प्रसिद्धा) पृथ्वी पर प्रसिद्ध है (त्रिलोकपूज्या) वह तीनलोक मे पूज्य है और (सुरेन्द्रवद्या) देवेन्द्रो से वद्य है ।।२।।

अर्थ—इस लोक मे अयोध्या नगरी सर्वजन प्रसिद्ध है वह तीन लोक मे पूज्य है और इन्द्रो द्वारा भी वद्य है।

भावार्थ—तीर्थंकरो के जन्म से यह नगरी तीनलोक के जनो से पूज्य है और सौ इन्द्रो से भी वद्य है।

अन्वयार्थ—(विजया माता) विजयादेवी माता (भुवने धन्या) इस जगत् मे धन्य है। (दैवै महित) उन्होने देवो द्वारा पूज्य (पुत्र जनिता) पुत्र को जन्म दिया है ।।३।।

अर्थ—माता विजयादेवी भगवान् अजितनाथ को जन्म देकर जगत् मे धन्य हो गई।

तनुमध्या छन्द[1]—(६ अक्षरी)

इक्ष्वाकुकुलस्य,
सूर्यो गजचिन्हः ।
स्वर्णाभतनुः सः,
मां रक्षतु पापात् ॥४॥

शशिवदना छन्द—(६ अक्षरी)

खयुगदिशैकः,
करतनुतुंगः ।
भुवि जितशत्रुः,
तव जनकः स्यात् ॥५॥

सावित्री छन्द[2]—(६ अक्षरी)

द्वासप्तत्या लक्ष-
पूर्वाण्यायुः प्राप्तः ।
ज्ञानानंदापूर्णः,
पायात् मे संसारात् ॥६॥

अनुष्टुप् छन्द—

ज्येष्ठेऽमावस्या शुभदा,
दशमी माघ-शुक्लके ।
तन्मासे नवमी पुण्यै-
कादशी पौषशुक्लके ॥७॥

पंचमी चैत्रशुक्ला च, पचकल्याणकैः क्रमात् ।
तिथयोऽजितनाथस्य, ता मे दद्युः परां गतिं ॥८॥

षट् अक्षरी छद

१. त्यौ स्तस्तनुमध्या—जिस छद मे एक तगण और एक यगण हो उसे
ऽ ऽ ।। ऽ ऽ 'तनुमध्या छद' कहते हैं।

२. मौ सावित्रीमाहुः—जिस छद मे दो मगण हो उसे 'सावित्री छद'
ऽ ऽ ऽऽ ऽऽ कहते हैं।

अन्वयार्थ—(इक्ष्वाकुकुलस्य) इक्ष्वाकु वश के (सूर्य) दिवाकर (गज-चिन्ह) हाथी के चिन्ह वाले (स्वर्णाभतनु) सुवर्ण की काति के शरीरधारी (स) वे अजितनाथ (मा पापात्) पाप से मेरी (रक्षतु) रक्षा करें ॥४॥

अर्थ—जो इक्ष्वाकुवश के भास्कर हैं, जिनका हाथी का चिन्ह है और जिनके शरीर का वर्ण सुवर्ण जैसा है ऐसे वे अजितनाथ भगवान पापो से मेरी रक्षा करें।

अन्वयार्थ—(खयुगदिगैक) दो शून्य, आठ और एक (करतनुतुग·) हाथ प्रमाण ऊँचा शरीर था, (भुवि) पृथ्वी पर शत्रुविजयी 'जितशत्रु' राजा (तव जनक स्यात्) आपके पिता हुये हैं ॥५॥

अर्थ—अठारह सौ हाथ ऊँचा आपका शरीर था अर्थात् ४५० धनुष ×४=१८०० हाथ ऊँचा शरीर था। इस पृथ्वी पर शत्रुओ के विजेता 'जितशत्रु' नाम के राजा आपके पिता हुये हैं।

अन्वयार्थ—(द्वासप्तत्या लक्षपूर्वाणि) बहत्तर लाख पूर्व की (आयु: प्राप्त) आयु को प्राप्त किया (ज्ञानानदापूर्ण) ज्ञान और सुख से परिपूर्ण आप (ससारात् मे पायात्) ससार से मेरी रक्षा करे ॥६॥

अर्थ—आपकी आयु बहत्तर लाख पूर्व वर्ष की थी, आप केवलज्ञान और अव्याबाध सुख-पूर्ण आनन्द से सहित है ऐसे हे अजितनाथ भगवन् ! आप ससार के दु खो से मेरी रक्षा करे।

अन्वयार्थ—(ज्येष्ठे अमावस्या शुभदा) ज्येष्ठ मास की अमावस्या शुभदायक तिथि है। (माघशुक्लके दशमी) माघ शुक्ला में दशमी शुभ है, (तन्मासे नवमी पुण्या) माघ सुदी नवमी पुण्यरूप है (पौषशुक्लके एकादशी) पौष सुदी मे एकादशी शुभ है (च चैत्रशुक्ला पचमी) और चैत्र शुक्ला पचमी शुभ है (अजितनाथस्य) अजितनाथ के (कल्याणकै क्रमात् तिथय) पाच कल्याणको द्वारा क्रम से जो ये तिथियाँ हैं (ता मे परा गति दद्यु) वे मुझे परमगति को देवे ॥७-८॥

अर्थ—भगवान् अजितनाथ ने जेठ वदी अमावस को गर्भ मे आकर वह तिथि शुभ कर दी। माघ सुदी दशमी के दिन जन्म लेने से वह तिथि पवित्र हो गई। माघ सुदी नवमी के दिन दीक्षा लेने से वह तिथि पुण्यदायिनी हो गई। पौष सुदी ग्यारस के दिन केवलज्ञान प्रगट होने से वह तिथि पूज्य हो गई और चैत्र सुदी पचमी के दिन मोक्ष प्राप्त करने से वह तिथि महान् हो गई। ये पाच कल्याणको की पाचो तिथिया मुझे श्रेष्ठ-मोक्ष गति प्रदान करे।

मालिनी छन्द*—

नुद नुद भवदुःखं, रोगशोकादिजातं ।
कुरु कुरु शिवसौख्यं, वीतबाध विशाल ।।

तनु तनु मम पूर्ण-ज्ञानसाम्राज्यलक्ष्मीं ।
भव भव सुखसिद्धयै, ज्ञानमत्यै जिनेश ! ।।६।।

श्री सभवजिन स्तोत्र

नदी छन्द[1]—(६ अक्षरी)

ज्योतीरूपा रविः, मोहध्वातापहृत् ।
भक्त्या भो सभव ! त्वत्पादाब्जं स्तुवे ।।१।।

मुकुल छन्द[2]—(६ अक्षरी)

त्रैलोक्यं सकल, सालोकं नियत ।
पश्यत्याप्तजिनः, जानीते युगपत् ।।२।।

मालिनी छन्द[3]—(६ अक्षरी)

सभवो धर्मेशः, सभवो लोकेशः ।
सभवस्तीर्थेशः, वंद्यते सत्प्रीत्या ।।३।।

षट् अक्षरी छन्द

१ म्रौ यस्याः सा नदी—जिस छन्द मे एक मगण और एक रगण हो उसे
ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ 'नदी छन्द' कहते हैं ।

२ म्सौ प्रोक्तं मुकुलम्—जिस छन्द मे एक मगण और एक सगण हो उसे
ऽ ऽ ऽ । । ऽ 'मुकुल छन्द' कहते है ।

३ मालिनोर्माभ्या स्यात्—जिस छन्द मे एक रगण और एक मगण हो उसे
ऽ । ऽ ऽ ऽ ऽ 'मालिनी छन्द' कहते हैं ।

---

*इसका लक्षण पन्द्रह अक्षरी छन्द मे आयेगा ।

अन्वयार्थ—(जिनेश !) हे जिनेश्वर ! (रोगशोकादिजात) रोग, शोक आदि से उत्पन्न हुये (मम) मेरे (भवदु ख नुद नुद) भवदु खो को दूर करो-दूर करो। (वीतबाध विशालं) बाधा रहित और विशाल (शिवसौख्य कुरु कुरु) मोक्षसुख को करो-करो। (पूर्णज्ञानसाम्राज्यलक्ष्मी तनु तनु) केवलज्ञानमयसाम्राज्य की लक्ष्मी को देवो देवो, (ज्ञानमत्यै सुखसिद्धयै भव-भव) और ज्ञानमती ज्ञान सहित सुख की सिद्धि के लिये होवो, होवो।

अर्थ हे जिनदेव ! आप मेरे रोग, शोक आदि से होने वाले ससार के दु खो को दूर कीजिये, अव्याबाध और विशाल ऐसे मोक्षसुख को दीजिये दीजिये, केवलज्ञान स्वरूप सर्वश्रेष्ठ साम्राज्य की सम्पदा को दीजिये दीजिये और ज्ञानमती रूप परम सौख्य की सिद्धि के लिये होइये-होइये।

श्री संभवजिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(भो सभव !) हे सभवनाथ ! (ज्योतीरूपा रवि) परमज्योतिरूप सूर्य हो (मोहध्वान्तापहृत्) मोहरूपी अधकार को दूर करने वाले हो, (भक्त्या) भक्ति से (त्वत्पादाब्ज •तुवे) आपके चरण कमलो की मैं स्तुति करता हूँ।

अर्थ—जो परमज्योति स्वरूप भास्कर हैं, मोहरूपी अधकार को नष्ट करने वाले हैं ऐसे आपके चरण कमलो की भक्ति से मैं वदना करता हूँ ॥१॥

अन्वयार्थ—(नियत सालोक) नियत अलोकाकाश सहित, (सकल त्रैलोक्य) सपूर्ण तीनो लोको को (आप्तजिन पश्यति) आप्तजिन देखते हैं और (युगपत् जानीते) एक साथ जानते हैं।

अर्थ—सभवजिन सच्चे देव हैं वे अलोकाकाश सहित सर्व तीनो लोको को एक साथ देखते हैं और जानते हैं ॥२॥

अन्वयार्थ—(सभव धर्मेश) सभवनाथ धर्म के ईश्वर हैं, (सभव लोकेश) सभवनाथ लोक के ईश्वर हैं, (सभव तीर्थेश) सभवनाथ तीर्थ के ईश्वर हैं (सत्प्रीत्या वद्यते) ऐसे सभवनाथ की मैं प्रीति से वदना करता हूँ।

अर्थ—जो सभवनाथ जिनेद्र धर्म के स्वामी हैं, तीन लोक के नाथ हैं और तीर्थ के ईश्वर हैं ऐसे सभवनाथ की मैं बहुत बडी प्रीति से वदना करता हूँ ॥३॥

रमणी छन्द[1]—(६ अक्षरी)

भगवन् ! तव भोः !, चरणाबुरुहं ।
शुभद शरणं, भुवि शं तनुतात् ॥४॥

वसुमती छन्द[2]—(६ अक्षरी)

वाक्ते शिवकरी, धर्मामृत - भरी ।
ताभिर्वसुमती, जाता सुखवती ॥५॥

सोमराजी छन्द[3]—(६ अक्षरी)

सुषेणास्तिमाता, महापुण्यशीला ।
हयो लाञ्छनस्ते, जनैर्ज्ञायतेऽत्र ॥६॥

यशस्ते त्रिलोकीं, गत ते नमोऽस्तु ।
वचस्ते त्रिलोकीं, पुनीते नमोऽस्तु ॥७॥

मदलेखा छन्द[4]—(७ अक्षरी)

शाम्यत्तापसमूहः, स्वर्णाभो जिनदेवः ।
श्रावस्त्यां दृढराजो, धन्योऽभूत् जनकस्ते ॥८॥

---

१ सयुग रमणी—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो सगण हो, उसे 'रमणी
।।ऽ।।ऽ छन्द' कहते हैं।

२ त्सौ चेद्वसुमती—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक तगण और एक
ऽ ऽ।।।ऽ सगण हो, उसे 'वसुमती छन्द' कहते हैं।

सप्ताक्षरी छन्द

३. म्सौ गः स्यान्मदलेखा—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण, एक
ऽ ऽ ऽ ।।ऽऽ सगण और एक गुरु हो, उसे 'मदलेखा छन्द' कहते हैं।

अन्वयार्थ—(भो: भगवन् !) हे भगवन् ! (तव चरणाम्बुरुह) आपके चरण कमल (शुभदं शरणं) शुभदायी हैं और शरणभूत हैं (भुवि शं तनुतात्) वे पृथिवी पर सुख को विस्तृत करे।

अर्थ—हे भगवन् ! आपके चरण कमल शुभ दाता हैं, सबके लिये शरण हैं वे इस भूतल पर सुख प्रदान करें ॥४॥

अन्वयार्थ—(ते वाक् शिवकरी) आपके वचन कल्याणकारी हैं (धर्मामृतभरी) धर्म रूपी अमृत से भरे हुये हैं (ताभि:) उन वचनो से (वसुमती सुखवती जाता) यह पृथिवी सुख देने वाली हो गई है।

अर्थ—हे भगवन् ! आपके वचन कल्याणकारी हैं, धर्म रूपो अमृत से भरे हुये हैं, उन वचनो से ही यह पृथिवी सुखदायी हो गयी है ॥५॥

अन्वयार्थ—(महापुण्यशीला) महापुण्यशालिनी (सुषेणा माता अस्ति) सुषेणा माता हैं (ते हय लाछन) आपका अश्व चिह्न (अत्र जनै ज्ञायते) यहाँ लोगो द्वारा जाना जाता है।

अर्थ—हे भगवन् ! आपकी माता महापुण्यशीला है सुषेणा उनका नाम है, आपका चिह्न घोडा यहाँ सर्वजनो के द्वारा जाना गया है ॥६॥

अन्वयार्थ—(ते यश त्रिलोकी गत) (आपका यश तीन लोक में व्याप्त है (ते नमोऽस्तु) आपको नमस्कार हो, (ते वच त्रिलोकी पुनीते) आपके वचन तीनो लोको को पवित्र करने वाले है (नमोऽस्तु) आपको नमस्कार हो।

अर्थ—हे भगवन् ! आपका यश तीनो जगत् मे फैला हुआ है इस लिये आपको नमस्कार हो। आपके वचन तीनो लोको को पवित्र करने वाले हैं इसलिये आपको नमस्कार हो ॥७॥

अन्वयार्थ—(स्वर्णाभ) स्वर्ण के समान शरीरधारी (जिनदेव) जिन-राज (शाम्यत्तापसमूह.) सम्पूर्ण ताप को शमन करने वाले हो (श्रावस्त्या) श्रावस्ती नगरी मे (ते जनक· दृढराज) आपके पिता दृढराज (धन्य अभूत्) धन्य हो गये।

अर्थ—हे सभवनाथ ! आपके शरीर की छवि स्वर्ण की है, आप सर्व ससार ताप को दूर करने वाले हैं। श्रावस्ती नगरी के राजा दृढराज आपके पिता इस भूतल पर धन्य हो गये हैं ॥८॥

अनुष्टुप् छन्द—

अष्टम्यां फाल्गुने शुक्ले, गर्भे प्रभुरवातरत् ।
कार्तिके पूर्णिमायां वै, प्रजातो भव्यभास्करः ॥९॥

स षष्टिलक्षपूर्वायुश्-चतुःशतधनुः-प्रभः ।
मार्गे पूर्णातिथौ देवः, दीक्षां दैगम्बरीं श्रितः ॥१०॥

चतुर्थ्यां कार्तिके कृष्णे, कैवल्यं प्राप्तवान् प्रभुः ।
चैत्रे षष्ठ्यां सिते पक्षे, मोक्षलक्ष्मीं समागमत् ॥११॥

दोधक छन्द*—

संभवनाथ ! भवेद् भुवि शान्त्यै ।
संभवनाथ ! भवेद्भव - हान्यै ॥

संभवनाथ ! भवेत् सुखवृद्ध्यै ।
संभवनाथ ! भवेन्मम सिद्ध्यै ॥१२॥

श्री अभिनंदन जिन स्तोत्र

कुमारललिता छन्द[1]—(७ अक्षरी)

निजात्मसुखसारो, विशोकभयमानः ।
विरागपरमात्मा, नमोऽस्तु मम तुभ्यं ॥१॥

सप्ताक्षरी छन्द

१. कुमारललिता ज्सौग्—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक जगण और
। ऽ । । । ऽ ऽ एक सगण तथा एक गुरु हो, उसे 'कुमारललिता छन्द' कहते हैं।

*इसका लक्षण ग्यारह अक्षरी मे आयेगा ।

अन्वयार्थ—(फाल्गुने शुक्ले अष्ठम्यां) फागुन सुदी अष्टमी तिथि मे (प्रभु गर्भे अवातरत्) प्रभु गर्भ में आये, (कार्तिकेपूर्णिमायां वै) कार्तिक शुक्ला पूर्णमासी को (भव्यभास्कर प्रजात) भव्य के लिये सूर्य आप जन्में (सषष्टिलक्षपूर्वायु) आपकी साठ लाख पूर्व वर्ष की आयु थी (चतु शत-धनु प्रम) चारसो धनुष प्रमाण ऊंचा शरीर था, (मार्गे पूर्णा तिथौ देव.) मगसिर शुक्ला पूर्णिमा के दिन (दीक्षा दैगबरी श्रित) जैनेश्वरी दीक्षा ली है (कार्तिके कृष्णे चतुर्थ्यां) कार्तिक कृष्णा चतुर्थी के दिन (प्रभु कैवल्य प्राप्तवान्) प्रभु ने केवलज्ञान प्राप्त किया और (चैत्रे सिते पक्षे) चैत्र सुदी (षष्ठ्या) छठ के दिन (मोक्षलक्ष्मी समागमत्) मोक्षलक्ष्मी को प्राप्त कर लिया।

अर्थ—हे सभवनाथ! फागुन सुदी अष्टमी के दिन आप गर्भ में आये, कार्तिक सुदी पूनो के दिन भव्यरूपी कमलो के लिये सूर्य आपका जन्म हुआ। आपकी आयु साठ लाख पूर्व की थी, आपके शरीर की ऊंचाई ४००×४=१६०० सौलह सौ हाथ थी। मगसिर सुदी पूनो के दिन आपने दैगम्बरी दीक्षा ली थी और कार्तिक कृष्णा चौथ को आपको केवलज्ञान प्रगट हुआ। अनतर चैत्र सुदी छठ के दिन आपने मोक्ष सुखको प्राप्त किया है ॥९-१०-११॥

अन्वयार्थ—(सभवनाथ!) हे सभवनाथ! (भुवि शान्त्यै भवेत्) इस भूतल पर शाति के लिये होवो, (सभवनाथ!) हे सभवनाथ! (भवहान्यै भवेत्) मेरी ससार की हानि के लिये होवो, (सभवनाथ!) हे सभवनाथ! (सुखवृद्ध्यै भवेत् सुख की वृद्धि के लिये होवो, (सभवनाथ!) हे सभवनाथ! (मम सिद्ध्यै भवेत्) आप मेरी सिद्धि के लिये होवो।

अर्थ—हे सभवनाथ! आप इस भूतल पर शाति कीजिये, हे सभवनाथ! आप मेरे भव के नाश करनेवाले होइये, हे सभवनाथ भगवन्! आप मेरे सुख की वृद्धि के लिये होइये, हे सभवनाथ प्रभो! आप मेरी सिद्धि के लिये होइये ॥१२॥

अभिनंदन जिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(निजात्मसुखसार) अपने आत्मा के सुख का सार-सर्वस्व प्राप्त कर लिया है, (विशोकभयमान) शोक, भय और मान से रहित हो, (विरागपरमात्मा) वीतराग परमात्मा हो (तुभ्य मम नमोऽस्तु) आपको मेरा नमस्कार हो।

अर्थ—आपने अपनी आत्मा के सर्वसुख को प्राप्त कर लिया है, शोक भय और मान से सर्वथा रहित हो और वीतरागी परमदेव हो आपको मेरा नमस्कार हो ॥१॥

मधुमती छन्द[१]—(७ अक्षरी)

सकलबोधरविः, सकलसौख्यखनिः ।
सकललोकमणिः, जयतु तीर्थंकरः ॥२॥

हंसमाला छन्द[२]—(७ अक्षरी)

स पिता देहभाजां, स गुरुर्भक्तिभाजां ।
स जिनः पातु दुःखात्, तनुतान् मे स्वलक्ष्मीं ॥३॥

चूडामणि छन्द[३]—(७ अक्षरी)

चूडामणिर्भुवने, चिंतामणिः सुखदः ।
कल्पद्रुमस्त्वमपि, स्थेयात् सदा हृदि मे ॥४॥

प्रमाणिका छन्द[४]—(८ अक्षरी)

जगत्त्रयं पवित्रित, जगत्त्रयैकवित् गुरुः ।
मयाभिनंदनः प्रभुः, प्रणम्यते मुदा सदा ॥५॥

अनुष्टुप् छन्द—

स्वयंवरः पितासीत्ते, सिद्धार्था जननी शुभा ।
विनीता पूः प्रपूज्या स्याद्, इक्ष्वाकुवंशचंद्रमाः ॥६॥

---

१ **मधुमती ननगाः**—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण, एक भगण ।।।ऽ।।ऽ और एक गुरु हो, उसे 'मधुमती छन्द' कहते हैं ।

२ **सरगा हंसमाला**—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक सगण, एक रगण ।।ऽऽ।ऽऽ और एक गुरु हो, उसे 'हंसमाला छन्द' कहते हैं ।

३ **चूडामणिस्तभगात्**—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक तगण, एक ऽऽ।ऽ।।ऽ भगण और एक गुरु हो, उसे 'चूडामणि छन्द' कहते हैं ।

अष्टाक्षरी छन्द

४ **प्रमाणिका जरौ लगौ**—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक जगण, एक ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ रगण, एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'प्रमाणिका छन्द' कहते हैं ।

अन्वयार्थ—(सकलबोधरवि) केवलज्ञानसूर्य, (सकलसौख्यखनि) सर्वसुखो की खान, (सकललोकमणि.) तीन लोक के चूड़ामणि (तीर्थंकर जयतु) तीर्थंकर देव जयशील होवे।

अर्थ—जो सम्पूर्णज्ञानरूपी भास्कर हैं, सर्वसुखो की खान है और सर्व-जगत् के चूडामणि हैं ऐसे तीर्थंकर अभिनंदन भगवान् जयशील होवे ।।२।।

अन्वयार्थ—(देहभाजा स पिता) संसारी प्राणियो के वे पिता हैं, (स भक्तिभाजा गुरु) सर्व भक्तजनो के वे गुरु हैं, (स जिन दुखात् पातु) वे जिन भगवान् दु खो से रक्षा करे (मे स्वलक्ष्मी तनुतात्) और मुझे अपनी लक्ष्मी प्रदान करे।

अर्थ—वे सम्पूर्ण प्राणिमात्र के पिता हैं, वे ही सर्व भक्तजनो के गुरु हैं, ऐसे वे जिन भगवान दु खो से रक्षा करे और मुझे अपने गुणो की सम्पत्ति प्रदान करे ।।३।।

अन्वयार्थ—(त्व भुवने चूडामणि) आप लोक मे चूडामणि हैं, (सुखद चिंतामणि) सुखदायी चिंतामणि हैं (कल्पद्रुम अपि) और कल्पतरु भी हैं, (मे हृदि सदा स्थेयात्) आप मेरे हृदय मे सदा स्थिर रहे।

अर्थ—आप इस जगत् मे सर्वश्रेष्ठ चूडामणिरत्न हैं सुखदायी चिंतित वस्तु के लिये चिंतामणिरत्न हैं, और इच्छित फल देने मे कल्पवृक्ष भी हैं, हे प्रभो ! आप मेरे चित्त मे सदा विराजमान रहो ।।४।।

अन्वयार्थ—(जगत्त्रय पवित्रित) आपने तीनो जगत् को पवित्र कर दिया है, (जगत्त्रयैकवित् गुरु) आप तीनो जगत् के ज्ञाता गुरु हैं (अभिनदन प्रभु) ऐसे अभिनदन स्वामी को (मया) मेरे द्वारा (मुदा सदा) हर्षपूर्वक सदा (प्रणम्यते) प्रणाम किया जाता है।

अर्थ—जिन्होने तीनो जगत् को पवित्र कर दिया है, जो तीन लोक को जानने वाले एकगुरु हैं ऐसे अभिनदन भगवान् को मैं सदा हर्ष से नमस्कार कर रहा हूँ ।।५।।

अन्वयार्थ—(स्वयवर ते पिता आसीत्) स्वयवर महाराज आपके पिता थे, (शुभा सिद्धार्था जननी) पवित्र सिद्धार्था महारानी आपकी माता थी, (विनीता पू प्रपूज्या स्यात्) अयोध्या नगरी आपके जन्म से पूज्य हो गई (इक्ष्वाकुवशचद्रमा) आप इक्ष्वाकुवश के चद्र हैं।

अर्थ—हे भगवन् ! आपके पिता का नाम स्वयवर था आपकी माता सिद्धार्था देवी मगलस्वरूप थी। आपके जन्म से अयोध्या नगरी पूज्य हो गई और आप इक्ष्वाकुवश को प्रसन्न करने वाले चद्रमा हैं ।।६।।

पञ्चाशल्लक्षपूर्वायुः,
सार्द्धत्रिशतचापमः ।
पञ्चकल्याणपूजाप्तः,
कपिचिह्नसमन्वितः ॥७॥

वैशाखस्य सिते षष्ठ्यां,
मातुर्गर्भे समागतः ।
द्वादश्यां माघशुक्लायां,
जन्माभिषेकमाप्तवान् ॥८॥

तत्तिथावेव दीक्षां च,
गृहीत्वा स तपोधनः ।
पौषे शुक्लचतुर्दश्यां,
केवलिश्रियमाप्तवान् ॥९॥

गर्भतिथौ विमुक्तोऽभूत्,
परमानंद-सौख्यभृत् ।
निरंजनो निराकारः,
त्रिलोकैकशिखामणिः ॥१०॥

उपजाति छन्द*—(११ अक्षरी)

सुखाभिनंदादभिनंदनो यः,
जगत्त्रयं नंदितवान् वचोभिः ।
पोतायमानो भवसिंधु-गानां,
पुनातु मेऽन्तः स हि देहिनां च ॥११॥

---

*इसका लक्षण ग्यारह अक्षरी में आयेगा ।

अन्वयार्थ—(पचाशल्लक्षपूर्वायु) पचास लाख वर्ष पूर्व की आयु थी, (सार्द्धत्रिशतचापम) साढे तीन सौ धनुष की ऊचाई थी, (पचकल्याण-पूजाप्त) पाच कल्याणक की पूजा को प्राप्त किया है। (कपिचिन्हसमन्वित) आप मर्कट चिन्ह से सहित हैं।

अर्थ—हे भगवन् ! आपकी पचास लाख पूर्व वर्ष की आयु थी, तीन सौ पचास धनुष प्रमाण शरीर की ऊचाई थी। अर्थात् ३५०×४=१४०० हाथ थी। आपने पाच कल्याणकस्वरूप महान् पूजा को प्राप्त किया है। आपका चिन्ह बदर है ।।७।।

अन्वयार्थ-(वैशाखस्य सिते षष्ठ्या) वैशाख शुक्ला छठ के दिन (मातु गर्भे समागत.) माता के गर्भ मे आये। (माघशुक्लायां द्वादश्यां) माघसुदी बारस के दिन (जन्माभिषेक आप्तवान्) जन्माभिषेक को प्राप्त हुये। (तत्तिथौ एव दीक्षा च) और उसी माघसुदी बारस के दिन दीक्षा को (गृहीत्वा) ग्रहण कर (स तपोधन) आप तपोधन बने। (पौषे शुक्लचतुर्दश्या) पौष सुदी चौदस के दिन (कैवल्यश्रिय आप्तवान्) केवलज्ञान लक्ष्मी को प्राप्त किया (गर्भतिथौ) वैशाखसुदी छठ को ही (परमानदसौख्यभृत्) परमानद सुख के भर्ता (निरजन निराकार त्रिलोकैकशिखामणि) निरजन, निराकार और तीनलोक के एक शिखामणि (विमुक्त अभूत्) मोक्ष को प्राप्त हो गये।

अर्थ—वैशाख शुक्ला छठ के दिन आप गर्भ मे आये। माघसुदी बारस के दिन आपने सुमेरु पर अभिषेक प्राप्त किया। पुन माघसुदी बारस को ही दीक्षा लेकर तपोधन-महामुनि बने। अनतर पौषसुदी चौदस के दिन केवलज्ञान प्राप्तकर समवसरण मे विराजमान हुये। इसके बाद वैशाख सुदी छठ को आपने मोक्ष प्राप्त किया तब निरजन, निराकार परमानद सुख के स्वामी होकर तीनलोक के अग्रभाग पर पहुँच कर जगत् के चूडामणि बन गये ।।८-६-१०।।

अन्वयार्थ—(सुखाभिनदात्) सुख के बढाने से (य अभिनदन) जो अभिनदन जिन हुये। (वचोभि जगत्त्रय नदितवान्) पुन अपने वचनो से तीनो जगत् को आनदित किया। (भवसिंधुगामा) संसार समुद्र मे डुबे हुये जीवो के लिये (पोतायमान) जहाज के समान थे (स) वे भगवान् (मे अन्त) मेरे अन्त करण को (च हि देहिना) और सर्वप्राणियों को (पुनातु) पवित्र करो।

अर्थ सुख की अभिवृद्धि करने से जो "अभिनदननाथ" कहलाये उनके वचनो के द्वारा समस्त तीनो लोक आनदित हुआ था। वे ससार समुद्र मे डूबे हुए भव्यजीवो के लिये जहाज के समान अवलबन हैं। ऐसे वे अभिनदन भगवान् मेरे अन्त करण को पवित्र करें और सर्वजीवो को पावन करे ।।११।।

श्री सुमतिजिन स्तोत्र

चित्रपदा छन्द[1]—(८ अक्षरी)

यस्य मुखाम्बुजजाता, दिव्यसुधारसवाणी।
चित्तकुमत्यपहर्त्री, तं सुमतिं प्रणमामि ॥१॥

विद्युन्माला छन्द[2]—(८ अक्षरी)

ज्ञानज्योतिः पूर्णानंदं, शुद्धात्मानं ध्यायं ध्यायं।
कर्मारातीन् शीघ्रं हत्वा, सिद्धिं लेभे तं वंदेऽहं ॥२॥

माणवक छन्द[3]—(८ अक्षरी)

वीतरुजं वीतशुचं, साम्यरसैः पूर्णभृतं।
स्वात्मगतां, सौख्यसुधां, यः स्वदते तं नमत ॥३॥

हंसरुतं छन्द[4]—(८ अक्षरी)

आत्मा सिद्धसदृशोऽयं, चिच्चैतन्यविभवोऽयं।
ज्ञानज्योतिरतुलोऽयं, युष्माभिर्निगदितोऽयं ॥४॥

अष्टाक्षरी छंद

१ **भौग्गिति चित्रपदा गः**—जिस छन्द में दो भगण और दो गुरु हो, वह
ऽ । । ऽ।।ऽ ऽ 'चित्रपदा छन्द' है।

२ **मो मो गो गो विद्युन्माला**—जिस छन्द में दो मगण और दो गुरु हो वह
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ 'विद्युन्माली छन्द' है।

३ **माणवकं भात्तलगाः**—जिस छन्द में एक भगण, एक तगण और एक
ऽ ।।ऽ ऽ ।।ऽ लघु तथा एक गुरु होता है, वह 'माणवक' छन्द' है।

४ **म्नौ गौ हंसरुतमेतत्**—जिस छन्द में एक मगण, एक नगण और दो गुरु
ऽ ऽ ऽ।।।ऽऽ होते हैं, वह 'हंसरुत छन्द' है।

सुमतिजिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(यस्य मुखाम्बुजजाता) जिनके मुख कमल से निकली हुई (दिव्यसुधारसवाणी) दिव्यअमृत रूप ध्वनि (चित्तकुमति अपहर्त्री) मन की कुमति को दूर करने वाली है, (त सुमति प्रणमामि) उन सुमतिनाथ को मैं नमस्कार करता हूं।

अर्थ—जिनके मुख कमल से प्रगट हुई दिव्यध्वनि रूप अमृतवाणी सबके चित्त की कुमति को दूर करने वाली है, उन श्री सुमतिनाथ भगवान् को मैं प्रणाम करता हूं ॥१॥

अन्वयार्थ—(ज्ञानज्योति) परम केवलज्ञान ज्योतिस्वरूप, (पूर्णानद) पूर्ण आनदमय (शुद्धात्मान) शुद्ध आत्मा को (ध्याय ध्याय) ध्या-ध्या करके (कर्मारातीन् शीघ्र हत्वा) कर्म शत्रुओ को शीघ्र ही नष्ट कर (सिद्धि लेभे) मुक्ति को प्राप्त किया है, (त अह वदे) उनको मैं वदन करता हूं।

अर्थ—जिन्होने केवलज्ञान प्रकाश और पूर्ण सौख्य स्वरूप अपनी शुद्ध आत्मा का पुन ध्यान करके सपूर्ण कर्मरूपी शत्रुओ को शीघ्र ही मार भगाया और सिद्धपद को प्राप्त कर लिया है उन श्री सुमतिनाथ भगवान् की मैं वदना करता हूं ॥२॥

अन्वयार्थ—(य) जो (वीतरुज वीतशुच) रोग से रहित शोक से रहित (साम्यरसै पूर्णभृत) साम्यरस से परिपूर्ण भरी हुई (स्वात्मगता) आत्मा मे ही उत्पन्न (सौख्यसुधा) सुखसुधा को (स्वदते) पीते हैं, (त नमतु) उन्हे नमस्कार करो।

अर्थ—जो रोग शोक से रहित, समतारस से परिपूर्ण भरे हुये, अपनी आत्मा मे ही होने वाले सुखामृत को पीते हैं उन सुमतिनाथ को आप नमस्कार करो ॥३॥

अन्वयार्थ—(अय आत्मा सिद्धसदृश) यह आत्मा सिद्ध के समान है, (अय चिच्चैतन्यविभव·) यह चित् चैतन्य के वैभव वाला है (अय ज्ञान-ज्योति.) यह ज्ञानज्योति स्वरूप है (अय अतुल) और यह तुलना रहित है, (युष्माभि निगदित) ऐसा आपने कहा है।

अर्थ—हे भगवन् ! आपने ऐसा कहा है कि प्रत्येक जीव की आत्मा सिद्ध समान है, चिच्चैतन्य के वैभवस्वरूप, ज्ञानज्योतिर्मय और अतुलनीय है ॥४॥

नागरक छन्द[1]—(८ अक्षरी)

पापहरं शिवंकर, पादसरोरुहं तव ।
स्वात्मतमोहरं विधो ! त्वां निदधे मनोगृहे ॥५॥

नाराचिका छन्द[2]—(८ अक्षरी)

भव्याब्जिनी विभाकरः, योगीन्द्रचित्तगोचरः ।
पापारिपुंजदाहकः,स्थेयात् सदा स मे हृदि ॥६॥

समानिका छन्द[3]—(८ अक्षरी)

साधुवृन्दवंदितोऽसि, सेन्द्रवृन्दसेवितोऽसि ।
कर्मपुंजखंडितोऽसि, त्वत्समीपमागतोऽस्मि ॥७॥

प्रमाणिका छन्द[4]—(८ अक्षरी)

अनंतसौख्यसागरः, समस्तविश्वभास्करः ।
गुणाम्बुराशिचंद्रमाः, पुनीहि मे मनः सदा ॥८॥

वितान छन्द[5]—(८ अक्षरी)

सुरासुरैः पूज्यपादः, मुनीश्वरैर्वेष्टितस्त्वं ।
गुणोत्करैः प्रातिहार्यैः,विभूषितो ज्ञानसूर्यः ॥९॥

---

१ **नागरक भरौ लगा**—जिस छन्द मे एक भगण, एक रगण और एक
S I I S I S I S — लघु तथा एक गुरु होता है, वह 'नागरक छन्द' है ।

२ **नाराचिका तरौ लगौ**—जिस छन्द मे एक तगण, एक रगण तथा एक
S S I S I S I S — लघु और एक गुरु होता है, वह 'नाराचिका छन्द' है ।

३ **जौं समानिका गलौच**—जिस छन्द मे एक रगण, एक जगण और एक
S I S I S I S I — गुरु तथा एक लघु हो, उसे 'समानिका छन्द' कहते हैं ।

४ **प्रमाणिका जरौ लगौ**—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक जगण, एक
I S I S I S I S — रगण और एक लघु तथा एक गुरु हो, उसे 'प्रमाणिका छन्द' कहते हैं ।

५ **वितानमाभ्या यदन्यत्**—समानिका और प्रमाणिका से जिसका लक्षण
I S I S S I S S — भिन्न है वह 'वितान छन्द' है । अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक जगण, एक तगण और दो गुरु होते हैं, वह 'वितान छन्द' है ।

अन्वयार्थ—(तव पादसरोरुह) आपके चरण कमल (पापहरं शिवंकर) पाप के हरने वाले कल्याण के करने वाले (स्वात्मतमोहर) और अपनी आत्मा के अधकार को हरने वाले हैं (विधो ! हे चद्रस्वरूप जिनेंद्र ! (त्वा मनोगृहे निदधे) आपको मैं अपने मनरूपी घर में धारण करता हूँ ।

अर्थ—हे जिनेंद्र ! आपके चरण कमल पाप के हर्ता, हित के कर्ता और आत्मा के अधकार के हर्ता हैं । हे चन्द्रस्वरूप सुमतिनाथ ! मैं आपके चरणों को अपने चित्तरूपी महल मे विराजमान करता हूँ ।।५।।

अन्वयार्थ—(भव्याब्जिनीविभाकर) जो भव्य कमलिनी के लिये सूर्य हैं (योगीन्द्रचित्तगोचर) योगियो के हृदय के गोचर हैं (पापारिपुज-दाहक) पापरूपी शत्रु समूह को दहन करने वाले हैं (स) वे (मे हृदि) मेरे हृदय मे (स्थेयात्) स्थित रहे ।

अर्थ—जो भव्यरूपी कमलनियो के लिये सूर्य हैं, योगियो के ही मन के अगोचर हैं, और पाप रूपी शत्रु के समूह को नष्ट करने वाले हैं ऐसे वे सुमतिनाथ भगवान मेरे हृदय मे स्थित रहे ।।६।।

अन्वयार्थ—(साधुवृदवदित असि) आप साधु समूह से वदित हो, (सेन्द्रवृन्दसेवित असि) इन्द्र समूह सहित देवो से सेवित हो, (कर्मपुजखडित असि) और कर्मपुज के खण्ड खण्ड करने वाले हो, अत (त्वत्समीप आगत अस्मि) मैं आपके समीप मे आया हूँ ।

अर्थ—हे भगवन् ! आप साधुगणो से वद्य हो, सर्व इन्द्र सहित सुर असुरो से सेवित हो और कर्मों के टुकडे-टुकडे करने वाले हो, इसलिये मैं आपके चरण सान्निध्य मे आया हूँ ।।७।।

अन्वयार्थ—(अनतसौख्यसागर) अनत सुखो के समुद्र हो, (समस्त-विश्वभास्कर) समस्त लोक के सूर्य हो, (गुणाम्बुराशिचद्रमा) गुणसमुद्र के वर्धन मे चद्रमा हो (मे मन सदा पुनीहि) मेरा मन सदा पवित्र करो ।

अर्थ—हे भगवन् ! आप अनत सुख के सागर हो, अखिल विश्व के सूर्य हो और गुणरूपी समुद्र के बढाने मे चद्रमा हो, इसलिये मेरा मन सदा पवित्र करो ।।८।।

अन्वयार्थ—(सुरासुरै पूज्यपाद) सुर असुरो से आपके चरण पूजित हैं, (त्व मुनीश्वरै वेष्टित) आप मुनीश्वरो से वेष्टित हो (गुणोत्करै. प्रातिहार्यै विभूषित ज्ञानसूर्य) गुणो के समूह ऐसे प्रातिहार्यों से विभूषित आप ज्ञान सूर्य हो ।

अर्थ—हे भगवन् ! आपके चरणयुगल सुर असुरो से पूजित हैं, आप मुनीश्वरो से घिरे हो एव गुणो के समूह से तथा आठ महा-प्रातिहार्यों से विभूषित अद्भुत ज्ञानसूर्य हो ।।९।।

आर्यागीति छन्द[1]—(मात्राछंद)

साकेतायां जनको,
मेघरथो मंगला सुमंगलजननी ।
वृषभान्वयेऽवतीर्णो,
गर्भे हि श्रावणसित-द्वितीयायां ॥१०॥

चैत्रसितैकादश्यां,
जन्मोत्सवमाप देववृन्दैर्मेरौ ।
वैशाखशुक्लनवमी-
तिथौ प्रभुर्दीक्षितो महर्द्ध्या युक्तः ॥११॥

चैत्रसितैकादश्यां,
केवलसाम्राज्यमाप भुवने व्यहरत् ।
तस्यामेव तिथौ स्यात्,
सम्मेदगिरेः सुमतिजिनो मुक्तिपतिः ॥१२॥

अनुष्टुप् छंद—

शून्यषड्वार्धिपूर्वायुः,
शरास-त्रिशतोच्छ्रितः ।
संतप्ततपनीयाभः,
कोकचिन्हः पुनातु मे ॥१३॥

---

१ आर्या पूर्वार्धं यदि, गुरुणैकेनाधिकेन निधने युक्त ।
इतरत्तद्वन्निखिल, भवति यदीयमर्धमार्यागीतिः ॥

अर्थ—जिस छद के प्रथम और तृतीय चरण मे बारह-बारह मात्राये हो और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण मे बीस-बीस मात्राये हो उसे 'आर्यागीति' छद कहते हैं, यह मात्रिक छद है ।

अन्वयार्थ—(साकेतायां मेघरथ. जनक.) अयोध्या नगरी मे मेघरथ राजा आपके पिता थे, (सुमगलजननी मगला) श्रेष्ठ मगल को उत्पन्न करने वाली 'मंगलादेवी' आपकी माता थी। (च) और (श्रावणसितद्वितीयाया) श्रावणसुदी दूज के दिन (वृषभान्वये गर्भे अवतीर्ण) वृषभदेव के कुल मे आप गर्भ मे आये।

अर्थ—अयोध्या नगरी के राजा मेघरथ आपके पिता एव सर्वमगल को करने वाली मगलादेवी आपकी माता थीं। आप श्रावणसुदी दूज के दिन इक्ष्वाकुवश मे माता के गर्भ मे आये ॥१०॥

अन्वयार्थ—(चैत्रसितैकादश्या) चैत्र सुदी ग्यारस के दिन (मेरौ देववृन्दै· जन्मोत्सव आप) मेरु पर्वत पर देवगणो से आप जन्मोत्सव को प्राप्त हुये। वैशाख शुक्लनवमीतिथौ) वैशाख शुक्ला नवमी तिथि मे (प्रभु) आपने (महर्द्ध्या युक्त दीक्षित) महान् ऋद्धि से सहित ही दीक्षा ले ली। (चैत्रसितैकादश्या) चैत्रसुदी ग्यारस के दिन (केवलसाम्राज्य) केवलज्ञान साम्राज्य को (आप) प्राप्त किया (भुवने व्यहरत्) पुन· पृथिवी तल पर विहार किया। (तस्या एव तिथौ) इसी ही तिथि के दिन (सम्मेदगिरेः) सम्मेद शिखर से (सुमतिजिन) सुमतिनाथ भगवान् (मुक्तिपति स्यात्) मुक्तिवधू के स्वामी हो गये।

अर्थ—चैत्रसुदी ग्यारस के दिन भगवान् सुमतिनाथ का जन्म हुआ तब देव समूह ने सुमेरु पर्वत पर ले जाकर जन्मोत्सव मनाया। वैशाख सुदी नवमी तिथि मे आपने महान् वैभव के साथ दीक्षा ली। पुन. चैत्रसुदी ग्यारस के दिन केवलज्ञान सम्पदा को प्राप्त कर भुवन मे विहार किया। अनन्तर आप सुमतिनाथ ने चैत्रसुदी ग्यारस को ही सम्मेदशिखर से मोक्ष प्राप्त किया है ॥११-१२॥

अन्वयार्थ—(शून्यषड्वार्धिपूर्वायु) (४००००००) चालीस लाख पूर्व वर्ष की आपकी आयु है, (शरासत्रिशतोच्छ्रित) तीन सौ धनुष की आपकी ऊँचाई है, (सतप्ततपनीयाभ) तपाये हुये स्वर्ण जैसी आपकी काति है, (कोकचिन्ह) और चकवा पक्षी आपका चिन्ह है ऐसे भगवान् आप (मे पुनातु) मुझे पावन करो।

अर्थ—चालीस लाख पूर्व वर्ष की जिनकी आयु थी, तीन सौ धनुष (३००×४=१२०० (बारह सौ हाथ) ऊँचा जिनका शरीर था और तपाये हुये स्वर्ण जैसी जिनकी काति थी तथा चकवा पक्षी जिनका चिन्ह था ऐसे श्री सुमतिनाथ भगवान् मुझे पवित्र करें ॥१३॥

श्री पद्मप्रभ स्तोत्र

हलमुखी छंद[1]—(९ अक्षरी)

विश्ववन्द्यचरणयुगं, कल्पितार्थसुखदफल ।
देव ! ते हि मुनिपनुत, नौम्यहं त्रिकरणयुतैः ॥१॥

भुजगशिशुभृता छन्द[2]—(९ अक्षरी)

त्रिभुवनशिखरेऽतिष्ठत्, त्रिभुवनजनतां पायात् ।
त्रिभुवनगमन रुध्यात्, मम शिवफलदो भूयात् ॥२॥

शुद्धविराट् छन्द[3]—(१० अक्षरी)

त्वत्पादौ परिपूज्य भक्तितः, संसाराम्बुनिधिं प्रतीर्यते ।
पद्मालिंगितमूर्तिरेव भोः ! श्रीपद्मप्रभ ! मे श्रियं क्रियात् ॥३॥

पणव छन्द[4]—(१० अक्षरी)

ज्ञानानंदविभवधारी त्वं, जानीषे मम हृदयं सर्वं ।
शक्तिर्मे नहि गदितुं दुःखं, ज्ञात्वैवं भवभयतो माव्यात् ॥४॥

नवअक्षरीछंद

१ रान्नसाविह हलमुखी—जिस श्लोक मे एक रगण, एक नगण और एक
S I S I I I I I S सगण होता है, उसे 'हलमुखी छन्द' कहते हैं ।

२ भुजगशिशुभृता नौ मः—जिस श्लोक मे दो नगण और एक मगण हो,
I I I I I I S S S वह 'भुजगशिशुभृता छन्द' है ।

दशअक्षरीछंद

३ म्सौ ज्गौ शुद्धविराडिदं मतम्—जिस श्लोक मे एक मगण, एक सगण,
S S S I I S I S I S एक जगण और एक गुरु होता है, वह
'शुद्धविराड्' छन्द है ।

४ म्नौ य्गौ चेतिपणवनामेदम्—जिस श्लोक मे एक मगण, एक नगण, एक
S S S I I I I S S S यगण और एक गुरु होता है, उसे 'पणव
छन्द' कहते हैं ।

श्री पद्मप्रभ स्तोत्र

अन्वयार्थ—(देव!) हे भगवन्! (मुनिपनुतं) मुनिपति से नमस्कृत (कल्पितार्थसुखदफल) कल्पनामात्र से सुखदायी फल वाले (ते हि विश्ववद्य-चरणयुग) आपके विश्ववद्य चरणयुगल को (अहम्त्रिकरणयुतं नौमि) मैं मन वचनकाय से नमस्कार करता हूँ।

अर्थ—हे देव! आपके चरण युगल अखिल लोक से वद्य हैं, कल्पनामात्र से सुखदायी फल को देने वाले हैं और मुनिपति द्वारा भी नमस्कृत हैं। ऐसे चरणयुगल को मैं मन वचन काय पूर्वक नमन करता हूँ।।१।।

अन्वयार्थ—(त्रिभुवनशिखरे अतिष्ठत्) आप तीनलोक के शिखर पर विराजमान हैं, (त्रिभुवनजनता पायात्) तीनलोक की जनता की रक्षा कीजिये, (त्रिभुवनगमनरु ध्यात्) तीन लोक के गमनागमन को रोकिये और (मम शिवफलद भूयात् मुझे शिवफल को देने वाले होइये।

अर्थ—हे भगवान्! आप तीन लोक शिखर पर स्थित हैं। आप तीनलोक के जनों की रक्षा कीजिये। मेरे तीन लोक मे गमन को रोकिये और मुझे मोक्षफल को दीजिये।।२।।

अन्वयार्थ—(भक्तित) भक्ति से (त्वत्पादौ परिपूज्य) आपके चरणो की पूजा करके (ससाराम्बुनिधि) संसाररूपी समुद्र (प्रतीर्यते) तिरा जाता है। (पद्मालिंगितमूर्ति एव) आप लक्ष्मी से आलिंगित शरीर हैं (भो पद्मप्रभ!) हे पद्मप्रभो भगवन्! (मे श्रिय क्रियात्) मुझे मुक्ति प्रदान करो।

अर्थ—हे प्रभो! भक्ति से आपके चरणो की आराधना करके यह ससाररूपी सागर पार किया जाता है। आपका शरीर अतरग-बहिरग लक्ष्मी से सहित है। हे पद्मप्रभ भगवन्! आप मुझे शिवसुख प्रदान करे।।३।।

अन्वयार्थ—(ज्ञानानदविभवधारी त्व, आप ज्ञान और सुख वैभव के धारी हो (मम सर्व हृदय जानीषे) मेरे सर्व मन को जानते हो (मे दु ख गदितु शक्ति न हि) मुझको अपना दु ख कहने की शक्ति नही है (एव ज्ञात्वा भवभयत) ऐसा जानकर ससार के भय से (मा अव्यात्) मेरी रक्षा करो।

अर्थ हे प्रभो! आप केवलज्ञान और परम आनन्दरूप वैभव से सहित हो अत आप मेरे चित्त के सर्व दु खो को जानते हैं। मुझमे अपने दु खो को कहने की शक्ति नहीं है, हे देव! ऐसा जानकर या ऐसी मेरी प्रार्थना सुनकर अब आप ससार के भय से मेरी रक्षा करो।।४।।

आर्यागीति छन्द (मात्रा छन्द)—

कौशाम्ब्यां धरणपिता,
प्रसूः सुसीमा जिनस्य वंशेक्ष्वाकुः ।
पद्मालयचरणयुगं,
पद्मप्रभजिनवरो मनो मे पुष्यात् ॥५॥

अनुष्टुप् छन्द—

माघे पक्षेऽसिते षष्ठ्यां,
गर्भमंगलमाप सः ।
ऊर्जकृष्णे त्रयोदश्यां,
त्रिलोकीसूर्य उद्ययौ ॥६॥

तत्तिथावेव दीक्षां च,
गृहीत्वा व्यहरत् भुवि ।
पौर्णमास्यां शुभे चैत्रे,
बभूव केवली जिनः ॥७॥

चतुर्थ्यां फाल्गुने कृष्णे,
मुक्तिलक्ष्म्या सहावसत् ।
कृतकृत्यो जिनो भूयात्,
'ज्ञानमत्यै' श्रियै मम ॥८॥

षट्शून्यवन्हिपूर्वायुः,
खपंचद्विधनुः-प्रमः ।
कल्हारसमदेहाभः,
पातु मां पद्मलाञ्छनः ॥९॥

अन्वयार्थ—(कौशाम्ब्यां) कौशाम्बी नगरी में (धरणपिता) धरण-महाराजा आपके पिता थे, (सुसीमा प्रसू:) सुसीमा देवी आपकी माता थी। (जिनस्य वंशेक्ष्वाकु:) आप जिनराज का वश इक्ष्वाकु है। (पद्मालय-चरणयुग) आपके चरणयुगल लक्ष्मी के निवासस्थान हैं। (पद्मप्रभजिनवर.) ऐसे पद्मप्रभ जिनराज (मे मन पुष्यात्) मेरा मन पुष्ट करे।

अर्थ—कौशाम्बी नगरी के धरणराजा आपके पिता थे आपकी माता का नाम सुसीमा था आपका वश इक्ष्वाकु था, आपके चरणयुगल लक्ष्मी के रहने के लिए घर हैं। ऐसे पद्मप्रभ भगवान् मेरे मनोरथ सफल करे ॥५॥

अन्वयार्थ—(माघे पक्षे असिते षष्ठ्या) माघ वदी छठ के दिन (स. गर्भमगल आप) उन्होने गर्भमगल प्राप्त किया। (ऊर्जकृष्णे त्रयोदश्यां) कार्तिक वदी तेरस के दिन (त्रिलोकीसूर्य) त्रिभुवन के सूर्य आप (उदयी) उदित हुए। (तत्तिथौ एव च दीक्षा गृहीत्वा) और उसी तिथि मे आपने दीक्षा लेकर (भुवि व्यहरत्) पृथ्वी पर विहार किया। (चैत्रे शुभे पौर्णमास्या) चैत्र सुदी पूर्णिमा के दिन (जिन केवली बभूव) आप केवली भगवान् हो गये।

अर्थ—हे भगवन्! आपने माघ वदी छठ के दिन गर्भ मगल प्राप्त किया। कार्तिक वदी तेरस के दिन तीनलोक के सूर्य आपने जन्म ग्रहण किया। आगे कार्तिक वदी तेरस के दिन ही दीक्षा लेकर पृथ्वी तल पर विहार करते रहे। अनतर चैत्र सुदी पूर्णमासी के दिन केवलज्ञानी हुए हैं ॥६–७॥

अन्वयार्थ—(फाल्गुने कृष्णे चतुर्थ्यां) फागुनवदी चौथ को (मुक्ति-लक्ष्म्या सह अवसत्) मुक्ति लक्ष्मी के साथ निवास किया। (कृतकृत्य जिन. मम ज्ञानमत्यै श्रियै भूयात्) ऐसे कृतकृत्य जिनभगवान् मेरी ज्ञानमती-ज्ञानसहित लक्ष्मी-मुक्ति के लिए होवें।

अर्थ—हे भगवन्! फागुन वदी चौथ को मोक्ष प्राप्त किया। ऐसे कृतकृत्य जिन भगवान् मुझे ज्ञानमती लक्ष्मी प्रदान करे ॥८॥

अन्वयार्थ—(षट्शून्यवन्हिपूर्वायु) छह शून्य और तीन अक अर्थात् तीस लाख पूर्व की आपकी आयु है, (खपचद्विधनु प्रम) एक शून्य, पाँच और दो अर्थात् दो सौ पचास धनुष की ऊँचाई थी, (कल्हारसमदेहाभ) लालकमलसमान शरीर की काति थी (पद्मलाछन मा पातु) कमल ही जिनका चिन्ह था वे प्रभु मेरी रक्षा करें।

अर्थ—भगवान् पद्मप्रभ की आयु तीस लाख वर्ष पूर्व की थी, उनके शरीर की ऊचाई दो सौ पचास धनुष (२५० × ४ = १००० हाथ) थी उनके शरीर की काति लालकमल के समान सुन्दर थी और लाल-कमल ही जिनका चिन्ह था ऐसे पद्मप्रभ भगवान् मेरी रक्षा करे ॥९॥

श्री सुपार्श्वजिन स्तोत्र

मयूरसारिणी छन्द[1]—(१० अक्षरी)

संगवर्जनाद् प्रभो ! न रागः,
शस्त्रशून्यतश्च ते न रोषः ।
विश्वसत्यवागतो न दोषः,
त्वां नमामि भोः सुपार्श्व देव ! ॥१॥

रुक्मवती छंद[2]—(१० अक्षरी)

सौम्यतनुस्त्वं देहविमुक्तः,
मुक्तिरमासक्तोऽपि विरागः ।
कर्मजये निष्कारुणिकः स्यात्,
नाथ ! तथापि त्व करुणाब्धिः ॥२॥

मत्ता छंद[3]—(१० अक्षरी)

वाराणस्यां धनदविमुक्तैः,
रत्नैः पृथ्वी भवति सुतृप्ता ।
पृथ्वीषेणा विकसितचेताः,
धन्या मान्या नरसुरवृन्दैः ॥३॥

दशअक्षरी छंद

१ ओं रजौ रगौ मयूरसारिणी स्यात्—जिस छन्द मे एक रगण, एक जगण, एक
S IS ISIS IS S रगण और एक गुरु हो, उसे 'मयूरसारिणी' छन्द कहते हैं ।

२ भ्मौ सगयुक्तौ रुक्मवतीयम्—जिस छन्द मे एक भगण, एक मगण, एक
S IISS S IISS सगण और एक गुरु होता है, वह 'रुक्मवती' छन्द है । इसका दूसरा नाम 'चम्पकमाला' भी है ।

३. ज्ञेया मत्ता मभसगयुक्ता—जिस छन्द में एक मगण, एक भगण, एक सगण
SS SS IIIISS और एक गुरु होता है, वह 'मत्ता' छन्द है ।

श्रीसुपार्श्व जिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(प्रभो !) हे प्रभो ! (संगवर्जनात् न रागः) परिग्रह का त्याग कर देने से आप को राग नहीं है, (च शस्त्रशून्यत.) और शस्त्र के पास मे न रहने से (ते न रोष) आपको द्वेष नही है, (दिव्यसत्यवाक्) दिव्य सत्य वचन हैं (अत न दोषः) इसलिये आपमे कोई दोष नही है (भो सुपार्श्वदेव !) हे सुपार्श्वनाथ ! (त्वा नमामि) आपको मैं नमस्कार करता हूँ।

अर्थ—हे प्रभो ! आपने परिग्रह का त्याग कर दिया है अत. किसी मे आपको राग नही है। आपके पास शस्त्र नही है अत: आपको किसी से द्वेष या किसी पर क्रोध नही है। आपकी वाणी दिव्य सत्य है, अत. आपमे कोई दोष नही है। हे सुपार्श्वनाथ भगवन् ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ ॥१॥

अन्वयार्थ—(त्व सौम्यतनु) आप सौम्यतनु हैं (देहविमुक्त) फिर भी शरीर से रहित हैं (मुक्तिरमासक्त अपि) आप मुक्तिस्त्री में आसक्त हैं फिर भी (विराग) राग रहित हैं। (कर्मजये निष्कारुणिक स्यात्) आप कर्मों को जीतने मे करुणा रहित कठोर हैं (नाथ !) हे नाथ ! (तथापि त्व करुणाब्धि) फिर भी आप करुणा के सागर हैं।

अर्थ—हे भगवन् ! आपकी मूर्ति परम सौम्य छवि है फिर भी आप शरीर से रहित अशरीरी हैं। आप मुक्तिरमणी में अनुरक्त हैं फिर भी विरागी हैं। आप कर्मों को नष्ट करने मे निर्दय हैं फिर भी परम दया के सागर हैं ॥२॥

अन्वयार्थ—(वाराणस्यां धनदविमुक्तै रत्नै) बनारस नगरी में कुबेर के द्वारा छोडे गये रत्नो से (पृथिवी सुतृप्ता भवति) पृथिवी अतिशय तृप्त हो गई। (नरसुरवृ वै. मान्या) मनुष्यो और देवो द्वारा मान्य (विकसितचेता.) विकसित है हृदय जिसका ऐसी (पृथिवीषेणा) पृथिवीषेणा माता (धन्या) धन्य हो गईं।

अर्थ—हे भगवन् ! बनारस नगरी मे कुबेर ने रत्नो की वर्षा की थी जिससे वहाँ की पृथिवी अतिशय तृप्त हो गई थी। आपकी माता पृथिवीषेणा हर्षितचित्त थीं, मनुष्यों और देवो से भी मान्य वे इस पृथिवी पर धन्य हो गईं ॥३॥

मनोरमा छंद[1]—(१० अक्षरी)

मुनिमनोम्बुजं मुदीकुरु,
जिनप ! मे मनः स्थिरीकुरु ।
शरणमागतं च पाहि मां,
शिवपदं त्वर प्रयच्छ मे ।।४।।

मेघवितान छन्द[2]—(१० अक्षरी)

वरभाद्रपदे सितषष्ठी,
जिनगर्भतिथिः सुखदात्री ।
जननीजनकौ किल हृष्टौ,
भुवि सर्वजना अपि तुष्टाः ।।५।।

मणिराग छन्द[3]—(१० अक्षरी)

ज्येष्ठमासि सिते जिनसूर्यः,
द्वादशी - मपुनावभिषेकैः ।
तत्तिथौ जिनरूपधरोऽभूत्,
ध्यानशस्त्रधरोऽपि दयालुः ।।६।।

चंपकमाला छन्द[4]—(१० अक्षरी)

फाल्गुन-कृष्णे यस्य हि षष्ठ्यां,
केवलभास्वान् प्रादुरभूत् सः ।
फाल्गुनसप्तम्या - मसितेऽसौ,
ज्ञानसुधाभृत् मुक्तिपतिः स्यात् ।।७।।

---

१ नरजगैर्भवेन्मनोरमा—जिस छन्द में एक नगण, एक रगण, एक जगण
।।।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ और एक गुरु होता है, वह 'मनोरमा' छन्द है ।

२ त्रिसगा अपि मेघवितानम्—जिस छन्द में तीन सगण और एक गुरु होता
।।ऽ ।।ऽ।।ऽऽ हैं, वह 'मेघवितान' छन्द है ।

३ रश्च सौ सगुरुर्मणिराग—जिस छन्द में एक रगण, दो सगण और एक
ऽ।ऽ।।ऽ।।ऽऽ गुरु होता है, वह 'मणिराग' छन्द है ।

४ रुक्मवती छन्द का लक्षण ही चपकमाला का लक्षण है ।

अन्वयार्थ—(जिनप !) हे जिनपते ! (मुनिमनोम्बुज मुदीकुरु) मुनियों के मनकमल को खिलावो, (मे मनः स्थिरीकुरु) मेरा मन स्थिर करो (च शरण आगत मां पाहि) और शरण मे आये हुये मेरी रक्षा करो। (त्वर शिवपद मे प्रयच्छ) शीघ्र ही मुझे मोक्षपद प्रदान करो।

अर्थ—हे जिनराज ! मुनियो के मनकमल को विकसित करो मेरा मन स्थिर करो और शरण मे आये हुये मेरी रक्षा करो तथा शीघ्र ही मुझे मोक्षपद देवो ॥४॥

अन्वयार्थ—(वरभाद्रपदे सितषष्ठी) भादो सुदी छठ (जिनगर्भतिथि) जिनेद्रदेव की गर्भतिथि (सुखदात्री) सुख को देने वाली है। (किल जननी-जनकौ हृष्टौ) निश्चय से माता-पिता हर्षित हुए और (भुवि सर्वजना अपि तुष्टा) पृथ्वी पर सर्वलोग भी सतुष्ट हुये।

अर्थ—भादो सुदी छठ भगवान की गर्भतिथि सुखदायक है। भगवान के गर्भ कल्याणक से माता-पिता हर्षित हुये थे तथा इस भूमि पर सभी जन सतुष्ट हुये थे ॥५॥

अन्वयार्थ—(ज्येष्ठमासि सिते द्वादशी) ज्येष्ठ शुक्ला बारस को (जिनसूर्य) जिनेद्रसूर्य ने (अभिषेकैः अपुनात्) अपने जन्माभिषेक से पवित्र कर दिया (तत्तिथौ जिनरूपधर अभूत्) उसी तिथि मैं जिनरूप धारी हुये (ध्यानशस्त्रधर अपि दयालु) तब आप ध्यान शस्त्र के धारी होकर भी दयालु थे।

अर्थ—हे भगवन् ! जेठ सुदी बारस को आपने जन्म लेकर सुमेरु पर अभिषेक प्राप्त कर उस तिथि को पावन कर दिया। इसी जेठ सुदी बारस को दीक्षा लेकर जिनमुद्राधारी हुये ओर ध्यानरूपी शस्त्र से सहित होकर भी परमदयालु सर्वप्राणी मात्र की अहिंसा को पालते थे ॥६॥

अन्वयार्थ—(फाल्गुनकृष्णे हि षष्ठ्या) फागुनवदी छठ के दिन (यस्य) जिनको (केवलभास्वान् प्रादुरभूत्) केवलज्ञानसूर्य प्रगट हुआ था (स फाल्गुनसप्तम्या असिते असौ) वे ही फागुनवदी सप्तमी के दिन (ज्ञान-सुधामृत्) ज्ञानामृत से परिपूर्ण (मुक्तिपति स्यात्) मुक्ति के स्वामी हो गये।

अर्थ—सुपार्श्वनाथ भगवान को फागुनवदी छठ को केवलज्ञान सूर्य प्रगट हुआ था। फागुन वदी सप्तमी को वे ज्ञानमृत से पूर्ण मोक्षपद के स्वामी हो गये ॥७॥

त्वरितगति छन्द[1]—(१० अक्षरी)

हरिततनुर्गुणमणिभाक्,
द्विशतधनुस्त्रिभुवनवृक् ।
भवदमनो भविसुखकृत्,
कुधशमनस्तव शुभवाक् ॥८॥

अनुष्टुप् छन्द—

विंशतिलक्षपूर्वायुः,
सुपार्श्वः सुप्रतिष्ठजः ।
पायादिक्ष्वाकुवंशी मे,
जिनः स्वस्तिकलाञ्छनः ॥९॥

श्री चन्द्रप्रभ स्तोत्र

उपस्थिता छन्द[2]—(११ अक्षरी)

ससार-वने भ्रमता हि देवेट् ।
लेशोऽपिसुखं नहि लब्धमेव ।
त्वं वेत्सि च मेऽखिलदुःखमाप्त,
चन्द्रप्रभ ! मामवतात्त्वर वै ॥१॥

---

१ त्वरितगतिस्तु नजनगैः—जिस छन्द मे एक नगण, एक जगण, एक नगण
। । । । । S । । । । S और एक गुरु होता है वह 'त्वरितगति' छन्द है।

एकादशाक्षरी छद—

२. त्यो ज्यौ गुरुणेयमुपस्थितोक्ता—जिस छन्द मे एक तगण दो जगण और
S S । । S । । S । S S दो गुरु हो उसे 'उपस्थिता छन्द' कहते हैं।

अन्वयार्थ—(हरिततनु) आपका शरीर हरितवर्ण का था, (गुणमणि-भाक्) गुणमणि से भरित था, (द्विशतधनु.) दो सौ धनुष ऊचा था, (त्रिभुवन-दृक्) आप तीनलोकदर्शी हैं, (मददमन.) आप मान का दमन करने वाले हैं, (भवि सुखकृत्) भव्यजनों को सुख देने वाले हैं, (क्रुधशमन.) आपने क्रोध को शमन कर दिया था (तव शुभवाक्) आपकी वाणी शुभ है।

अर्थ—हे भगवन् ! आपके शरीर का वर्ण हरा है, आप गुणरूपी मणियो से भरे हुए हैं। आपके शरीर की ऊँचाई दो सौ धनुष है (२००×४=८०० हाथ है), आप तीन लोक के नेत्र हैं—देखने वाले हैं। मान को दमन करने वाले हैं, भव्यजनो के पालन करने वाले हैं, क्रोध को शमन करने वाले हैं और आपके वचन शुभ हैं—कल्याणकारी हैं ॥८॥

अन्वयार्थ—(विंशतिलक्षपूर्वायु:) बीस लाख पूर्व वर्ष की आयु थी, (सुप्रतिष्ठज) सुप्रतिष्ठ राजा के पुत्र हैं, (इक्ष्वाकुवशी) इक्ष्वाकुवंश मे उत्पन्न हुये हैं (स्वस्तिक-लांछन) आपका स्वस्तिक चिन्ह है (सुपार्श्व जिन मे पायात्) ऐसे सुपार्श्वनाथ भगवान् मेरी रक्षा करे।

अर्थ—जिनकी बीस लाख पूर्ववर्ष की आयु है, जो राजा सुप्रतिष्ठ के पुत्र हैं, इक्ष्वाकुवशी हैं और जिनका स्वस्तिक चिन्ह है; ऐसे सुपार्श्वनाथ भगवान् मेरी रक्षा करे ॥९॥

श्री चंद्रप्रभ स्तोत्र

अन्वयार्थ—(देवेट् !) हे देवो के ईश ! (ससारवने भ्रमता हि) ससारवन मे भ्रमण करते हुये मैंने (लेश अपि) लेशमात्र भी (सुख नहि लब्ध एव) सुख नही पाया है। (च त्व मे आप्त अखिल दु ख वेत्सि) और आप मेरे भोगे हुये अखिल दु खो को जानते हो (चन्द्रप्रभ ! वै त्वर मा अवतात्) हे चन्द्रप्रभ भगवन् ! शीघ्र ही मेरी रक्षा कीजिये।

अर्थ—हे देवो के ईश्वर ! इस ससार रूपी वन मे भ्रमण करते हुए मैंने लेशमात्र भी सुख नही पाया है, और आप मेरे भोगे हुए सकल दु खो को जानते हो अतः हे चन्द्रप्रभ भगवन् ! आप शीघ्र ही मेरी रक्षा कीजिये ॥१॥

एकरूप छन्द[1]—(११ अक्षरी)

काश्यां चंद्रपुरे सुरत्नवृष्ट्या,
पृथ्वी धन्यवती जनाश्च धन्याः ।
पित्रोर्हर्षमवर्धयन् हि चैत्रे,
पञ्चम्या-मसितेऽवसत् स गर्भे ॥२॥

इन्द्रवज्रा छन्द[2]—(११ अक्षरी)

जन्माभिषेकः सुरशैलमूर्ध्नि,
जातः प्रभोश्चन्द्रजिनस्य यस्यां ।
सैकादशी मे भव पौषकृष्णा,
भूः लक्ष्मणा मंगलदायिनी च ॥३॥

उपेन्द्रवज्रा छन्द[3]—(११ अक्षरी)

शशांककान्तोज्ज्वलदेहधारी,
तथाप्यदेहः शिवधाम्न्यतिष्ठत् ।
विरागमोहोपि निजात्मरक्तः,
प्रभुः स मे मोहतमोहरः स्यात् ॥४॥

---

१. मः सो जो गुरुयुग्ममेकरूपम्—जिस छन्द मे एक मगण, एक सगण, एक
S S S I I S I S I S S जगण और दो गुरु हो, उसे 'एकरूप छन्द' कहते हैं।

२ स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः—जिस छन्द मे दो तगण, एक जगण
S S I S S I I S I S S और दो गुरु हो, उसे 'इन्द्रवज्रा छन्द' कहते हैं।

३. उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ—जिस छन्द मे एक जगण, एक तगण, एक
I S I S S I I S I S S जगण और दो गुरु हो, उसे 'उपेन्द्रवज्रा छन्द कहते हैं।

अन्वयार्थ—(काश्या चंद्रपुरे) काशी मे चद्रपुरी नगरी मे (सुरत्न-वृष्ट्या) रत्नवृष्टि से (पृथ्वी धन्यवती) पृथ्वी धन्य हो गई (च जना धन्या) और सर्वजन धन्य हो गये। (हि पित्रो: हर्षं अवर्धयन् स: चैत्रे असिते पचम्या गर्भे अवसत्) माता-पिता के हर्ष को बढ़ाते हुये वे भगवान् चैत्रवदी पचमी को गर्भ मे आये।

अर्थ—काशी देश की चन्द्रपुरी नगरी में कुबेर द्वारा रत्नो की वर्षा होने से यह पृथ्वी धन्य हो गई और सर्वजन भी धन्य हो गये। वे भगवान चैत्रवदी पचमी को गर्भ मे आये और माता-पिता के हर्ष को बढाया ॥२॥

अन्वयार्थः—(चद्रजिनस्य प्रभो यस्या सुरशैलमूर्ध्नि जन्माभिषेक जात) चन्द्रप्रभ भगवान का जिस तिथि मे सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक हुआ (सा पौषकृष्णा एकादशी च सू लक्ष्मणा मे मगलदायिनी भव) वह पौषकृष्णा एकादशी तिथि और माता लक्ष्मणा दोनो मुझे मगल देने वाली होवे।

अर्थ—चन्द्रनाथ भगवान् का जिस तिथि मे सुमेरु पर्वत पर जन्मा-भिषेक हुआ है वह पौष कृष्णा ग्यारस तिथि और जननी लक्ष्मणादेवी मेरे लिये मगल देने वाली होवे ॥३॥

अन्वयार्थः—(शशाककातोज्ज्वलदेहधारी) चद्रमा की काति के समान उज्ज्वल देह के धारी थे (तथापि अदेह शिवधाम्नि अतिष्ठत्) फिर भी देह रहित होकर मोक्ष धाम मे स्थित हुये। (विरागमोह अपि निजात्मरक्त) राग और मोहरहित होकर भी अपनी आत्मा मे अनुरक्त हैं। (स प्रभु मे मोहतमोहर. स्यात्) वे भगवान मेरे मोह अन्धकार को दूर करने वाले होवे।

अर्थ—भगवान् चन्द्रप्रभु के शरीर की काति चन्द्रमा के समान थी फिर भी वे शरीर रहित हुये मोक्षधाम मे विराजमान हैं। वे राग और मोहरहित होकर भी अपनी आत्मा मे अनुरक्त हैं वे भगवान् मेरे मोह अधकार को हरने वाले होवे ॥४॥

उपजाति छन्द[1]—(११ अक्षरी)

जन्मप्रसिद्धे दिवसे जिनेशः,
दिगम्बरोऽभूत् परिहृत्य ग्रन्थं ।
कैवल्यलाभेन हि सप्तमी स्यात्,
पूता प्रसिद्धासितफाल्गुनी या ॥५॥
तन्मासि शुक्ला किल सप्तमी या,
तस्यां विमुक्तोऽखिलकर्मदूरः ।
ज्ञानैकसिंधुर्भुवनैकबंधुः,
जिनः स मेऽन्तः सततं निषीद ॥६॥

सुमुखी छन्द[2]—(११ अक्षरी)

सुरपतयः प्रणमंति सदा,
गणपतयोऽनुसरंति मुदा ।
मुनिपतयः कवयंति गुणान्,
मयि विनते कुरु त्वं करुणां ॥७॥

दोधक छन्द[3]—(११ अक्षरी)

चन्द्रजिनो भवतापहरस्त्वं,
चिंतितवस्तुसुदाने दक्षः ।
कल्पतरुर्जिन ! हीप्सितदाता,
नौमि सदा मम सिद्धिविधाता ॥८॥

---

१. अनन्तरोदीरित लक्ष्मभाजौ, पादौ यदीयावुपजातयस्ता ।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु, स्मरन्ति जातिष्विदमेव नाम ॥
जिस छन्द मे इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा इन दोनो का लक्षण पाया जाए उसे 'उपजाति छन्द' कहते हैं ।

२. **नजजलगैर्गदिता सुमुखी**—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण, दो
। । । । S । । S । । S जगण और एक लघु, एक गुरु हो, उसे 'सुमुखी छन्द' कहते हैं ।

३ **दोधकवृत्तमिदं भभभाद्गौ**—जिस छन्द में तीन भगण और दो गुरु हों,
S । । S । । S । । S S उसे 'दोधक छन्द' कहते है ।

अन्वयार्थः—(जन्मप्रसिद्धे दिवसे जिनेशः) जन्म से प्रसिद्ध दिवस में जिनेद्रदेव (ग्रन्थि परिहृत्य दिगम्बरः अभूत्) परिग्रह त्यागकर दिगम्बर हो गये। (कैवल्यलाभेन हि प्रसिद्धा असितफाल्गुनी सप्तमी पूता स्यात्) केवल-ज्ञान की प्राप्ति से प्रसिद्ध फागुन वदी सप्तमी पवित्र हो गई। (किल तन्मासि शुक्ला या सप्तमी) उसी माह में जो शुक्ला सप्तमी थी (तस्या अखिलकर्मदूर विमुक्त) उसी दिन सर्वकर्म से रहित आप मुक्त हो गये। (ज्ञानैकसिंधु भुवनैकबधु) जो ज्ञान के एक समुद्र हैं और सर्वलोक के एक बाधव हैं (स जिन सतत मे अत निषीद) वे जिन भगवान् सदा ही मेरे हृदय मे विराजमान रहें।

अर्थ—पौष कृष्णा ग्यारस मे ही आपने सर्वपरिग्रह को त्याग कर दिगम्बर दीक्षा ली थी। फागुनवदी सप्तमी तिथि भगवान् के केवलज्ञान से पवित्र हो गई। पुन फागुन सुदी सप्तमी तिथि मे भगवान् सर्वकर्म से रहित सिद्ध हो गये। जो भगवान् ज्ञान के एक समुद्र हैं और सर्वलोक के एक बाधव हैं ऐसे वे जिन भगवान् सदैव मेरे अंतःकरण मे विराजमान रहें ॥५-६॥

अन्वयार्थः—(सदा सुरपतय प्रणमंति) हमेशा इन्द्रगण आपको प्रणाम करते हैं, (गणपतय मुदा अनुसरंति) गणधर देव आदि हर्ष से आपका अनुसरण करते हैं, (मुनिपतय गुणान् कथयति) मुनियो के अधिपति आपके गुणो का गान करते हैं। (मयि विनते त्व करुणा कुरु) मुझ नमस्कार करते हुये पर आप करुणा करो।

अर्थ—हे भगवन्! इन्द्र समूह हमेशा आपको प्रणाम करते हैं। गणधर देव हर्ष से आपका अनुसरण करते हैं और मुनियो के अधिपति आपके गुणो को गूथकर गाते हैं। ऐसे हे भगवन्! मुझ नमस्कार करते हुये पर आप करुणा करो ॥७॥

अन्वयार्थः—(त्व चन्द्रजिन भवतापहरः) आप चन्द्रजिन ससार के ताप को हरने वाले हो, (चिंतितवस्तुसुदाने दक्ष) मन चिंतित वस्तु को देने मे समर्थ हो, (हि ईप्सितदाता कल्पतरुः) और इच्छित वस्तु के देने मे कल्पवृक्ष हो (ममसिद्धिविधाता) मेरे लिए सिद्धि को देने वाले विधाता हो। (जिन!) ऐसे हे जिन! (सदा नौमि) मैं आपको सदा नमस्कार करता हूँ।

अर्थ—हे चन्द्रप्रभु! आप भवताप के हरने वाले हो, चिंतित वस्तु को देने मे समर्थ हो और इच्छित वस्तु के देने में कल्पवृक्ष हो तथा मेरे लिए सिद्धि के विधाता सिद्धि करने वाले हो ऐसे हे चन्द्रप्रभ भगवान्! आपको मैं सदा नमस्कार करता हूँ ॥८॥

अनुष्टुप् छन्द—

शून्यषट्कैकपूर्वायुः,
साद्धंचापशतोच्छ्रितिः ।
महासेनात्मजः पायात्,
स जिनश्चंद्रलाञ्छनः ॥६॥

श्री पुष्पदंतजिन स्तोत्र

शालिनी छन्द[1]—(११ अक्षरी)

त्रैलोक्येशः पुष्पदंतो महेशः,
काकंदी पूः जन्मतस्ते पवित्रा ।
सुग्रीवस्त्वज्जन्मदाता बभूव,
देवेंद्राद्यैस्त्वं नुतः साधुभिश्च ॥१॥

वातोर्मी छन्द[2]—(११ अक्षरी)

गर्भे वासः सुनवम्यां हि कृष्णे,
माता हृष्टा शुभदे फाल्गुने स्यात् ।
श्रेष्ठे शुक्ला प्रतिपन्मार्गशीर्षे,
जन्म प्राप्तो भुवि भास्वान् त्रिलोक्याः ॥२॥

एकादशाक्षरी छंद—

१ शालिन्युक्ता म्तौ गतौ गोऽब्धिलोकैः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ मगण, दो तगण और दो गुरु हो, उसे 'शालिनी छन्द' कहते हैं ।

२ वातोर्मीयंगदिता म्भौ तगौ गः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक
ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ । ऽ ऽ मगण, एक भगण, एक तगण और दो गुरु होते हैं, उसे 'वातोर्मी छन्द' कहते हैं ।

अन्वयार्थः—(शून्यषट्कैकपूर्वायुः) शून्य छह और एक अंक अर्थात् दस लाख वर्ष पूर्व आपकी आयु थी (सार्द्धचापशतोच्छ्रिति) डेढ सौ धनुष की आपकी ऊँचाई थी, (महासेनात्मज.) महासेन पिता के पुत्र थे (चद्र-लांछन·) चंद्रमा आपका चिन्ह था (स· जिन· पायात्) वे चंद्रप्रभ भगवान-मेरी रक्षा करे।

अर्थ—जिनकी दस लाख पूर्व वर्ष की आयु थी, डेढ सौ धनुष ऊचा जिनका शरीर था अर्थात् १५०×४=६०० हाथ की ऊचाई थी। और जो "महासेन" पिता के पुत्र थे तथा जिनका चिन्ह चन्द्र था ऐसे वे चन्द्रप्रभ भगवान् हमारी रक्षा करे ॥६॥

श्रीपुष्पदंतजिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(त्रैलोक्येश) तीन लोक के स्वामी (पुष्पदत.) पुष्पदत भगवान् (महेश) महेश्वर हैं। (ते जन्मत) आपके जन्म से (काकदी पू पवित्रा) काकदी नगरी पवित्र हो गई। (त्वज्जन्मदाता सुग्रीव बभूव) आपके जनक-पिता सुग्रीव हैं (त्व देवेंद्रै. च साधुभि नुत) आप देवन्द्रो से और साधुओ से नमस्कृत हैं।

अर्थ—पुष्पदन्त भगवान् तीनलोक के स्वामी हैं महेश्वर हैं। आपके जन्म से काकदी नगरी पवित्र हो गई है। आपके जनक-पिता सुग्रीव थे, आप देवेंद्रो से और साधुओ से नमस्कृत हैं ॥१॥

अन्वयार्थ—(शुभदे फाल्गुने कृष्णे सुनवम्या। शुभ फागुन कृष्णा नवमी को (गर्भे हि वास) आपने गर्भ मे निवास किया (माता हृष्टा स्यात्) तब माता हर्षित हुई। (श्रेष्ठे शुक्ला प्रतिपन्मार्गशीर्षे) श्रेष्ठ मगसिरशुक्ला एकम को (त्रिलोक्या भास्वान् भुवि जन्मप्राप्त) तीन लोक के सूर्य ने पृथ्वी पर जन्म ग्रहण किया।

अर्थ—शुभ फाल्गुन कृष्णा नवमी को आप गर्भ मे आये तब माता हर्षित हुई। पुन. श्रेष्ठ मगसिर शुक्ला एकम को तीनलोक के भास्कर प्रभु ने इस पृथ्वी पर जन्म लिया ॥२॥

भ्रमरविलसित छन्द[1]—(११ अक्षरी)

आत्माधीनं सुखमविचलितं,
स्थैर्यं स्यान्न क्षणविरहितं।
सर्वैः पूज्य सुरनरखचरैः,
पादाब्जं ते मम भव सुखद ॥३॥

स्त्री [श्री] छन्द[2]—(११ अक्षरी)

कीर्तिलता ते भुवनततास्ति, सिद्धिरमा ते चरणरतास्ति।
दिव्यसुधावाक् भवजलनौका, दिव्यतनुस्ते शशिसमवर्णः ॥४॥

रथोद्धता छन्द[3]—(११ अक्षरी)

साधुरेष किल स्यात् जनेस्तिथौ, ध्यानचक्रधरकर्ममर्महृत्।
कार्तिके द्वितयके सिते प्रभुः, केवलश्रियमगात् जिनेश्वरः ॥५॥

अष्टमी सुसितभाद्रमासि सः, प्राप्तवांश्च भगवान् शिवश्रियम्।
स्वात्मसौख्यरसपानतृप्तकः, हे जिनेश ! तनु मोक्षज सुखं ॥६॥

---

१ म्भौ न्लौ गः स्याद्भ्रमरविलसितम्—जिस छन्द मे एक मगण, एक भगण
S S S S I I I I I I S
एक नगण और एक लघु और एक गुरु वर्ण होता है, उसे 'भ्रमरविलसित छन्द' कहते हैं।

२ पञ्चरसैः स्त्री भतनगगैः स्यात्—जिस छन्द मे एक भगण, एक तगण,
S I I S S I I I I S S
एक नगण और दो गुरु होते हैं, उसे 'स्त्री छन्द' कहते हैं। इसका दूसरा नाम 'श्री छन्द' भी है।

३ रान्नराविह रथोद्धता लगौ—जिस छन्द मे एक रगण, एक नगण, एक
S I S I I I S I S I S
रगण और एक लघु, एक गुरु होता है, उसे 'रथोद्धता छन्द' कहते हैं।

अन्वयार्थ—(आत्माधीन सुख अविचलित) आपका आत्मा से उत्पन्न सुख अचल है, (स्थैर्यं स्थानं भ्रमणविरहित) आपका स्थिर स्थान भ्रमण से रहित है। (सर्वे सुरनरखचरं पूज्य) सभी देव मनुष्य और विद्याधरो से पूज्य, (ते पादाब्ज मम सुखद भव) आपके चरण-कमल मेरे लिये सुखदायी होवे।

अर्थ—हे भगवन्! आपका सुख आत्मा से उत्पन्न हुआ अविचल है, आपका स्थान भ्रमण से रहित स्थिर है। और आपके चरण कमल, सर्वदेव मनुष्य व विद्याधरो से नमस्कृत है, ऐसे चरण युगल मुझे सुखदायी होवे ॥३॥

अन्वयार्थ—(ते कीर्तिलता भुवनलता अस्ति) आपकी कीर्ति बेल सारे लोक तक फैली हुई है। सिद्धिरमा ते चरणरता अस्ति) सिद्धिरमणी आपके चरणो में रत है। (दिव्य-सुधावाक् भवजलनौका) आपकी दिव्य-वाणी भवजल के लिये नाव है। और (ते दिव्यतनुस्ते शशिसमवर्ण) आपका दिव्यशरीर चद्रमा के समान वर्ण वाला है।

अर्थ—हे भगवन्! आपकी कीर्ति बेल सारे लोक में फैली हुई है, सिद्धिकांता आपके चरणो मे रत है। आपकी दिव्यध्वनि ससार जल को तरने के लिये नाव है और आपकी दिव्य जीवन गाथा ससार के भय को नष्ट करने वाली है ॥४॥

अन्वयार्थ—(एष जनेस्तिथौ किल) ये भगवान् मगसिर सुदी एकम को (ध्यानचक्रधरकर्ममर्महृत् साधु स्यात्) ध्यान चक्र के धारी कर्म के मर्म को विदारण करने वाले साधु बने। (कार्तिके द्वितयके सितेप्रभु) कार्तिक सुदी दूज को (जिनेश्वर केवलश्रिय अगात्) प्रभु पुष्पदन्त जिनराज ने केवलज्ञानसपदा प्राप्त की।

अर्थ—ये पुष्पदन्त भगवान् मगसिर सुदी प्रतिपदा को मुनि बने तब ध्यान चक्र को धारण कर कर्म के मर्म को छेदने वाले हुये। पुन. कार्तिक शुक्ला दूज को केवलज्ञान वैभव प्राप्त कर लिया ॥५॥

अन्वयार्थ—(अष्टमीसुसितभाद्रमासि स भगवान् शिवश्रिय प्राप्त-वान्) भादो सुदी अष्टमी को उन प्रभु ने मोक्षसपदा प्राप्त कर ली। (च स्वात्मसौख्यरसपानतृप्तक) और अपने आत्मा के सुखरस पान से तृप्त हो गये (हे जिनेश! मोक्षज सुखं तनु) ऐसे हे जिनेश्वर! मुझे मोक्ष से उत्पन्न सुख देवो।

अर्थ—उन पुष्पदन्त भगवान् ने भादो सुदी अष्टमी को मोक्ष पद प्राप्त कर लिया तब वे अपनी आत्मा से उत्पन्न परमसुख रस के पान से पूर्ण तृप्त हो गये। ऐसे हे जिनराज! आप मुझे भी मोक्षसुख प्रदान करो ॥६॥

अनुष्टुप् छंद—

पूर्वलक्षद्वयात्मायुः, शतचापसमुच्छ्रितिः ।
जयरामात्मजोऽसौ मां, पायात् मकरलाञ्छनः ॥७॥

श्री शीतलजिन स्तोत्र

स्वागता छंद[1]—(११ अक्षरी)

मोहवन्हिपरिदग्धमनस्कं, चंदनः किमु करोति सुशांतिं ।
श्रीमुखोद्भववचोमृतपूरैः, यामि शांतिमिह शाश्वतिकीं च ॥१॥

पृथ्वी छंद [वृत्ता][2]—(११ अक्षरी)

यदि कथमपि तव सद्वाक्यं, जिनवर ! शशिकरवल्लब्धं ।
भवजलनिधिमपि ते तीर्त्वा, निजसुखमयसदनं जग्मुः ॥२॥

सुभद्रिका छंद [चंद्रिका][3]—(११ अक्षरी)

गुणमणिनिकरः सुशीतलः, स्वसमवसरणे गणान् दिशेत् ।
यतिजनहृदय मुदीक्रियान्, मम भवमथनो मुद क्रियात् ॥३॥

एकादशाक्षरी छंद—

१ स्वागतेति रनभाद्गुरु युग्मम्—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक रगण, एक नगण, एक भगण और दो गुरु होते हैं, उसे 'स्वागता छन्द' कहते हैं ।
S I S I I I S I I S S

२ ननसगगुरुरचिता पृथ्वी—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण, एक सगण और दो गुरु होते हैं, उसे 'पृथ्वी छन्द' कहते हैं । इसका दूसरा नाम 'वृत्ता' छन्द भी है ।
I I I I I I I I S S S

३ ननरलगुरुभि. सुभद्रिका [चन्द्रिका वा]—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण, एक रगण, और एक लघु तथा एक गुरु होता है, उसे 'सुभद्रिका' या 'चन्द्रिका' छन्द कहते हैं ।
I I I I I I S I I I S

अन्वयार्थ—(पूर्वलक्षद्वयात्मायु) दो लाख वर्षपूर्व की आयु थी, (शतचापसमुच्छिति) एक सौ धनुष ऊचा शरीर था, (मकरलांछन) मकर चिन्ह था (असौ जयरामात्मज मां पायात्) वे जयरामा माता के पुत्र मेरी रक्षा करें।

अर्थ—पुष्पदन्त भगवान् की आयु दो लाख पूर्व वर्ष की थी, १०० × ४ = ४०० चार सौ हाथ ऊचा शरीर था, मकर का उनका चिन्ह था और उनकी माता जयरामा थी ऐसे वे पुष्पदन्त भगवान मेरी रक्षा करे ।।।७।।

शीतलनाथ जिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(मोहवह्निपरिदग्धमनस्क) मोहरूपी अग्नि से जले हुये मन सहित को (चदन. किमु सुशाति करोति) क्या चदन- शाति कर सकता है ? (इह श्री मुखोद्भववचोमृतपूरै) किंतु यहा आपके श्रीमुख से निकले हुये वचनामृत के पूर से (शाश्वतिकीं च शांति यामि) मैं शाश्वतिक शाति को प्राप्त करू गा।

अर्थ—मोहरूपी अग्नि से दग्ध हुये मन वाले को क्या चदन शाति दे सकता है ? नही, किंतु हे भगवन् ! इस ससार मे आपके श्रीमुख से प्रगट हुये वचनरूपी अमृत के पूर से मैं शाश्वतिक शाति को प्राप्त करू गा ।।१।।

अन्वयार्थ—(जिनवर ! यदि कथम् अपि शशिकरवत् तव सद्वाक्यं लब्ध) हे जिनवर ! यदि किसी भी प्रकार से चन्द्रमा की किरण के समान आपके सद्वचनो को प्राप्त कर लिया (ते भवजलनिधि अपि तीर्त्वा) तो वे भवसमुद्र को भी तिरकर (निजसुखमयसदन जग्मु) अपने सुखमय स्थान को प्राप्त कर लिया है।

अर्थ—हे जिनवर ! यदि किसी ने चद्रमा की किरण के समान शीतल ऐसे आपके सद्वचनो को प्राप्त कर लिया तो उन्होने इस ससाररूपी समुद्र को पार कर अपने सुखमय मोक्ष महल को प्राप्त कर लिया है ।।२।।

अन्वयार्थ—(गुणमणिनिकर) गुणमणि के समूह (सुशीतल) शीतलनाथ भगवान (समवसरणे गणान् दिशेत्) समवशरण मे द्वादशगण को उपदेश देते हैं। (यतिजनहृदय मुदीक्रियात्) यतियो के मन को मुदित करें (भवमथन) भव का मथन करने वाले ये जिनेद्र (मम मुद क्रियात्) मेरे हर्ष को बढावे।

अर्थ—गुणमणि समूह, शीतलनाथ भगवान् समवसरण मे द्वादशगण को उपदेश देते हैं। वे भव का मथन करने वाले भगवान् यतियो के हृदय को मुदित करें और मेरे हर्ष को बढावे ।।३।।

वैतिका छंद [स्येनिका][1]—(११ अक्षरी)

अष्टमीतिथौ सुचैत्रकृष्णके, गर्भमंगल च ते जिनेशिनः।
द्वादशीतिथिः सुमाघकृष्णजा, जन्ममंगलेन धन्यतां गता ॥४॥

मौक्तिकमाला छंद[2]—(११ अक्षरी)

भद्रपुरे यो दृढरथराजा, मातृसुनंदा त्रिभुवनमान्या।
जन्मतिथौ त्वं किल जिनमुद्रां, प्राप्य विमोहो जितभवशत्रुः ॥५॥

उपस्थित छंद[3]—(११ अक्षरी)

धनुर्नवतिदेहः स्वर्णवर्णो, जिनेश ! तव वाक्पीयूषवृष्ट्या।
समस्तभुवन शीतीभवेत् वै, जनाश्च किल शीताः स्यु-र्भवाग्नेः ॥६॥

चन्द्रवर्त्म छंद[4]—(१२ अक्षरी)

इंद्रियैस्तु रहितो विगतमलः, पूर्णबोध इति वेत्स्यखिलभुव।
शीतलेश ! तव शीतलवचनैः, शीतलत्वमुपयांति तनुभृतः ॥७॥

---

१ वैतिका रजौ रलौ गुरुर्यदा—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक रगण,
S I S I S I S I S I S एक जगण, एक रगण और एक लघु तथा एक गुरु होता है। उसे 'वैतिका छन्द' कहते हैं।

२ मौक्तिकमाला यदि भतनाद्गौ - जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक भगण,
S I I S S I I I I S S एक तगण, एक नगण और दो गुरु होते हैं। उसे 'मौक्तिकमाला' छन्द कहते हैं। इसका दूसरा नाम 'अनुकूला' भी है।

३ उपस्थितमिद ज्सौ ताद्गकारौ—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक जगण,
I S I I I S S S I S S एक सगण और एक तगण और दो गुरु होते हैं। उसे 'उपस्थित' छन्द कहते हैं।

द्वादशाक्षरी छन्द—

४ चन्द्रवर्त्म गदितन्तु रनभसैः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक रगण,
S I S I I I S I I I I S एक नगण, एक भगण और एक सगण हो उसे 'चन्द्रवर्त्म' छन्द कहते हैं।

अन्वयार्थ—(सुचैत्रकृष्णके अष्टमीतिथौ) चैत्र कृष्णा अष्टमी तिथि मे (ते जिनेशिन) आप जिनराज का (गर्भमगल च) गर्भ मगल हुआ। सुमाघकृष्णजा द्वादशीतिथि·) माघ कृष्णा बारस (जन्ममंगलेन धन्यतां गता) जन्मकल्याणक से धन्य हो गई।

अन्वयार्थ—(भद्रपुरेऽसौ दृढरथराजा) भद्रपुर मे वे दृढरथ राजा थे और (मातृसुनदा त्रिभुवनमान्या) माता सुनदा तीन लोक मे मान्य थी। (त्व किल जन्मतिथौ जिनमुद्रा प्राप्य) आप निश्चय से माघ कृष्णा बारस के जिनमुद्रा धारण कर (विमोह जितभवशत्रु) मोहरहित भवशत्रु को जीतने वाले हुये।

अर्थ—हे भगवन् ! चैत्रवदी अष्टमी के दिन आप गर्भ मे आये और माघवदी बारस को आपने अपने जन्म से धन्य कर दिया। भद्रपुरी के राजा दृढरथ आपके पिता थे और तीन लोक मे मान्य सुनदा देवी आपकी माता थी। माघ वदी बारस को ही आपने जिनमुद्रा ग्रहण कर मोह शत्रु को जीता और ससार शत्रु के भी विजेता बने ॥४–५॥

अन्वयार्थ—(धनुर्नवतिदेह स्वर्णवर्ण) आपका शरीर नब्बे धनुष का था और वर्ण स्वर्ण जैसा था। (जिनेश !) हे जिनराज ! (तव वाक्पीयूष-वृष्ट्या) आपके वचनरूपी अमृत की वर्षा से (समस्तभुवन वै शीतीभवेत्) समस्त लोक शीतल होवे (च किल) और निश्चय से (भवाग्ने जना शीता. स्यु) भवरूपी अग्नि से सर्वजन भी शीतल होवे।

अर्थ–हे भगवन् ! आपकी शरीर ऊचाई नब्बे धनुष थी अर्थात् ९० × ४ = ३६० हाथ थी, आपका शरीर सुवर्ण वर्ण का था। आपके वचनामृत की वर्षा से समस्त जगत् शीतल होवे और निश्चित ही सर्वजन भी ससार की दाह से शीतल होवे ॥६॥

अन्वयार्थ—(इन्द्रियै तु रहित· विगतमल) इन्द्रियो से रहित और मल रहित (पूर्णबोध) केवलज्ञानी (इति) इस प्रकार आप (अखिल) भुव वेत्सि) सकल विश्व को जानते हो। (शीतलेश !) हे शीतलनाथ ! तव शीतलवचनै) आपके शीतल वचनो से (तनुभृत शीतलत्व उपयाति) सभी ससारी प्राणी शीतलता को प्राप्त होते हैं।

अर्थ—हे शीतलनाथ ! आप इन्द्रियो से रहित और मल दोष से रहित पूर्णज्ञानी हो अत आप सकल विश्व को जानते हो। हे देव ! आपके शीतल वचनों से सभी ससारी प्राणी शीतलता को प्राप्त करते हैं ॥७॥

वंशस्थ छंद[1]—(१२ अक्षरी)

चतुर्दशी पौषशुभाऽसिता मता, सुकेवलज्ञानमहोत्सवैर्युता ।
सुरासुरेन्द्रैर्मुनिपुंगवैः श्रितः, स शीतलः स्यात् हृदि शीतलाय मे ।।८।।

इन्द्रवंशा छंद[2]—(१२ अक्षरी)

शुक्लाश्विने शीतलदा च याऽष्टमी ।
तस्यां विमुक्तिश्रियमाप शीतलः ।।
इक्ष्वाकुवंशो रविवत् प्रतापवान् ।
चंद्रांशुवत् शीतलदः पुनातु मे ।।९।।

अनुष्टुप् छंद—

खपचक्रैक-पूर्वायुः, जिनः श्रीवृक्षलाञ्छनः ।
भवातरेऽपि याचेऽहं, ते भक्ति भो ! पुनः पुनः ।।१०।।

श्री श्रेयासजिन स्तोत्र

द्रुतविलंबित छंद[3]—(१२ अक्षरी)

सहजशुद्धचिदात्मनि यः स्थितः, सकलबोधकलारमणः सदा ।।
सहजसौख्यसुधारसतृप्तिकः, जयतु तीर्थकरो हि जगत्त्रये ।।१।।

---

१ जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक जगण, एक तगण, एक जगण और एक रगण होता है उसे 'वंशस्थ' छन्द कहते हैं ।
। S । S S । । S । S । S

२ स्यादिन्द्रवंशा ततजैः रसयुतैः—जिस छन्द मे प्रत्येक चरण मे दो तगण, एक जगण और एक रगण हो, उसे 'इन्द्रवंशा' छन्द कहते हैं ।
S S । S S । । S । S । S

द्वादशाक्षरी छंद

३ द्रुतविलम्बित छन्द का लक्षण—
'द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ,—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण, दो भगण और एक रगण होता है उसे 'द्रुतविलम्बित' छन्द कहते हैं ।
। । । S । । S । । S । S

अन्वयार्थ—(सुकेवलज्ञानमहोत्सवै युता) केवलज्ञान महोत्सव से युक्त (पौषशुभा असिता चतुर्दशी मता) पौष कृष्णा चतुर्दशी मान्य हुई। (सुरासुरेन्द्रै मुनिपुगवै श्रित) सुर असुर और इन्द्रो से तथा मुनिपुगवों से आश्रित (स शीतल) वे शीतलनाथ (मे हृदि शीतलाय स्यात्) मेरे मन की शीतलता के लिये होवें।

अर्थ—पौष वदी चौदश को भगवान् का केवलज्ञान महोत्सव मनाया गया। सुर-असुर और इन्द्रो से तथा मुनि नाथो से सेवित वे शीतलनाथ भगवान मेरे मन को शीतल करे ॥८॥

अन्वयार्थ—(आश्विने या शीतलदा च शुक्ला अष्टमी) आश्विन माह मे जो शीतलता देने वाली शुक्ला अष्टमी है। (तस्या शीतल विमुक्ति-श्रिय आप) उस तिथि मे शीतलनाथ ने मोक्षलक्ष्मी को प्राप्त किया है। (इक्ष्वाकवशी) वे इक्ष्वाकुवशी हैं, (रविवत् प्रतापवान्) सूर्य के समान प्रतापी हैं। (चद्राशुवत् शीतलद) वे चन्द्रकिरण के समान शीतलता देने वाले हैं (मे पुनातु) वे मुझे पवित्र करे ॥९॥

अर्थ—शीतलनाथ ने आसोज सुदी अष्टमी को मोक्ष प्राप्त किया है। वे इक्ष्वाकुवशी हैं, सूर्य के प्रतापी और चन्द्रमा की किरणो के समान शीतलता देने वाले हैं वे भगवान् मुझे पवित्र कर।

अन्वयार्थ—(जिन खपचकैकपूर्वायु) जिनेन्द्र देव की एक लाख पूर्व वर्ष की आयु थी, (श्रीवृक्षलाछन) श्रीवृक्ष चिह्न था (भो) हे भगवन्! (भवातरे अपि) भवातर मे भी (अह ते भक्ति पुन पुन याचे) मैं आपकी भक्ति की पुन पुन याचना करता हूँ।

अर्थ—शीतलजिन की आयु एक लाख पूर्व वर्ष की थी, उनका चिह्न श्रीवृक्ष का था। हे भगवन्! अगले भव मे मै पुन पुन आपकी भक्ति की याचना करता हूँ ॥१०॥

श्रेयासनाथ जिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(य सहजशुद्धचिदात्मनि स्थित:) जो सहज शुद्ध चैतन्य आत्मा मे स्थित है। (सदा सकलबोधकलारमण) हमेशा केवलज्ञान की कला मे रमण करते हैं। (सहजसौख्यसुधारसतृप्तिक) सहज सौख्य अमृतरस से तृप्त हैं। (तीर्थंकरो हि जगत्त्रये जयतु) वे तीर्थंकर भगवान् तीनो जगत् मे जयवन्त होवे।

अर्थ—जो सहज शुद्ध चैतन्य आत्मा मे स्थित हैं, हमेशा केवलज्ञान की कला मे रमण करते हैं, सहज सौख्यरूपी पीयूष रस से तृप्त हैं वे तीर्थं-कर श्रेयाँसनाथ तीनो लोको मे जयवन्त होवे ॥१॥

पुट छन्द[1]—(१२ अक्षरी)

गुणमणिवपुषः श्रेयो-जिनस्य ।
यदि कथमपि ते पादौ श्रयति ।।
भवजलधिगताः श्रेयोर्थिनस्ते ।
ह्यमितगुणनिधान यांति धाम ।।२।।

तोटक छन्द[2]—(१२ अक्षरी)

निजसाम्यसुखामृतपानकरः ।
विरतोऽपि विमुक्तिरमारमणः ।।
सदयोऽपि कषायरिपून् हतवान् ।
कनकाभतनुश्च वपुर्विगतः ।।३।।

प्रमुदितवदना छन्द[3]—(१२ अक्षरी)

प्रमुदितमुखविष्णुमित्रः पिता ।
जिनवरजननी च नंदावती ।।
स्वसमयधिषणः स्वयंभूर्जिनः ।
भवतु सपदि मे विमुक्तिश्रियै ।।४।।

---

१ पुट छन्द—

'मुनिशरविर तनौ म्यौ पुटोऽयम्'— जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो
। ।।।।।।ऽऽ ऽ ।ऽऽ नगण, एक मगण और एक यगण होता है, उसे 'पुट छन्द कहते हैं।

२ तोटक छन्द—

इह तोटकमम्बुधिसैः प्रथितम्—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे चार
।। ऽ ।।ऽ।। ऽ ।।ऽ सगण हो, उसे 'तोटक' छन्द कहते हैं।

३ प्रमुदितवदना छन्द—

प्रमुदितवदना भवेन्नौ च रौ—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण
।।। ।।। ऽ ।ऽ ऽ।ऽ और दो रगण हो उसे 'प्रमुदितवदना' छन्द कहते हैं।

अन्वयार्थ—(गुणमणिवपुष श्रेयोजिनस्य) गुणमणिरूपी शरीर के धारी श्रेयासनाथ, (ते पादौ यदि कथम् अपि श्रयन्ति) आपके चरणो का यदि किसी प्रकार से जन आश्रय लेते हैं (ते भवजलधिगता हि श्रेयोर्थिन) वे ससार समुद्र मे पडे हुए भी कल्याण के इच्छुक जन (अमितगुणनिधान धाम याति) अनन्तगुणो की निधिरूप ऐसे स्थान को प्राप्त कर लेते हैं।

अर्थ– हे श्रेयासनाथ ! गुणमणिरूपी शरीरधारी आपके चरणो को यदि किसी प्रकार से भी प्राप्त कर लेवे तो वे ससारसमुद्र मे पडे हुए भी मोक्ष के इच्छुक जन अनन्तगुणो की निधिस्वरूप ऐसे मोक्ष धाम को प्राप्त कर लेते हैं ।।२।।

अन्वयार्थ—(निजसाम्यसुखामृतपानकर) अपने आप समता सुखरूपी अमृत का पान करने वाले हो। (विरत अपि विमुक्तिरमारमण) विरत होकर भी मुक्ति स्त्री के स्वामी हो (सदय अपि कषायरिपून् हतवान्) दयासहित होकर भी कषाय शत्रुओ को जीता है (च) और (कनकाभतनु वपुर्विगत) सुवर्ण छवि शरीरधारी होकर भी शरीर से रहित हो।

अर्थ—हे भगवन् ! आप अपने साम्य सुखरूपी अमृत का पान करने वाले हो, विरत होकर भी मुक्ति रमा के स्वामी हो, करुणा सहित होकर भी कषायशत्रुओ को जीतने वाले हो और सुवर्ण जैसी कांति धारक होकर भी अशीरी हो। यह आपकी महिमा अद्भुत है ।।३।।

अन्वयार्थ—(प्रमुदितमुखविष्णुमित्र पिता) हर्षित मुख वाले विष्णु-मित्र राजा पिता है। (च जिनवरजननी नदावती) और जिनवर की माता नदावती हैं (स्वसमयधिषण) स्वसिद्धान्त की बुद्धि वाले (जिन स्वयभू) ऐसे स्वयभू जिनराज (सपदि मे विमुक्तिश्रियै भवतु) आप शीघ्र ही मुझे मुक्ति लक्ष्मी के लिये होवे।

अर्थ—हे भगवन् ! आपके पिता विष्णुमित्र प्रसन्न वदन वाले हैं, आपकी माता नदावती हैं। आप अपनी आत्मा मे बुद्धि को लगाने वाले है अथवा अपने सिद्धात की बुद्धि वाले हैं, आप स्वयभू हैं, जिन आप शीघ्र ही मेरी मुक्ति सपत्ति के लिए होवे ।।४।।

उज्ज्वला छन्द[1]—(१२ अक्षरी)

कनकखचितसिंहपुरी बभौ ।
त्रिभुवनगुरु-माप्तवती शुभा ॥
अतुलगुणनिधि विगतव्यय ।
श्रयति स हि नरो य इम भजेत् ॥५॥

वैश्वदेवी छन्द[2]—(१२ अक्षरी)

ज्येष्ठे कृष्णे यो गर्भवासः सुषष्ठ्यां ।
एकादश्यां वै फाल्गुने तामसेऽसौ ॥
उत्पन्नो दीक्षां तत्तिथौ एव प्राप्नोत् ।
माघे कृष्णांते केवली स्यान्मुनीशः ॥६॥

अनुष्टुप् छन्द—

श्रावणी पूर्णिमायां यो,
मुक्तिलक्ष्मीमशिश्रियत् ।
श्रेयोऽर्थिभिः श्रितः श्रेयान् ।
श्रीमान् श्रेयः करोतु मे ॥७॥

पचशून्ययुगाष्टाब्द-जीवितो गण्डलाञ्छनः
चापाशीतिसमुत्सेधः, पायात् श्रेयस्करो हि मां ॥८॥

---

१ उज्ज्वला छन्द—

'ननभरसहितामिहितोज्ज्वला'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण, एक भगण और एक रगण होता है, उसे 'उज्ज्वला' छन्द कहते हैं ।
। । । । । । ऽ । । ऽ । ऽ

२ वैश्वदेवी छन्द—

'पंचाश्वैश्छिन्ना वैश्वदेवी ममौ यौ,—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो मगण और और दो यगण हो, उसे 'वैश्वदेवी' छन्द कहते है ।
ऽऽ ऽऽऽ ऽ ।ऽऽ।ऽऽ

अन्वयार्थ—(कनकखचितसिंहपुरी बभौ) सुवर्ण से खचित सिंहपुरी शोभित हुई। (शभा त्रिभुवनगुरु आप्तवती) क्योकि वह कल्याणकारी त्रिभुवन के गुरु को प्राप्त करने वाली हुई। (स हि नर अतुलगुणनिधि) वह ही मनुष्य अतुलगुणो की निधि, (विगतव्यय) नाशरहित स्थान (श्रयति) प्राप्त कर लेते हैं। (य इमं भजेत्) जो इनको भजते हैं।

अर्थ—हे भगवन्! आपके जन्म से शोभित, सुवर्ण की वर्षा से युक्त सिंहपुरी नगरी त्रिभुवन गुरु आपको प्राप्त कर शुभ हो गई। वह मनुष्य अतुलगुणो के खजाने और नाश से रहित ऐसे स्थान को प्राप्त कर लेते हैं जो आपको भजते हैं ॥५॥

अन्वयार्थ—(ज्येष्ठे कृष्णे सुषष्ठ्या यो गर्भवास्) जो जेठ वदी छठ को गर्भ मे आये। (फाल्गुने तामसे एकादश्या वै असौ उत्पन्न) फागुनवदी ग्यारस को उन्होने जन्म लिया। (तत्तिथौ एव दीक्षा प्राप्नोत्) उसी तिथि को प्रभु ने दीक्षा ग्रहण की (माघे कृष्णाते केवली मुनीश स्यात्) माघवदी अमावस के दिन भगवान केवली हो गये।

अर्थ—भगवान् श्रेयासनाथ जेठवदी छठ के के दिन गर्भ मे आये। फागुनवदी ग्यारस के दिन आपका जन्म हुआ। फागुनवदी ग्यारस तिथि मे ही आपने दीक्षा ली एव माघवदी अमावस के दिन भगवान केवली हो गये ॥६॥

अन्वयार्थ—(य श्रावणीपूर्णिमाया मुक्तिलक्ष्मी अशिश्रियत्) जिन्होने श्रावणसुदी पूर्णिमा के दिन मुक्ति सम्पत्ति को प्राप्त किया है। (श्रेयोऽर्थिभि श्रित श्रीमान् श्रेयान्) कल्याण के इच्छुक के द्वारा जिनका आश्रय लिया गया है ऐसे श्रीमान् श्रेयास भगवान (मे श्रेय करोतु) मेरा कल्याण करे।

अर्थ—जिन्होने श्रावण शुक्ला पूर्णिमा के दिन निर्वाण पद प्राप्त किया है। कल्याण के इच्छुक जन जिनका आश्रय लेते हैं ऐसे श्रीमान् श्रेयांस भगवान मेरा कल्याण करे ॥७॥

अन्वयार्थ—(पचशून्ययुगाष्टाब्दजीवित) पाच शून्य, चार और आठ अर्थात् चौरासी लाख वर्ष (८४०००००) की आयु थी, (गडलाछन) गेंडा चिह्न था (चापाशीतिसमुत्सेध) अस्सी धनुष की ऊँचाई थी (हि श्रेयस्कर मा पायात्) ऐसे श्रेयस्कर भगवान मेरी रक्षा करे।

अर्थ—हे भगवन्! आपकी आयु चौरासी लाख वर्ष की थी, गेंडा चिह्न था, आपके शरीर की ऊचाई अस्सी धनुष थी अर्थात् ८०×४=३२० हाथ थी ऐसे कल्याण को करने वाले श्रेयासनाथ मेरी रक्षा करो ॥८॥

कुसुमविचित्रा छन्द[1]—(१२ अक्षरी)

विगतकषायो विगलितमोहः, गतकलिदोषो व्यपगतशोकः ।।
चरणयुगं ते सुखदफलं तत्, त्रिकरणशुद्ध्या शरणमितोऽस्मि ।।९।।

श्री वासुपूज्यजिन स्तोत्र

जलधरमाला छन्द[2]—(१२ अक्षरी)

वासवैः पूजित इति वासुपूज्यः ।
चम्पापुर्यां धनदकृता रत्नानां ।।
आसीद्वृष्टिः खलु जनतापुष्ट्यै सा ।
यस्यैव सभवति स मां सपुष्यात् ।।१।।

नवमालिनी छन्द[3]—(१२ अक्षरी)

सदसि जयावती सुवनितानां । शिरसि विराजते सुतवतीना ।।
सुरखचरैः प्रपूज्यत इहासौ । भवति यका जिनस्य किल माता ।।२।।

---

१ कुसुमविचित्रा छन्द—

'नयसहितौ न्यौ कुसुमविचित्रा'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण, एक यगण, एक नगण, एक यगण हो, उसे 'कुसुमविचित्रा' छन्द कहते हैं ।

I I I I S S I I I I S S

द्वादशाक्षरी छन्द—

२ जलधरमाला छन्द—

'अब्ध्यष्टाभिर्जलधरमालाम्भौस्मौ'—जिस छन्द मे प्रत्येक चरण मे एक मगण, एक भगण, एक सगण और एक मगण होते हैं, उसे 'जलधरमाला छन्द कहते हैं । इसमे चार और आठ पर यति होती है ।

S S S S I I I I S S S S

३ नवमालिका छन्द—

इह नवमालिका नजभयैः स्यात्—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण, एक जगण, एक भगण और एक यगण होता है उसे 'नवमालिका' छन्द कहते हैं ।

I I I I S I S I I I S S

अन्वयार्थ—(विगतकषाय) कषाय से रहित हो (विगलितमोह) मोह से रहित हो, (गतकलिदोष) कलिदोष से रहित हो, (व्यपगतशोक) शोक से रहित हो (ते चरणयुग सुखदफल) आपके चरण युगल सुखदायी फल देने वाले हैं (त्रिकरणशुद्ध्या तत् शरणं इत अस्मि) त्रिकरणशुद्धि से मैं उनकी शरण प्राप्त करता हूं।

अर्थ – हे भगवन् ! आप कषाय से रहित, मोह से रहित, कलिकाल के दोष से रहित और शोक से शून्य हो। आपके चरणयुगल सुखदायी फल को देने वाले हैं। मैं मन वचन काय से आपके चरणो की शरण लेता हूं ॥६॥

वासुपूज्य जिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(वासवै पूजित इति वासुपूज्य) देवो द्वारा पूजित हो इस हेतु से आप 'वासुपूज्य' हो (चपापुर्यां धनदकृता रत्नाना वृष्टि) चपापुरी मे कुबेर द्वारा रत्नो की वर्षा की गई (सा खलु जनतापुष्ट्यै आसीत्) वह निश्चित हो जनता की पुष्टि के लिये थी। (यस्य एव सभवति) जिनका इस प्रकार सब सभव हुआ है (स मा सपुष्यात्) वे मेरा पोषण करें ॥१॥

अर्थ—वासव-देवो द्वारा पूजित होने से आप "वासुपूज्य" इस अन्वर्थ नाम वाले हो। चपापुरी मे कुबेर ने रत्नो की वर्षा की। जिनके निमित्त से सब वैभव हुए हैं वे भगवान् मेरा पोषण करें।

अन्वयार्थ—(सुवनिताना सुतवतीना सदसि) श्रेष्ठ पुत्रवती स्त्रियो की सभा मे (जयावती शिरसि विराजते) माता जयावती मस्तक पर शोभित होती हैं (इह सुरखचरै असौ प्रपूज्यते) इस भूतल पर वह नारी देव और विद्याधरो से भी पूजित होती हैं। (किल यका जिनस्य माता भवति) वास्तव मे जो जिनेन्द्रदेव की माता होती है ॥२॥

अर्थ—श्रेष्ठ पुत्रवती महिलाओ के समूह मे माता "जयावती" शिरोमणि के समान शोभित होती हैं। इस भूतल पर "नारी" देव और विद्या-धरो के द्वारा भी पूजित होती हैं। वास्तव मे जो जिनदेव की माता होती हैं।

प्रभा छन्द[1]—(१२ अक्षरी)

त्रिभुवनसकलं जिनैर्लोकितं ।
निजसमरसतो निजे सुस्थितः ।।
तनुगतममता-विनाशाय त ।
अहमपि जिनपं श्रयामि स्वय ।।३।।

आर्यागीति छन्द—

आषाढेऽसितषष्ठ्यां,
गर्भे यातः सुफाल्गुने जातः ।
कृष्णचतुर्दश्या यो,
जिनरूपधरश्च तत्तिथावेव ।।४।।

माघसिते द्वितयेऽसौ,
केवललक्ष्म्या विभूषितो भगवान् ।
भाद्रपदे सितपक्षे,
शिवकांतां प्राप्तवान् चतुर्दश्यां ।।५।।

अनुष्टुप् छन्द—

पचशून्यद्विसप्ताब्द-
जीवितः कुंकुमच्छविः ।
चापसप्ततिदेहोऽसौ,
वासुपूज्यः पुनातु मां ।।६।।

---

१ प्रभा छन्द—

'स्वरशरविरतिर्ननौ रौ प्रभा'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में दो नगण और दो रगण हो, उसे 'प्रभा' छन्द कहते हैं।
। । । । । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ

इसमे सात और पाँच वर्ण पर यति होती है।

अन्वयार्थ—(जिनै सकलं त्रिभुवनं लोकित) जिनेन्द्रदेव ने सर्व तीन लोक अवलोकित किये हैं। (निजसमरसत निजे सुस्थित) फिर भी अपने समरस भाव से अपने मे ही स्थित हैं। (तनुममता-विनाशनाय) शरीर से ममत्व को दूर करने के लिये ही (अह अपि) मैं भी (स्वय तं जिनपं श्रयामि) स्वयमेव उन जिनेन्द्रदेव का आश्रय लेता हूं ॥३॥

अर्थ—समस्त तीनो लोको को जिनेन्द्रदेव ने अवलोकित किया है फिर भी वे अपने समरस से अपने मे ही स्थित हैं। शरीर ममत्व को दूर करने के लिए मैं भी स्वय ही श्री जिनेन्द्रदेव का आश्रय लेता हूं।

अन्वयार्थ—आषाढे असितषष्ठ्या गर्भे यात·) आषाढ वदी छठ को गर्भ मे आये (सुफाल्गुने कृष्णचतुर्दश्या जात) फागुनवदी चौदश मे जन्म लिया (च य· तत्तिथौ एव जिनरूपधर) और उन्होने इसी तिथि मे ही जिनदीक्षा ली है। (असौ भगवान्) ये भगवान (माघसिते द्वितये केवल-लक्ष्म्या विभूषित) माघ शुक्ला द्वितीया के दिन केवलज्ञान लक्ष्मी से विभूषित हुए। (भाद्रपदे सितपक्षे चतुर्दश्या शिवकाता प्राप्तवान्) भादो सुदी चौदश को मुक्तिस्त्री को प्राप्त किया ॥४-५॥

अर्थ—हे भगवन् ! आप आषाढ वदी छठ को गर्भ मे आये। फागुनवदी चौदश के दिन जन्म लिया पुन. फागुनवदी चौदश के दिन हो जैनेश्वरी दीक्षा ली। अनतर माघ सुदी द्वितीया के दिन केवलज्ञान सम्पत्ति को प्राप्त किया। पुन भादो सुदी चौदश के दिन मोक्षलक्ष्मी को प्राप्त किया है।

अन्वयार्थ—(पचशून्यद्विसप्ताब्दजीवित) बहत्तर लाख वर्ष की आयु थी। (कुकुमच्छवि) कुकुम के समान काति थी (चापसप्ततिदेह·) सत्तर धनुष का शरीर था (असौ वासुपूज्य मा पुनातु) ऐसे वासुपूज्य भगवान मुझे पवित्र करें ॥६॥

अर्थ—हे भगवन् ! आपकी बहत्तर लाख वर्ष की आयु थी, कुकुम के समान आपकी काति थी, सत्तर धनुष का ऊचा शरीर था अर्थात् ७०×४=२८० हाथ था। ऐसे वासुपूज्य भगवान आप मुझे पावन करे।

मालती छन्द[1]—(१२ अक्षरी)

स महिषचिह्नयुतो महेश्वरः ।
नृपवसुपूज्यसुतो जिनेश्वरः ॥
प्रणमति सेन्द्रसुरासुरैः सभा ।
भुवनपतिं किल तं स्तवीम्यहं ॥७॥

श्री विमलजिन स्तोत्र

तामरसछन्द[2] छन्द—(१२ अक्षरी)

विगतरजा विगतारिरहस्यः । विगतमलो विमलो विकलोऽभूत् ॥
विगततनुः कनकाभतनुर्यः । विमलजिनं प्रणमामि सदाहं ॥१॥

भुजगप्रयात छन्द[3]—(१२ अक्षरी)

सुकांपिल्यपुर्यामभूद् रत्नवर्षा । सुधापुण्यपूरैर्जनास्तुष्टिवन्तः ॥
निजानन्दपीयूषपानैकपुष्टः । मुनीनां गणोऽपि प्रहृष्टो बभूव ॥२॥

---

१ मालती छन्द—

'भवति नजावथ मालती जरौ'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक
। । । ।S । । S ।S ।S नगण, दो जगण, एक रगण होता है,
उसे 'मालती' छन्द कहते हैं ।

द्वादशाक्षरी छन्द—

२ तामरस छन्द—

'इति वद तामरस नजजाद् य'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक
। । । । S । । S । । S S नगण दो जगण और एक यगण हो,
उसे 'तामरस' छन्द कहते हैं ।

३ भुजंगप्रयात् छन्द

भुजङ्गप्रयातं भवेद्यंश्चतुर्भिः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे चार यगण
। S S । S S । S S । S S हो उसे 'भुजग प्रयात' छन्द कहते हैं ।

अन्वयार्थ—(स' महिषचिह्नयुत महेश्वरः) वे महिषचिह्न से सहित जिनेश्वर है (नृपवसुपूज्य-सुतः जिनेश्वर.) राजा वसुपूज्य के पुत्र तीर्थंकर हैं (सेन्द्रसुरासुरै सभा प्रणमति) इन्द्र सहित सभी सुर और असुरो से भरी सभा प्रणाम करती है। (त भुवनपति किल अह स्तवीमि) उन भुवनपति की मैं स्तुति करता हूं ॥७॥

अर्थ—हे भगवन् ! आपका चिह्न महिष का है आप महेश्वर हैं, आप राजा वसुपूज्य के पुत्र हैं जिनेश्वर हैं। इन्द्रो से सहित सुर और असुरो का समूह आपको नमस्कार करता है। ऐसे उन भुवन के स्वामी की मैं स्तुति करता हूं।

विमलनाथ जिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(विगतरजा विगतारिहस्य') रज रहित, अरि और रहस्य रहित (विगतमल विमल विकल अभूत्) मल रहित आप विमलनाथ शरीर रहित हो गये। (य विगततनु कनकाभतनु) जो तनु से रहित भी स्वर्ण की छवि वाले हैं। (विमलजिन सदा अह प्रणमामि) उन विमलनाथ का मैं सदा प्रणाम करता हूं ॥१॥

अर्थ—हे विमलनाथ ! आप ज्ञानावरण और दर्शनावरण इन दो रज-कर्मों से रहित हो, अरिमोहनीयकर्म और रहस्य-अतराय कर्म से रहित हो। आप द्रव्य भावकर्म मल रहित 'विमलनाथ' इस सार्थक नाम वाले हो। आप विकल-शरीर से रहित हो। आप विभा रहित होकर भी स्वर्ण समान कांति वाले हो, ऐसे आप विमलनाथ भगवान को मैं नमस्कार करता हूं।

अन्वयार्थ—(सुकापिल्यपुर्यां) कांपिल्यपुरी मे (रत्नवर्षा अभूत्) रत्नो की वर्षा हुई। (जना सुधापुण्यपूरै तुष्टिवन्त) सभी पुण्यरूपी अमृत के प्रवाह से सतुष्ट हो गये। (निजानदपीयूषपानैकपुष्ट) अपनी आत्मा के आनदरूप अमृत के पान से पुष्ट हुआ (मुनीना) मुनियो का (गण अपि) समूह भी (प्रहृष्ट बभूव) विशेषरूप से हर्षित हुआ ॥२॥

अर्थ—हे भगवन् ! कपिलापुरी में कुबेर ने रत्नो की वर्षा की थी उस समय सभी लोग पुण्यरूप अमृत के प्रवाह से सतुष्ट हो गये थे। अपनी आत्मा के आनन्दरूप अमृत के पान से पुष्ट हुए मुनिगण भी परम हर्षित हुये थे।

स्रग्विणी[1]—(१२ अक्षरी)

ज्येष्ठकृष्णे दशम्यां प्रजापुण्यतः ।
गर्भकल्याणपूजा सुरैर्निर्मिता ॥
माघशुक्ले चतुर्थ्यां प्रजातः प्रभुः ।
मेरुशैलेऽभिषेकः सुरेन्द्रैः कृतः ॥३॥

मणिमाला[2]—(१२ अक्षरी)

माघे हि चतुर्थ्यां दीक्षां सितपक्षे ।
जग्राह मुनीन्द्रो मोहस्य विजेता ॥
माघे सितषष्ठ्यां कैवल्यरमा सा ।
हर्षाद् विमलं त्वामागत्य वृणीते ॥४॥

अनुष्टुप्—

षष्टिलक्षमिताब्दायुः, षष्टिचापतनुप्रभः ।
अष्टापदप्रभः सोऽयं, जयश्यामात्मजो जिनः ॥५॥

आर्यागीति—

आषाढकृष्णपक्षे, ह्यष्टम्यां यो मुक्तिवल्लभामगमत् ।
क्रोडचिह्नयुक्तोऽसौ, विमलजिनो मम मनः पवित्रं कुर्यात् ॥६॥

---

१ स्रग्विणी छन्द—

'रैश्चतुर्भिर्युता स्रग्विणी सम्मता'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे चार रगण हो उसे 'स्रग्विणी' छन्द कहते हैं ।
ऽ ।ऽऽ। ऽऽ ।ऽ ऽ ।ऽ

२ मणिमाला छन्द—

त्यौ त्यौ मणिमाला छिन्ना गुहवक्त्रैः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक तगण, एक यगण, एक तगण, एक यगण हो, उसे 'मणिमाला' छन्द कहते हैं ।
ऽ ऽ ।।ऽऽ ऽऽ।।ऽऽ

अन्वयार्थ—(ज्येष्ठकृष्णे दशम्यां प्रजापुण्यतः) जेठवदी दसमी को प्रजा के पुण्य से (गर्भकल्याण-पूजा सुरैः निर्मिता) गर्भ कल्याणक पूजा देवो ने की थी। (माघशुक्ले चतुर्थ्यां प्रजात प्रभुः) माघशुक्ला चौथ को प्रभु का जन्म हुआ (मेरुशैले सुरेन्द्रैः अभिषेकः कृतः) मेरुपर्वत पर इन्द्रों ने अभिषेक किया ॥३॥

अर्थ— हे भगवन्! जेठवदी दशमी को आपका गर्भकल्याणक देवो ने मनाया था और माघ सुदी चौथ को आपका जन्म हुआ तब इन्द्रो ने मेरु पर्वत पर अभिषेक किया था।

अन्वयार्थ—(माघे हि सितपक्षे चतुर्थ्यां मोहस्य विजेता मुनीन्द्रः दीक्षां जग्राह) माघ सुदी चौथ को मोह के विजयी मुनिनाथ ने दीक्षा ले ली। (माघे सितषष्ठ्या सा कैवल्यरमा हर्षात् आगत्य त्वां विमलं वृणीते) माघ सुदी छठ को उस केवल लक्ष्मी ने हर्ष से आकर आप विमलनाथ को वरण किया ॥४॥

अर्थ—हे भगवन्! माघ सुदी चौथ को मोह के विजयी मुनीन्द्र ने दीक्षा ले ली। माघ सुदी छठ का उस केवलश्री ने आकर हर्ष से आप विमलनाथ को वरण किया।

अन्वयार्थ—(षष्टिलक्षमिताब्दायुः) साठ लाख वर्ष की आयु थी, (षष्टिचापतनुप्रभ) साठ धनुष प्रमाण की शरीर की ऊँचाई थी, (अष्टापदप्रभ) सुवर्ण के सदृश आपकी कांति थी, (सः अयं जयश्यामात्मजः जिनः) वे ये जयश्यामा माता के पुत्र जिन भगवान् हैं ॥५॥

अर्थ—हे भगवन्! आपकी साठ लाख वर्ष की आयु थी, साठ धनुष प्रमाण शरीर की ऊँचाई थी अर्थात् ६०×४=२४० हाथ थी। सुवर्ण के समान शरीर की छवि है। ऐसे वे जयश्यामा के पुत्र जिन भगवान् हैं।

अन्वयार्थ—आषाढकृष्णपक्षे हि अष्टम्यां) आषाढवदी अष्टमी के दिन (मुक्तिवल्लभां अगमत्) मुक्ति लक्ष्मी को प्राप्त किया। (असौ क्रोडचिह्नयुक्त विमलजिन) वे सूकरचिह्न से युक्त विमलनाथ भगवान् (मम मनः पवित्रं कुर्यात्) मेरा मन पवित्र करे ॥६॥

अर्थ—हे भगवन्! आषाढवदी अष्टमी के दिन मुक्ति स्त्री का वरण किया। आपका चिह्न सूकर का है, ऐसे वे विमलनाथ मेरा मन पवित्र करे।

प्रमिताक्षरा[1]—(१२ अक्षरी)

कृतवर्मनंदन ! विभो ! सततं ।
भुवि मगलं वितनुतादमलं ॥
मम चित्तजं मलमपाकुरुतात् ।
विमलश्रिय विमल ! मे दिशतात् ॥७॥

श्री अनन्तजिन स्तोत्र

जलोद्धतगति[2]—(१२ अक्षरी)

निजात्मसमतारसैर्गुणनिधि ।
भृत सुखसुधाकरं शिवमयं ॥
उपैमि तव भक्तितो जिनप ! त्वा ! ।
अनन्तजिन ! ते नमोऽस्तु सततं ॥१॥

प्रियवदा[3]—(१२ अक्षरी)

त्रिविधकर्ममलदोषनाशकृत् । त्रिभुवनेऽग्रशिखरे विराजते ॥
त्रिभुवनाधिप ! सदा पुनीहि मां । सहजमात्मजसुखं प्रदेहि मे ॥२॥

---

१ प्रमिताक्षरा छन्द—
'प्रतिमाक्षरा सजससैरुदिता'—जिस छद के प्रत्येक चरण मे एक सगण,
। । S । S । । । S । । S एक जगण और दो सगण होते हैं, उसे 'प्रमिताक्षरा' छन्द कहते हैं ।

द्वादशाक्षरी छन्द—
२ जलोद्धतगति—
रसै जसजसा जलोद्धतगतिः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक
। S । । । S । S । । । S जगण, एक सगण, एक जगण और एक सगण हो, वह 'जलोद्धत गति' छन्द है । इसमे छह अक्षरो पर विराम होता है ।

३ प्रियवदा—
'भुवि भवेन्नभजरैः प्रियंवदा'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण,
। । । S । । । S । S । S एक भगण, एक जगण और एक रगण होता है, उसे 'प्रियवदा' छन्द कहते हैं ।

अन्वयार्थ—(कृतवर्मनंदन ! विभो !) हे कृतवर्मा राजा के पुत्र ! हे विभो ! (भुवि सततं अमल मंगलं वितनुतात्) पृथ्वी पर सतत अमल मंगल विस्तृत करो। (मम विरज मलं अपाकुरुतात्) मेरे मन के मल को दूर करो। (विमल ! मे विमलश्रियं दिशतात्) हे विमलनाथ ! मुझे विमल-लक्ष्मी प्रदान करो ॥७॥

अर्थ—हे कृतवर्मा राजा के पुत्र ! हे विभो ! आप इस भूतल पर हमेशा अमल मंगल विस्तृत करो। मेरे हृदय के उत्पन्न हुए मल को दूर करो। हे विमलनाथ ! मुझे विमललक्ष्मी प्रदान करो।

अनतनाथ जिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(निजात्मसमतारसै भृत गुणनिधिं) अपनी आत्मा के समतारस से परिपूर्ण गुणो के भण्डार (सुखसुधाकर शिवमय त्वां) सुखामृत की खान शिवस्वरूप आपका (तव भक्तित उपैमि) मैं आपकी भक्ति से आश्रय लेता हूँ। (जिनप ! अनतजिन !) हे जिनदेव ! हे अनतजिन ! (ते सतत नमोऽस्तु) आपको सदा नमस्कार हो ॥१॥

अर्थ—हे जिनसूर्य ! आप अपनी समतारस से भरे हुये गुणो के भडार निज सुखामृत की खान ऐसे आपका मैं भक्ति से आश्रय लेता हूँ। हे अनतनाथ ! हमेशा आपको नमस्कार होवे।

अन्वयार्थ—(त्रिविधकर्ममलदोषनाशकृत्) तीन प्रकार के कर्म मल के दोष को नष्ट करने वाले (त्रिभुवने अग्रशिखरे) तीन भुवन के अग्र शिखर पर (विराजते) विराजमान हो। (त्रिभुवनाधिप !) हे तीन लोक के नाथ ! (सदा मां पुनीहि) सदा मुझे पवित्र करो (सहजं आत्मजसुख मे प्रदेहि) सहज आत्मा के सुख को मुझे प्रदान करो ॥२॥

अर्थ—तीन प्रकार के कर्ममल दोष को नष्ट करने वाले आप तीन लोक के अग्रभाग पर विराजमान हो। हे तीन लोक के स्वामिन् ! सदा मुझे पवित्र करो और सहज आत्मा से उत्पन्न हुये सुख को मुझे प्रदान करो।

ललिता छन्द[1]—(१२ अक्षरी)

यः सिंहसेननृपजः सुकार्तिके । गर्भेऽसिते प्रथमवासरे त्वितः ॥
तत्र त्रिबोधयुत एव पुण्यवान् । तस्य प्रभावबशतः प्रभुः बभौ ॥३॥

क्षमा छन्द[2]—(१३ अक्षरी)

जिनजनिमसिता ज्येष्ठजा द्वादशी ।
त्रिदशपतिनुतां प्राप्तवत्यर्थिनां ॥
अतुलविभवदा-तत्तिथावतहृत् ।
व्रतगुणनिधिमुक् दीक्षितोऽभूज्जिनः ॥४॥

प्रहर्षिणी[3] छन्द—(१३ अक्षरी)

चैत्रस्यासित इति तीर्थकर्तुरेक ।
कैवल्य विलसितमतिमे दिने वै ॥
संप्राप्तः स्वशिवपदं स तत्तिथौ च ।
त्वद्भक्तेः फलमिदमेव मेऽपि भूयात् ॥५॥

---

१ ललिता छन्द—

धीरैरभाणि ललिता तभौ जरौ—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक
ऽ ऽ। ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ तगण, एक भगण, एक जगण और एक रगण होता है, उसे 'ललिता' छन्द कहते हैं।

त्रयोदशाक्षरी छन्द

२ क्षमा छन्द—

तुरगरसयतिनौ ततौ ग क्षमा— जिस छन्द के प्रत्येक चरण में दो
।।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽ नगण, दो तगण और एक गुरु हो, उसे क्षमा' छन्द कहते हे। इसमे सात और छह वर्णों पर यति है।

३. प्रहर्षिणी छन्द—

म्नौ ज्रौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीऽयम्—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में
ऽ ऽ ऽ ।।।।ऽ।ऽ।ऽ ऽ एक मगण, एक नगण, एक जगण, एक रगण और एक गुरु होता है, उसे 'प्रहर्षिणी' छन्द कहते हैं। इसमे तीन और दश वर्णों पर विराम होता है।

अन्वयार्थ—(य· सिहसेननृपज·) जो सिंहसेन राजा के पुत्र थे (तु सुकार्तिके असिते प्रथमवासरे गर्भे इत·) पुन· कार्तिक वदी एकम के दिन गर्भ मे आये। (तत्र त्रिबोधयुत एव पुण्यवान्) वहाँ वे तीन ज्ञान से युक्त ही पुण्यवान् थे (तस्य प्रभाववशत प्रसू· बभौ) उसके प्रभाव से माता शोभायमान हुई ॥३॥

अर्थ– हे भगवन्! आप सिंहसेन राजा के पुत्र थे। कार्तिक वदी एकम के दिन आप गर्भ में आये तब वहा गर्भ में भी आप तीन ज्ञान के धारी पुण्यवान् थे। आपके प्रभाव से आपकी माता भी शोभायमान हुई थी।

अन्वयार्थ—(असिता ज्येष्ठजा द्वादशी) जेठ वदी बारस ने (त्रिदशपतिनुता जिनजनि) देवेन्द्रो से नमस्कृत जिनजन्म को (प्राप्तवती) प्राप्त किया। (अर्थिना अतुलविभवदा) इच्छुक जनो को अतुल विभव देने वाली (तत्तिथौ अतहृत्) उसी तिथि को अतक का नाश करने वाले (व्रतगुणनिधिभुक्) व्रत गुण निधि के भर्ता (जिन· दीक्षित अभूत्) जिनेन्द्रदेव दीक्षित हो गये ॥४॥

अर्थ—जेठ वदी बारस को देवेन्द्रो से नमस्कृत भगवान का जन्म हुआ था। इच्छुकजनो को अतुल वैभव देने वाली जेठवदी बारस को ही आपने दीक्षा ली। आप अतक के नाशक व्रत गुण निधि के स्वामी जिनराज थे।

अन्वयार्थ—(चैत्रस्य असिते अन्तिमदिने वै इति तीर्थकर्तु) चैत्र वदी अमावस के दिन तीर्थंकर भगवान् को (एक कैवल्य विलसित) एक केवलज्ञान प्रगट हुआ। (च तत्तिथौ स स्वशिवपद सप्राप्त) और उसी तिथि मे भगवान् को निजमोक्ष पद प्राप्त हुआ। (त्वद्भक्ते इदं एव फलं मे अपि भूयात्) आपकी भक्ति से यही फल मुझे भी प्राप्त होवे ॥५॥

अर्थ—चैतवदी अमावस के दिन तीर्थंकर भगवान् ने एक–असहाय केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। पुन इसी चैतवदी अमावस को ही भगवान् ने मोक्षपद पाया। हे भगवन्! आपकी भक्ति से यही मोक्षफल मुझे भी प्राप्त होवे।

अनुष्टुप्—

त्रिंशल्लक्षसमात्मायुः पचाशच्चापसत्तनुः ।
कनत्कनकसंकाशः त्वमंतकांतक गतः ॥६॥

अनंतगुणराशिस्त्वं, सेधालाञ्छनलाञ्छितः ।
देहि मेऽनंतधीसौख्यं, [1]जयश्यामात्मज ! प्रभो ! ॥७॥

श्री धर्मजिन स्तोत्र

अतिरुचिरा छन्द[1]—(१३ अक्षरी)

महामुनिर्व्रतगुणगुप्तिधर्मयुक् ।
सुतीर्थकृत् विकसितभव्यपंकजः ॥
सभा बभौ सुरनरसेविता च ते ।
मनोम्बुजे मे वस धर्मनाथ ! भोः ! ॥१॥

त्रयोदशाक्षरी छन्द—

१ अतिरुचिरा छन्द—

चतुर्ग्रहैरतिरुचिरा जभस्जगा।—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक
। ऽ । ऽ । । । । ऽ । ऽ । ऽ जगण, एक भगण, एक सगण, एक जगण और एक गुरु होता है, उसे 'अतिरुचिरा' छन्द कहते हैं। इसमे चार और नव अक्षरो पर विराम होता है।

---

[1]१. उत्तरपुराण मे जयश्यामा नाम है अन्यत्र 'लक्ष्मीमती' नाम आया है।

अन्वयार्थ—(त्रिशत्लक्षसमात्मायु.) तीस लाख वर्ष की आपकी आयु थी, (पचाशद् चापसत्तनु.) पचास धनुष की आपकी ऊचाई थी, (कनत्कनकसकाश.) चमकते हुए सुवर्ण के समान आपका वर्ण था, (त्व अन्तकातक गत:) आपने यमराज का अन्त कर दिया है। (त्व अनतगुण-राशि) आप अनतगुणो को राशि हैं (सेधालाछनलाछित) सेही चिह्न से चिह्नित हैं। (जयश्यामात्मज ! प्रभो !) हे जयश्यामा के पुत्र ! हे प्रभो ! (मे अनतधीसौख्य देहि) मुझे अनत ज्ञान और अनत सौख्य प्रदान करो ॥६॥

अर्थ—हे प्रभो ! आपकी आयु तीस लाख वर्ष थी, पचास धनुष आपकी ऊँचाई थी अर्थात् ५०×४=२०० हाथ थी। सुन्दर सुवर्ण के समान शरीर का वर्ण था, आप अतक—यमराज के लिये अंतक—यमराज थे अर्थात् मृत्यु को मारने वाले थे। हे भगवन् ! आप अनतगुणो की राशि थे, आपका चिह्न सेही था। आपकी माता का नाम जयश्यामा था—इनका दूसरा नाम लक्ष्मीमती भी है। ऐसे हे भगवन् ! आप मुझे अनत ज्ञान और अनंत सौख्य प्रदान करो।

श्री धर्मजिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(महामुनि व्रतगुणगुप्तिधर्मयुक्) आप महामुनि हैं, व्रत, गुण और गुप्तिरूप धर्म से युक्त हैं, (सुतीर्थकृत् विकसितभव्यपकज) समीचीन तीर्थ के कर्ता हैं और भव्य रूपी कमलो को विकसित करने वाले हैं (सुरनर-सेविता ते च सभा बभौ) देवो और मनुष्यो से सेवित आपकी सभा शोभित हुई थी। (भो धर्मनाथ ! मे मनोम्बुजे वस) हे धर्मनाथ भगवन् ! आप मेरे हृदय कमल मे निवास करो ॥१॥

अर्थ—आप महामुनि हो, व्रत, गुण और गुप्तिरूप धर्म से सहित हो, सच्चे धर्मतीर्थ के कर्ता हो और भव्यरूपी कमलो को विकसित करने वाले हो। आपकी सभा देवो और मनुष्यो से सेवित होकर शोभायमान होती थी। हे धर्मनाथ तीर्थंकर ! आप मेरे हृदय कमल मे निवास करो।

चंचरीकावली छन्द[1]—(१३ अक्षरी)

मता धन्या मध्ये योषितां सुप्रभा सा ।
सुरत्नानां वृष्ट्या रत्नपूः रत्नसूः स्यात् ।।
त्रयोदश्यां राधे यो सिते गर्भमाप्नोत् ।
स धर्मेशो नित्यं मे मनोब्जे हि तिष्ठेत् ।।२।।

मंजुभाषिणी छन्द[2]—(१३ अक्षरी)

नृपभानुराजसुत एष विश्रुतः ।
सुसिते त्रयोदशदिने हि माघजे ।
जननोत्सवः सुरगणाधिपैः कृतः ।
वरतत्तिथौ च किल दीक्षितो जिनः ।।३।।

मत्तमयूर छन्द[3]—(१३ अक्षरी)

पौषे शुक्ले, केवलबोधेन सुपूर्णा ।
पूर्णा जाता, सा तिथिरेषा सुखकर्त्री ।।
ज्येष्ठे शुक्ले, नाथ ! चतुर्थ्यां शिवभर्ता ।
ज्ञानानंद, स्वात्मसुख मे कुरु देव ! ।।४।।

---

१ चंचरीकावली छन्द—
'यमौ रौ विख्याता चंचरीकावली ग.'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक यगण, एक मगण, दो रगण और एक गुरु होता है, उसे 'चंचरीकावली' छन्द कहते हैं ।
।S S S S S S।S S।S S

२. मंजुभाषिणी छन्द—
'सजसा जगौ भवति मंजुभाषिणी'—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक सगण, एक जगण, एक सगण, एक जगण और एक गुरु हो, उसे 'मंजुभाषिणी' छन्द कहते हैं ।
।।S।S।।।S।S। S

३ मत्तमयूर छन्द—
वेदैरंध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम्—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण, एक तगण, एक यगण, एक सगण और एक गुरु होता है, उसे 'मत्तमयूर' छन्द कहते हैं । इसमे चार वर्ण और नव वर्णों पर यति होती है ।
SSSSS ।।S S।।S S

अन्वयार्थ—(योषितां मध्ये सा सुप्रभा धन्या मता) नारियों के मध्य में वे सुप्रभा माता धन्य मानी गई हैं। (सुरत्नानां वृष्ट्या रत्नपू रत्नसू. स्यात्) श्रेष्ठ रत्नो की वर्षा से वह रत्नपुरी नगरी रत्नों को उत्पन्न करने वाली हुई थी। (राधे सिते त्रयोदश्या य गर्भं आप्नोत्) वैशाख सुदी तेरस के दिन जो गर्भ मे आये थे (स धर्मेश नित्य हि मे मनोऽब्जे तिष्ठेत्) वे धर्मनाथ ईश्वर नित्य ही मेरे हृदय कमल मे स्थित होवें ॥२॥

अर्थ—महिलाओ के मध्य मे वे "सुप्रभा" माता धन्य हो गई हैं। उत्तम रत्नो की वर्षा से वह रत्नपुरी नगरी रत्नों को जन्म देने वाली हो गई थी। अथवा तीर्थंकर पुत्र रत्न को जन्म देने वाली हुई। वैशाख सुदी तेरस के दिन जो प्रभु गर्भ मे आये थे वे धर्मनाथ भगवान् सदैव मेरे हृदय कमल मे विराजमान हो।

अन्वयार्थ—(माघजे सुसिते त्रयोदशदिने हि) माघ सुदी तेरस के दिन ही (नृपभानुराजसुत एष विश्रुत) आप भानुराज महाराज के पुत्र प्रसिद्ध हुये। (जन्मोत्सव सुरगणाधिपै कृत) आपका जन्म महोत्सव देवो ने और इद्रो ने किया। (च किल वरतीत्थौ जिन दीक्षित) और उसी श्रेष्ठ तिथि मे आप जिनराज ने दीक्षा ली ॥३॥

अर्थ—हे भगवन्! माघसुदी तेरस के दिन आपका जन्म हुआ आपके पिता का नाम भानुराज था। देवो ने और इद्रो ने आपका जन्म महोत्सव मनाया था। अनतर माघसुदी तेरस के दिन ही आपने जैनेश्वरी दीक्षा ली थी।

अन्वयार्थ—(पौषे शुक्ले पूर्णा केवलबोधेन सुपूर्णा) पौष शुक्ला पूर्णिमा केवलज्ञान से सुपूर्णा होकर (सा एषा तिथि. सुखकर्त्रीजाता) सो यह तिथि सुख करने वाली हो गई। (नाथ! ज्येष्ठे शुक्ले चतुर्थ्यां शिवभर्ता) हे नाथ! जेठ सुदी चौथ को आप मुक्ति के स्वामी हो गये। (देव! ज्ञानानद स्वात्मसुख मे कुरु) आप शीघ्र ही ज्ञान और आनन्द समेत स्वात्मसुख मुझे देवो ॥४॥

अर्थ—हे भगवन्! पौष सुदी पूर्णातिथि आपके केवलज्ञान से सुपूर्णा होकर सुख देने वाली हो गई। हे नाथ! जेठ सुदी चौथ को आपने मोक्ष प्राप्त किया है। आप शीघ्र ही मुझे ज्ञान और आनद समेत स्वात्म-सुख प्रदान करो।

अनुष्टुप् छन्द—(१३ अक्षरी)

दशलक्षसमाजीवी, तप्तकांचनसच्छविः ।

साष्टैकहस्तसद्देहो, स जिनः वज्रलाञ्छनः ॥५॥

चंद्रिका छन्द[1]—(१३ अक्षरी)

जिनवर ! हृदि मे पादपंकजं ते ।

मम खलु हृदय तेऽङ्घ्रिपकजे स्यात् ॥

नहि भवति च यावत् निजात्मसिद्धिः ।

मयि भवतु हि तावत् त्वदङ्घ्रिभक्तिः ॥६॥

श्री शान्तिनाथ स्तोत्र

वसंततिलका छन्द[2]—(१४ अक्षरी)

श्रीविश्वसेननृपजो भुवि शांतिकारी ।

शांत्यैषिणां वितनुते किल पूर्णशांति ॥

ऐरावती सुतवती भुवनैकमाता ।

देवैर्नुता जगति मंगलमातनोतु ॥१॥

---

१ चंद्रिका—

ननततगुरुभिश्चंद्रिकाश्वर्तुभिः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण एक तगण, एक रगण और एक गुरु हो उसे 'चद्रिका' छन्द कहते है। इसमे चार वर्ण पर यति है। अथवा पाठातर[1] की अपेक्षा छह और सात वर्णो पर यति मानी है।

I I I I I I S S I S I S S

चतुर्दशअक्षरी छन्द—

२ वसततिलका छन्द—

उक्ता वसन्ततिलका तभजाजगौ गः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक तगण, एक भगण, दो जगण और दो गुरु हो, उसे 'वसत-तिलका' छन्द कहते हैं।

S S I S I I I S I I S I S S

---

१ पाठातर—'चद्रिकाश्वषड्भि'।

अन्वयार्थ—(दशलक्षसमाश्चजीवी) दस लाख वर्ष की आपकी आयु थी, (तप्तकाञ्चनसमच्छवि.) तपाये हुये स्वर्ण सदृश आपकी काति थी। (खाष्टैक-हस्तसद्देह) शून्य आठ और एक हाथ का आपका देह था अर्थात् एक सौ अस्सी हाथ की ऊचाई थी। (सः जिन वज्रलाछन) वे जिनेंद्रदेव वज्र चिन्ह से चिन्हित हैं ॥५॥

अर्थ—आपकी आयु दस लाख वर्ष की थी, आपके शरीर का वर्ण तपाये स्वर्ण सदृश था आपके शरीर की ऊचाई एक सौ अस्सी हाथ थी अर्थात् ४५ धनुष × ४ = १८० हाथ थी और आपका चिन्ह वज्र का था।

अन्वयार्थ—(जिनवर ! ते पादपकजं मे हृदि) हे जिनदेव ! आप के चरणकमल मेरे हृदय मे (खलु मम हृदय ते अघ्रिपकजे स्यात्) और मेरा हृदय आपके चरणकमल मे लीन रहे। (यावत्निजात्मसिद्धि च नहि भवति) जब तक अपनी आत्मा की सिद्धि नही होती है (तावत् हि मयि त्वदघ्रिभक्ति भवतु) तब तक ही मुझ मे आपके चरणकमल ोकी भक्ति बनी रहे ॥६॥

अर्थ—हे जिनवर ! आपके चरणकमल मेरे हृदय मे स्थित रहे और मेरा हृदय आपके चरण कमल मे लीन रहे। जब तक मुझे अपनी आत्मा की सिद्धि नही होती है तब तक ही मुझ में आपके चरणकमलो की भक्ति बनी रहे।

शांतिनाथ जिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(श्री विश्वसेननृपज भुवि शांतिकारी) श्री विश्वसेन राजा के पुत्र भूतल पर शाति करने वाले हैं (शात्यैषिणा किल पूर्णशाति वितनुते) शांति के इच्छुक जनों को पूर्ण शाति देते हैं। (देवै. नुता भुवनैक-माता सुतवती ऐरावती) देवों से नमस्कृत, भुवन की एकमाता, पुत्रवती ऐरावती (जगति मगलमातनोतु) जगत् मे मगल करो ॥१॥

अर्थ—श्री विश्वसेन राजा के पुत्र शातिनाथ भगवान् इस जगत् मे शाति के करने वाले हैं और शाति के इच्छुक जनो को पूर्णशाति देने वाले हैं। आपकी माता का नाम ऐरावती है वे पुत्रवती माता जगत् की एक माता हैं, देवो से पूज्य हैं वे जगत् मे मगल करें।

या सप्तमीतिथिरभूदसिते नभस्ये[1] ।
गर्भागमो जगति मंगलकृच्च तस्यां ॥
ज्येष्ठेऽसिते तिथिरभूत् सुचतुर्दशी सा ।
तस्यां जनिश्च जिनलिंगधरोऽपि भगवान् ॥२॥

पौषे सिते सकलबोधरविः दशम्यां ।
धर्मामृतैर्भविजनानभिषिक्तवान् यः ॥
दीक्षातिथौ शिवरमां परिपूर्णसौख्यां ।
सम्मेदशैलशिखरे स्वयमाप्नुतेऽसौ ॥३॥

असंबाधा छन्द[1]—(१४ अक्षरी)
शांतिः शं कुर्यात्, त्रिभुवनजनतायै वै ।
वाणी ते पुष्यात्, कलिमलहरिणी भव्यान् ॥
लोकांतं व्याप्तं तव धवलयशः स्वामिन् ! ।
शांतीशः कुर्यात् मम मनसि सदा शांतिं ॥४॥

---

१ असंबाधा छन्द—
म्तौ न्सौ गावक्षग्रहविरतिरसंबाधा—
ऽ ऽ ऽ ऽऽ। । । । । । ऽऽऽ
जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक एक मगण, एक तगण, एक नगण, एक सगण और दो गुरु हो, उसे 'असंबाधा' छन्द कहते हैं। इसमे पाच और नव वर्णों पर विराम होता है।

---

१. भाद्रपदे । "स्युर्नभस्यप्रोष्ठपदभाद्रभाद्रपदा" इत्यमरकोषे । नभस्ये–भाद्रपदे उत्तरपुराणे ।

अन्वयार्थ—(नभस्ये असिते या सप्तमी तिथिः अभूत्) भादों वदी मे जो सप्तमी तिथि है (च तस्या गर्भागम. जगति मंगलकृत्) उसमे आपका गर्भागम जगत् मे मंगलकारी हुआ। (ज्येष्ठे असिते सा सुचतुर्दशी तिथिः अभूत्) जेठ वदी चौदश तिथि थी, (तस्यां भगवान् जनि: च जिनलिंगधरः अपि) उसमे भगवान् जन्मे और उस तिथि में जिनमुद्रा धारण करी ॥२॥

अर्थ—भादों वदी सप्तमी को भगवान् का गर्भकल्याणक हुआ, वह गर्भकल्याणक जगत् में मंगलकारी है। जेठवदी चौदश को भगवान् का जन्म हुआ और उसी जेठ वदी चौदश को भगवान् ने जैनेश्वरी दीक्षा ली है।

अन्वयार्थ—(पौषे सिते दशम्यां सकलबोधरविः) पौष शुक्ला दसमी को केवलज्ञानी सूर्य हुये। (य धर्मामृतैर्भविजनान् अभिषिक्तवान्) जिन्होंने धर्मामृत के द्वारा भव्यजनो की अभिषिचित किया। (दीक्षातिथौ सम्मेद-शैलशिखरे परिपूर्णसौख्या शिवरमा) जेठ वदी चौदस को ही सम्मेद-शिखरपर्वत से परिपूर्ण सुखस्वरूप मुक्तिरमणी को (असौ स्वय आप्नुते) इन्होने स्वय प्राप्त कर लिया ॥३॥

अर्थ—पौष शुक्ला दसमी को भगवान् को केवलज्ञान रूपी सूर्य का उदय हो गया। तब उन्होने धर्मामृत के द्वारा सर्व भव्य जीवो को सीचकर सुखी किया। अनतर जेठवदी चौदस को ही सम्मेदशिखर से मोक्ष प्राप्त कर परिपूर्ण सुखी हो गये।

अन्वयार्थ—(शांति त्रिभुवनजनतायै वै शं कुर्यात्) शांतिनाथ भगवान् त्रिभुवन की जनता के लिये सुख प्रदान करो। (कलिमलहरिणी ते वाणी भव्यान् पुष्यात्) कलिमल को दूर करने वाली आपकी वाणी भव्यो को पुष्ट करे। (स्वामिन्! तव धवलयश लोकांतं व्याप्त) हे स्वामिन्! आपका उज्ज्वल यश लोक के अत तक व्याप्त है। (शांतीश. मम मनसि सदा शांति कुर्यात्) शांतिनाथ भगवान् मेरे मन मे सदा शांति करो ॥४॥

अर्थ—हे शांतिनाथ भगवन्! आप तीन लोक की जनता को सुख प्रदान करें। कलिकाल के दोष को दूर करने वाली आपकी वाणी भव्यों को पोषित करे। हे स्वामिन्! आपका धवल यश लोक के अत तक व्याप्त है। श्रीशांतिनाथ जिनेश्वर! मेरे मन मे सदा शांति प्रदान करे।

अपराजिता छन्द[1]—(१४ अक्षरी)

निजसुखसदनं, विभो ! तव शासनं ।
भवभयमथनं, च ते चरणाम्बुजं ॥
शिवसुखजननं, जिनेन्द्रमुखाम्बुज ।
निरुपमसुखदा, प्रभो ! तव वाक्सुधा ॥५॥

प्रहरणकलिका छन्द[2]—(१४ अक्षरी)

समसुखजननं, जनिमृतिहननं । कलिमलविलयं, शिवसुखनिलयं ॥
विकसितवदनं, कुवलयनयनं । जिनवरचरणं, मम सुखफलदं ॥६॥

अनुष्टुप् छन्द—

चत्वारिंशद्धनुर्देहः, आयुर्लक्षैकवर्षभृत् ।
कनकच्छविचक्रीशः, प्रद्युम्नश्रियमाप्तवान् ॥७॥
चतुःकल्याणपूजाभिः, पूजितो हस्तिनापुरे ।
षोडश तीर्थकृत् चक्री, पंचमो मृगलाञ्छनः ॥८॥

---

१ अपराजिता छन्द—

ननरसलघुगैः स्वरैरपराजिता— जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण, एक रगण, एक सगण, एक लघु और एक गुरु वर्ण होता है, उसे 'अपराजिता' छन्द कहते हैं। इसमे सात-सात वर्णों पर यति है।

। । । । । । ऽ । ऽ । । ऽ । ऽ

२ प्रहरणकलिका छन्द—

ननभनलगिति प्रहरणकलिका— जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण, एक भगण, एक नगण एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'प्रहरणकलिका' छन्द कहते हैं। इसका 'प्रहरणकलिता' नाम भी है।

। । । । । । ऽ । । । । । । ऽ

अन्वयार्थ—(विभो ! तव शासन निजसुखसदन) हे प्रभो ! आपका शासन निजआत्मा के सुख का महल है । (च ते चरणांबुज भवभयमथन) और आपके चरणकमल संसार के भय को मथन करने वाले हैं । (जिनेंद्र-मुखाबुजं शिवसुखजनन) जिनेंद्रदेव का मुखकमल मोक्ष सुख को देने वाला है । (प्रभो ! तव वाक्सुधा निरुपमसुखदा) हे प्रभो ! आपके वचनामृत निरुपम सुख को देने वाले हैं ।।५।।

अर्थ—हे विभो ! आपका शासन निजसुख का स्थान है, और आपके चरणकमल संसार के भय को दूर करने वाले हैं, आप जिनेंद्रदेव के मुख कमल का दर्शन मोक्ष सुख को देने वाला है । हे प्रभो ! आपके वचन पीयूष निरुपम सुख को देने वाले हैं ।

अन्वयार्थ—(कुवलयनयन विकसितवदनं) कमल के समान खिले हुये नेत्रवाला ऐसा आपका श्रीमुख (समसुखजननज निमृति हननं) साम्य सुख को उत्पन्न करने वाला है, जन्म-मरण को नष्ट करने वाला है, (कलिमलविलयं शिवसुखनिलयं) पापमल को दूर करने वाला है और शिवसुख का स्थान है ।।६।।

अर्थ—हे भगवान् ! कमल के समान नेत्र वाले ऐसे आपके विकसित श्रीमुख का दर्शन साम्य सुख को उत्पन्न करने वाला है, जन्म-मरण को दूर करने वाला है, पापरूपी मल को समाप्त करने वाला है और मोक्षसुख का स्थानस्वरूप है, अर्थात् मोक्षसुख को देने वाला है ।

अन्वयार्थ—(चत्वारिंशत् धनुर्देह) चालीस धनुष का शरीर है, (आयु-र्लक्षैकवर्षभृत्) एक लाख वर्ष की आयु है, (कनकच्छविचक्रीश) सुवर्ण के समान आप चक्रवर्ती की कांति है । (प्रद्युम्नश्रिय आप्तवान्) कामदेव के रूप सौंदर्य के धारक हो । (हस्तिनापुरे चतु कल्याणपूजित) हस्तिनापुर मे चार कल्याणक से पूजित हो । (षोडश तीर्थकृत्) सोलहवें तीर्थंकर (पंचम चक्री) पांचवे चक्रवर्ती हो (मृगलांछन) आपका मृग का चिन्ह है ।।७-८।।

अर्थ—हे भगवन् ! आपके शरीर की ऊँचाई चालीस धनुष है, अर्थात् ४० × ४ = १६० हाथ है आयु एक लाख वर्ष की है, आप चक्रवर्ती का वर्ण सुवर्ण सदृश है और आप कामदेव पद के धारक हो । हस्तिनापुर तीर्थ पर आप चार कल्याणक की पूजा से पूजित हो । आप सोलहवें तीर्थंकर और पांचवें चक्रवर्ती हो, आपका चिन्ह हरिण है ।

अलोला छन्द[1]—(१४ अक्षरी)

सर्वग्रन्थिविदूरोऽनंतानंतगुणाब्धिः ।
लोकालोकविलोकी, ज्योतीरूपसुबोधः ॥

भव्याह्लादकचन्द्रः, सर्वानंदकरो यः ।
शांतिं 'ज्ञानमतिं' मे, कुर्यात् शांतिजिनेशः ॥६॥

श्री कुंथुनाथजिन स्तोत्र

इन्दुवदना छन्द[2]—(१४ अक्षरी)

सागर ! जडाशयतया भवसि हीनः ।
केवलमितोऽसि वपुषैव-मभिमानं ॥

चित्प्रविलसत्परमबोधकलयासौ ।
अप्रवदनंतगुणभृद् जिनवरोऽस्ति ॥१॥

---

१ अलोला छन्द—

छ्रिःसप्तच्छिदलोला म्सौ म्भौ गौ चरणे चेत्—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक मगण, एक सगण, एक मगण, एक भगण और दो गुरु होते हैं, उसे 'अलोला' छन्द कहते हैं। इसमें सात-सात वर्णों पर यति होती है।

ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । । ऽ ऽ

चतुर्दशाक्षरी छन्द—

२. इन्दुवदना छन्द—

इन्दुवदना भजसनै सगुरुयुग्मैः—जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक भगण, एक जगण, एक सगण, एक नगण और दो गुरु होते हैं, उसे 'इन्दुवदना' छन्द कहते हैं।

ऽ । । । ऽ । । । ऽ । । । ऽ ऽ

अन्वयार्थ—(यः सर्वग्रन्थिविदूरः) जो सर्व परिग्रह से दूर हैं (अनंतानंतगुणाब्धिः) अनतानत गुणो के समुद्र हैं (लोकालोकविलोकी) लोक और अलोक को देखने वाले हैं, (ज्योतीरूपसुबोधः) ज्योति रूप सुज्ञान के धारी हैं (भव्याल्हादकचद्र. सर्वानंदकरः) भव्यों को आल्हादित करने में चंद्र हैं और सभी को आनंद देने वाले हैं (शांतिजिनेशः मे ज्ञानमतिं शांतिं कुर्यात्) वे शातिनाथ भगवान् मुझे ज्ञानमती—ज्ञान समेत शांति देवें ॥७॥)

अर्थ—जो सर्वपरिग्रह से रहित, अनंतानंत गुणों के समुद्र, लोक अलोक का अवलोकन करने वाले, ज्ञानरूप ज्योति के धारक, भव्यो को आल्हादित करने मे चद्रमा और सभी को आनन्द देने वाले हैं। ऐसे वे शातिजिनेश्वर मुझे ज्ञानमती शांति प्रदान करें।

श्री कुंथुनाथ जिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(सागर !) हे समुद्र ! (जडाशयतया हीनः भवसि) तुम जल से भरे होने से अथवा मूर्ख होने से हीन हो, (केवलं वपुषा एव अभिमान इतः असि) केवल शरीर से ही अभिमान को प्राप्त हुये हो। (असि जिनवर चित्प्रविलसत्परमबोधकलया) किन्तु आप जिनेन्द्रदेव चैतन्य के विलास स्वरूप परमकेवलज्ञान की कला से (अनतगुणभृत् अभ्रवत्) अनतगुणो से भरे हुये आकाश के समान हो ॥१॥

अर्थ—समुद्र जडाशय मूर्खबुद्धि होने से हीन है। यहां "जडाशय" से काव्य में जलाशय अर्थ होता है कि वह समुद्र जल से भरा होने से हीन है। मात्र शरीर से ही अपने बड़प्पन का अभिमान करता है। किन्तु जिनेन्द्रदेव चैतन्य के विलास रूप दिव्य केवलज्ञान से भरे हुये होने से तथा अनत गुणों से भरे हुये होने से आकाश के समान हैं विशाल हैं—बड़े हैं। यह अर्थ हुआ।

शशिकला छन्द[1]—(१५ अक्षरी)

सकलसुरनरखचर-विनुतशिला ।
प्रणमतु जिनगुणनिरत-भविगणः ॥
दुरितमपहरतु जिनसवनशिला ।
मम मनसि वसतु जिनगुणकला ॥२॥

मालिनी छन्द[2]—(१५ अक्षरी)

अतुलसुखयुतोऽयं कुंथुनाथस्त्रिलोक्यां ।
प्रथितसुखकरीयं हस्तिनापुः पृथिव्यां ॥
जिनवरजनकोऽय सूरसेनः प्रसिद्धः ।
मम भवतु सदायं मुक्तिलक्ष्म्यै जिनेशः ॥३॥

चन्द्रलेखा छन्द[3]—(१५ अक्षरी)

श्रीकांता सा सुषुव्याभूत्, श्रावणे कृष्णपक्षे ।
यस्यां पूज्यो जिनेशो, गर्भे प्रयातो दशम्या ॥
वैशाखे शुक्लपक्षे, ह्याद्ये दिने जन्म लब्ध ।
दीक्षामुक्त्योश्च सैव, स्यात्जन्मनो वा तिथिश्च ॥४॥

पंचादशाक्षरी छन्द—

१ शशिकला छन्द—

द्विहतहयलघुरथगिति शशिकला—

। । । । । । । । । । । । । । S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे चौदह लघु और एक गुरु हो, उसे 'शशिकला' छन्द कहते हैं ।

२. मालिनी—

ननमयययुतेय मालिनी भोगिलोकैः—

। । । । । । S S S । S S । S S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण, एक मगण, और दो यगण होते हैं, उसे 'मालिनी' छन्द कहते हैं । इसमे आठ और सात वर्णों पर यति होती है ।

३ चन्द्रलेखा—

'म्रौ म्यौ यांतौ भवेतां सप्ताष्टकैश्चंद्रलेखा'—

S S S S । S S S S । S S । S S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण एकरगण, एक मगण, दो यगण हो, उसे 'चद्रलेखा' छन्द कहते हैं । इसमे सात और आठ वर्णों पर यति होती है ।

अन्वयार्थ—(सकलसुरनरखचरविनुतशिला) समस्त देवो, मनुष्यों और विद्याधरो से नमस्कृत पाडुक शिला है। (जिनगुणनिरतभविगण: प्रणमतु) जिनगुणो मे आसक्त भव्य जनों उसे प्रणाम करो। (जिनसवनशिला दुरितं अपहरतु) वह जिनाभिषेक की शिला पापों को दूर करे। (जिनगुणकला मम मनसि वसतु) जिनेन्द्र के गुणो की कला मेरे मन में निवास करें ।।२।।

अर्थ—समस्त देवों, मनुष्यो और विद्याधरो से नमस्कृत पाडुक शिला पूज्य है। जिनेद्र भगवान के गुणो मे अनुरक्त हुये भव्य जनो आप लोग इस शिला को प्रणाम करो। यह जिनेद्र भगवान के अभिषेक से पवित्र हुई शिला हम सबके पापों का नाश करे और जिनेन्द्र भगवान के गुणो का समूह मेरे हृदय मे बसे—निवास करे।

अन्वयार्थ—(अय कुथुनाथ त्रिलोक्या अतुलसुखयुत) ये कुथुनाथ भगवान् तीनो लोको मे अतुलसुख से युक्त हैं। (पृथिव्या इय हस्तिनापू प्रथितसुखकरी) पृथ्वीतल पर यह हस्तिनापर नगरी प्रसिद्ध सुखकारी है। (अय सूरसेन जिनवरजनक प्रसिद्ध.) ये सूरसेन महाराज जिनेंद्रदेव के पिता प्रसिद्ध हुये हैं। (अय जिनेश सदा मम मुक्तिलक्ष्म्यै भवतु) ये जिनराज हमेशा मेरी मुक्ति संपदा के लिये होवें ।।३।।

अर्थ—श्रीकुथुनाथ भगवान् तीनों लोक में अतुलसुख से युक्त हैं, यह हस्तिनापुरी नगरी इस पृथ्वी पर प्रसिद्ध और सुखदायिनी हुई है। ये सूरसेन महाराज जिनेद्रदेव के पिता प्रसिद्ध हुये हैं। ऐसे वे जिनराज हमेशा मुझे मुक्ति सम्पत्ति के लिये होवें।

अन्वयार्थ – (सा श्रीकाता सुधन्या अभूत) वह श्रीकांता माता धन्य हो गई। (श्रावणे कृष्णपक्षे दशम्या यस्या गर्भे पूज्य जिनेश प्रयात) श्रावणवदी दसमी के दिन जिनके गर्भ मे पूज्य जिनराज आये। (वैशाखे शुक्लपक्षे हि आद्ये दिने) वैशाखसुदी प्रतिपदा के दिन (जन्म लब्ध) जन्म ग्रहण किया। (च जन्मन या तिथि) और जन्म की जो तिथि है (दीक्षामुक्त्यो च सा एव स्यात्) दीक्षा और मोक्ष की वही तिथि है ।।४।।

अर्थ—वह श्रीकाता माता धन्य हो गई है जिसने सावन वदी दसमी के दिन अपने गर्भ मे पूज्य जिनराज को धारण किया। वैशाख सुदी एकम के दिन भगवान् को जन्म दिया। पुन इसी वैशाख सुदी एकम को ही भगवान ने दीक्षा ली। पुन इसी तिथि को भगवान मोक्ष गये हैं।

अनुष्टुप्—

समाः पंचसहस्रोन-लक्षाः जैनेश्वरस्थितिः ।
पंचत्रिंशद्धनुःकायो, निष्टप्ताष्टापदद्युतिः ॥५॥

प्रभद्रकं छन्द[1]—(१२ अक्षरी)

प्रहततमो य चैत्रसिते तृतीयके ।
उदितसुबोधसूर्यमुनियोऽजलाञ्छनः ॥
स जयतु तीर्थकृज्जगति चक्रभृच्च वै ।
मम हृदये सदा जिनप एव रज्जताम् ॥६॥

श्री अरजिन स्तोत्र

स्रक् छन्द[2]—(१२ अक्षरी)

जयतु सुखद-जिनसुवचन-ममृतं ।
भवतु दलित - रिपुकुल-मघदहनं ॥
भरतु हृदय-सरसिज-समरसकं ।
धरतु जिनत - जनिमृति-शिवसुपदे ॥१॥

---

१ प्रभद्रक छन्द—
भवति नजौ भजौ रसहितौ प्रभद्रकम्—
। । । । S । S । । । S । S । S
जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण, एक जगण, एक भगण, एक जगण और एक रगण होता है, उसे 'प्रभद्रक' छन्द कहते हैं।

पंचदशाक्षरी छन्द—
२ स्रक् छन्द—
स्रगिति भवति, रसनवकयतिरियम्—
। । । । । । । । । । । । । । S
'शशिकला' छन्द में १४ लघु और एक गुरु होता है। इस 'शशिकला' छन्द में जब छह और नव पर यति होती है तो 'स्रक्' छन्द कहा जाता है।

अन्वयार्थ—(पञ्चसहस्त्रोनलक्षा समा·) पाँच हजार वर्ष कम एक लाख वर्ष की (जैनेश्वरस्थिति:) जिनेंद्रदेव की आयु थी। (पंचत्रिंशत् धनु: काय·) पैंतीस धनुष का शरीर था (निष्टप्ताष्टापदद्युति) तपाये हुये स्वर्ण के समान देह कांति थी ।।५।।

अर्थ—भगवान् की आयु पचानवे हजार वर्ष की थी, पैंतीस धनुष का ऊँचा उनका शरीर था अर्थात् ३५×४=१४० हाथ था और तपाये हुये सुवर्ण जैसी उनके शरीर की कांति थी।

अन्वयार्थ—(चैत्रसुसिते तृतीयके प्रहततम.) चैत्र सुदी तृतीया के दिन अंधकार का नाश किया (च उदितसुबोधसूर्यमुनिप.) और ज्ञानसूर्य को प्रकट कर लिया ऐसे मुनिनाथ हैं (अजलांछन.) उनका चिन्ह बकरा है (स. जयतु) वे जिनराज जयशील होवें (जगति वै तीर्थकृत् च चक्रभृत्) वे जगत् मे तीर्थंकर और चक्रवर्ती हुए हैं। (एष. जिनप सदा मम हृदये विराजताम्) ऐसे ये जिनराज सदा मेरे हृदय मे विराजमान रहें ।।६।।

अर्थ—चैत्रसुदी तीज के दिन भगवान् ने मोह अंधकार का नाश कर केवलज्ञानरूपी सूर्य को प्रगट कर लिया था। उनका चिन्ह बकरे का है। ये भगवान् सत्रहवे तीर्थंकर और छठे चक्रवर्ती थे। ये इस पृथ्वी पर जयशशील होवे। ऐसे ये श्रीकुंथुनाथ भगवान सदा मेरे हृदय में विराजमान रहे।

श्री अरनाथ जिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(सुखदजिनसुवचन अमृत जयतु) सुखदायी जिनदेव के समीचीन, वचन अमृत जयशील होवे। (दलितरिपुकुल भवतु अघदहन) वे वचन रिपुकुल के दलन करने वाले हैं वे पाप समूह का नाश करने वाले होवे। (हृदयसरसिजसमरसक भरतु) मेरे हृदय कमल मे समतारस को भरे। (विगलजनिमृति-शिवसुपदे धरतु) जन्ममरण से रहित मोक्ष पद मे हमे पहुँचावे ।।१।।

अर्थ—जिनेंद्रदेव के वचन सुखदायी अमृत स्वरूप हैं वे जयशील होवे। वे वचन कर्मशत्रु का दलन करने वाले हैं ऐसे वे वचन मेरे पापसमूह का नाश करे। मेरे चित्तसरोज में समतारस को भरें और मुझे जन्ममरण रहित ऐसे मोक्षस्थान में पहुँचावे।

मणिगुणनिकर छन्द[1]—(१५ अक्षरी)

अर जिनवर ! तव, पदयुगकमलं ।
वसतु मनसि मम, कलिमलदलन ।।
सुरनरमुनिगण-कृतबहुशरणम् ।
प्रभवति जिन ! तव, शमदमसुबुधः ।।२।।

ऋषभगजविलसित छन्द[2]—(१६ अक्षरी)

ख्यातसुदर्शनोऽस्य, जनक इति भुवि महान् ।
याति सुहस्तिनागपुरि किल विबुधगणाः ।।
फाल्गुनमासि गर्भदिनमतुलविभवकृत् ।
कृष्णतृतीयके स्म भवति सकलरुचिकृत् ।।३।।

वाणिनी छन्द[3]—(१६ अक्षरी)

सुसितचतुर्दशी प्रथितमार्गशीर्षजाभूत् ।
त्रिदशपतिर्जिनस्य जनिमंगल व्यधात् हि ।
सितदशमी शुभा च खलु मार्गमासि या ।
व्रत गुणभूषितां जिनरवे ! तपोऽग्रहीत् त्वं ।।४।।

---

१ मणिगुणनिकरः छन्द—

वसुमुनियतिरिह, मणिगुणनिकरः—

। । । । । । । । । । । । । । S

इसी शशिकला छन्द मे यदि आठ और सात पर यति होती है तो उसे 'मणिगुणनिकर' छंद कहते हैं।

सोलह अक्षरी छन्द—

२ ऋषभगजविलसित छन्द—

भ्रौ त्रिनगाः स्वराः ऋषभगजविलसितम्—

S । । S । S । । । । । । । । । S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक भगण, एक रगण, तीन नगण और एक गुरु होता है, उसे 'ऋषभगजविलसित छन्द' कहते हैं। इसमे सात और नव वर्णों पर यति होती है।

३. वाणिनी छन्द—

नजभजरैः सदा भवति वाणिनीगयुक्तैः—

। । । । S । S । । । S । S । S S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक नगण, एक जगण, एक भगण, एक जगण, एक रगण और एक गुरु होता है, उसे 'वाणिनी' छन्द कहते हैं।

अन्वयार्थ—(अरजिनवर !) हे अरहनाथ भगवन् (तव पदयुगकमल) आपके चरणकमल युगल (कलिमलदलन) पाप मल का नाश करने वाले हैं (सुरनरमुनिगणकृतबहुशरण) और देव मनुष्य तथा मुनियो को शरण देने वाले हैं (मम मनसि वसतु) वे मेरे मन में निवास करें (जिन !) हे जिन ! (तव शमदमगुणः) आपका शम दम रूप सम्यक् धर्म (प्रभवति) प्रभावशाली है ॥२॥

अर्थ—हे अरहनाथ भगवन् ! आपके चरणकमल युगल पाप मल के नाशक हैं और देव, मनुष्य तथा मुनिगणो के लिये भी शरणभूत हैं, ऐसे वे चरणकमल मेरे हृदय में स्थित रहें। हे देव ! आपका धर्म शमदम-कषायों का शमन और इंद्रियो के दमन रूप है वह इस जग मे प्रभावशाली है।

अन्वयार्थ—(अस्य जनक ख्यातसुदर्शन इति भुवि महान्) इनके पिता राजा "सुदर्शन" इस नाम से पृथ्वी पर महान् ख्यात हुये (सुहस्तिनागपुरि किल विबुधगणा यांति) हस्तिनापुर नगरी में बहुत से देवगण आये थे (फाल्गुनिमासि कृष्णतृतीयके) फागुन वदी तृतीया के (सकलरुचिकृत् अतुलविभवकृत्) सबको रुचिकर और अतुलवैभव को करने वाला (गर्भदिन भवतिस्म) गर्भ दिवस हुआ था ॥३॥

अर्थ—हे भगवन् ! आपके पिता का नाम महाराज सुदर्शन प्रसिद्ध था। हस्तिनापुरी नगरी मे देवो का आगमन हुआ था। फागुन वदी तीज के दिन आप गर्भ मे आये थे। वह गर्भकल्याणक सब जनो के लिए रुचिकर और अतुल वैभव को करने वाला था।

अन्वयार्थ—(प्रथितमार्गशीर्षजा सुसितचतुर्दशी अभूत्) प्रसिद्ध मगसिर सुदी चौदश थी (त्रिदशपति जिनस्य जनिमगल व्यधात्) जब इन्द्र ने जिनेंद्रदेव का जन्ममगल मनाया था। (च खलु मार्गमासि शुभा सित दशमी या) और पुन मगसिर मे सुदी दसमी शुभ आई जब (जिनरवे ! व्रतगुणभूषिता तप अगृहीत् त्व) हे जिनवर सूर्य ! तुमने व्रत गुणों से भूषित जिनदीक्षा ले ली ॥४॥

अर्थ—प्रसिद्ध मगसिर वदी चौदश को भगवान का जन्म महोत्सव इन्द्र ने मनाया। पुन. मगसिर सुदी दशमी के दिन भगवान् ने व्रत गुणो से अलकृत ऐसी दैगम्बरी दीक्षा ली थी।

कामक्रीडा छन्द[1]—(१५ अक्षरी)

ऊर्जे शुक्ले द्वादश्यां यो स्वातन्त्र्यं ज्ञानं लेभे ।
चैत्रे कृष्णेऽमावस्यायां सिद्धेःसाम्राज्यं प्राप्नोत् ॥
मीनं चिन्हं स्वर्णाभं च प्रद्युम्नश्रीकत्वं ते ।
चक्री तीर्थस्य त्वं कर्ता पाया मां दुःखाज्जित्यं ॥५॥

अनुष्टुप् छन्द—

सहस्रवत्सराण्यायु - रशीतिं चतुरुत्तराम् ।
त्रिंशच्चापतनूत्सेधः, मित्रसेनात्मजो जिनः ॥६॥

एला छन्द[2]—(अतिरेखा) (१५ अक्षरी)

यदि नाम कोऽपि चरणकमलयुगं ते ।
सुभजेत् सदा, प्रमुदितवदनमनाः वै ॥
नियतं श्रयेत्, स हि निजसुखदनिकेत ।
अरनाथ ! ते, शिवनिलय ! मम नमोऽस्तु ॥७॥

पंचदशाक्षरी छन्द—

१ कामक्रीडा छन्द—

मा बाणा यस्या सा कामक्रीडा सज्ञा ज्ञातव्या—

S SS S S S SSS S SS S S S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे पाच मगण हो, उसे 'कामक्रीडा' छन्द कहते हैं।

२ एला (अतिरेखा) छन्द—

सजना नयौ शरदशकविरतिरैला—

I I S I S I I I I I I I I S S

जिस छन्द मे एक सगण, एक जगण, दो नगण और एक यगण होता है, वह 'एला' छन्द है। इसे 'अतिरेखा'[1] छन्द भी कहते हैं। इसमे पाच और दश वर्णों पर यति होती है।

---

१ "सजना नयौ शरदशयतिरतिरेखा"

अन्वयार्थ—(य ऊर्जे शुक्ले द्वादश्यां) जिन्होंने कार्तिक शुक्ला बारस को (स्वातंत्र्य ज्ञान लेभे) स्वतन्त्र ज्ञान प्राप्त कर लिया। (चैत्रे कृष्णे अमावस्यायां सिद्धेः साम्राज्यं प्राप्नोत्) चैत्र वदी अमावस्या को मुक्ति का साम्राज्य प्राप्त किया (ते मीन चिन्हं) आपका चिन्ह मछली का है (स्वर्णाभ प्रद्युम्नश्रीरूप) सुवर्ण के समान देह छवि थी, और कामदेव का उत्तम रूप था। (त्व तीर्थस्य कर्ता चक्री नित्यं मां दु खात् पाया) तीर्थ के कर्ता और चक्रवर्ती आप हमेशा दुःखों से मेरी रक्षा करे ॥५॥

अर्थ—कार्तिक सुदी बारस को आपने पूर्ण स्वाधीन केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। पुन चैत्र वदी अमावस के दिन आप मुक्ति साम्राज्य के स्वामी हो गये। आपका चिह्न मछली का है, आपकी शरीर काति सुवर्ण जैसी थी और आप कामदेव रूप के धारक थे। आप तीर्थंकर और चक्रवर्ती हुये हैं ऐसे हे भगवन्! आप सदा दु.खो से मेरी रक्षा कीजिये।

अन्वयार्थ—(चतुरुत्तरां अशीति सहस्रवत्सराणि आयु.) आपकी आयु चौरासी हजार वर्ष की थी, (त्रिंशत्चापतनूत्सेधः) तीस धनुष का आपका शरीर था (मित्रसेनात्मज जिन) आप 'मित्रसेना' माता के पुत्र जिनेन्द्रदेव थे ॥६॥

अर्थ—भगवान् की आयु चौरासी हजार वर्ष की थी। शरीर की भी ऊँचाई तीस धनुष थी अर्थात् ३०×४=१२० हाथ थी और आपकी माता का नाम मित्रसेना था।

अन्वयार्थ—(यदि नाम को अपि प्रमुदितवदनमना वै) यदि कोई भी प्रसन्न मुख और प्रसन्न चित्त होकर (सदा ते चरणकमलयुग सुभजेत्) सदा आपके चरण कमल युगल का आश्रय लेता है। (स हि निजसुखदनिकेत नियत श्रयेत्) वह भक्त निश्चित ही अपने सुखदायी स्थान को प्राप्त कर लेता है, (शिवनिलय! अरनाथ! ते मम नमोस्तु) हे कल्याण के निलय! हे अरहनाथ भगवन्! आपको मेरा नमस्कार हो ॥६॥

अर्थ—यदि कोई भी मनुष्य प्रसन्न मुख और प्रसन्न चित्त होकर हमेशा आपके चरण कमल युगल का आश्रय लेवे तो वह निश्चित ही अपने सुखदायी स्थान को प्राप्त कर लेगा। हे मोक्ष के स्थान स्वरूप अरहनाथ! आपको मेरा नमस्कार होवे।

श्रीमल्लिजिन स्तोत्र

शिखरिणी छन्द[1]—(१७ अक्षरी)

त्वदीया सद्वाणी, समरससुधास्वादजननी ।
त्वदीया सद्वृष्टिः, भविजनमनोध्वांतहरणी ॥
गुणानां राशिस्ते, त्रिभुवनगुरुत्वं कथयति ।
त्वया लब्धा देव ! प्रशमदमतो मुक्तिरमणी ॥१॥

पृथ्वी छन्द[2]—(१७ अक्षरी)

जगत्त्रयवशीकृतो, य इह मोहमल्लो महान् ।
त्वमेव विनिहत्य तं, जगति मल्लिनाथो मतः ॥
सुरेशमुकुटैरपि, प्रणतकुंभराजो पिता ।
पवित्रमिथिलापुरी, जगति मान्यतामाप सा ॥२॥

सप्तदशाक्षरी छन्द—

१ शिखरिणी—

रसैरुद्रैश्छिन्ना, यमनसभला गः शिखरिणी—

ISSSSS IIIIIS SII IS

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक यगण, एक मगण, एक नगण, एक सगण, एक भगण, एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'शिखरिणी' छद कहते हैं । इसमे ६ और ११ पर यति होती है ।

२ पृथ्वी छन्द —

जसौ जसयला वसुग्रहयतिश्च पृथ्वी गुरुः—

IS IIIS ISIIIS I SS IS

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक जगण, एक सगण, एक जगण, एक सगण, एक यगण, एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'पृथ्वी' छन्द कहते हैं । इसमे ८ और ९ पर यति होती है ।

मल्लिनाथ जिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(त्वदीया मधुवाणी समरसमुधास्वादजननी) आपकी उत्तम वाणी समरस पीयूष के स्वाद को उत्पन्न करने वाली है (त्वदीया सद्दृष्टि भविजनमनोध्वांतहरणी) आपकी समीचीन दृष्टि-सम्यग्दर्शन भव्यो के मन के अंधकार को दूर करने वाला है। (ते गुणानां राशि. त्रिभुवनगुरुत्व कथयति) आपके गुणो को राशि तीन लोक की महानता को कहती है (देव !) हे देव ! (त्वया प्रशमदमतः मुक्तिरमणी लब्धा) आपने प्रशम और दम से मुक्तिरमणी को प्राप्त कर लिया है ॥१॥

अर्थ—हे भगवन् ! आपकी वाणी समतारस रूपी अमृत के स्वाद को उत्पन्न करने वाली है। आपकी समीचीन दृष्टि अर्थात् केवल दर्शन भव्यों के मन के अंधकार को दूर करने वाला है। आप के गुणो का समूह आपकी तीन लोक की गुरुता को कह रहा है, हे देव ! आपने प्रशम और इंद्रिय-निग्रहरूप दम से मुक्तिलक्ष्मी को प्राप्त कर लिया है।

अन्वयार्थ—(इह जगत्त्रयवशीकृत य. मोहमल्ल महान्) इस जगत् मे तीनो लोको को वश मे करने वाला जो महान् मोहमल्ल है (त्वं एव तं विनिहत्य) आपने ही उसको मारकर (जगति मल्लिनाथः मत·) जगत् मल्लिनाथ इस नाम से माने गये हैं (सुरेशमुकुटै अपि प्रणतकुंभराज पिता) देवेंद्रो के मुकुटों से भी नमस्कृत "कुंभराज" आपके पिता थे। (सा पवित्र-मिथिलापुरी जगति मान्यता आप) वह पावन मिथिलापुरी भी जगत् मे मान्यता को प्राप्त हो गई ॥२॥

अर्थ—इस लोक मे तीनो जगत् के सर्व जीवो को वश मे करने वाला जो महान मोहरूपी मल्ल है, हे भगवन् ! आपने उसे ही जीतकर "मल्लिनाथ" यह सार्थक नाम पाया है। आपके पिता कुंभराज को देवेंद्रो ने भी मुकुट झुका कर नमस्कार किया था और आपके जन्म से पावन हुई मिथिलापुरी नगरी भी जगत् में सर्वमान्य हो गई है।

मंदाक्रांता छन्द[1]—(१७ अक्षरी)

चैत्रे शुक्ले, प्रथमदिवसे,, मातृगर्भे प्रविष्टः ।
एकादश्यां, जननसवनं मार्गशीर्षे सितेऽभूत् ॥
दीक्षां प्राप्नोत्, व्रतगुणमणियैः तिथौ जन्मनश्च ।
पूर्णज्ञानं, विघटिततमः, पौष-कृष्णे द्वये च ॥३॥

अनुष्टुप् छन्द—

समानां पंचपञ्चाशत्, सहस्राण्यस्य जीवितम् ।
पंचविंशतिचापः सद्-देहः प्रजावतीसुतः ॥४॥

वंशपत्रपतित छन्द[2]—(१७ अक्षरी)

फाल्गुनपंचमी - सिततिथौ, शिवपदमगमत् ।
मल्लिजिनं प्रणौमि सततं, कनकतनुरुचिं ॥
शल्यगत शरण्यमपि तं, लघु शरणमितः ।
ईप्सितद सुचिन्हकलश, नमति मुनिगणः ॥५॥

---

१. मंदाक्रान्ता छन्द—

मंदाक्रांता जलधिषडगैर्म्भौ नतौ ताद्गुरू चेत्—

ऽऽ ऽऽ ।। ।।।ऽ ऽ ।ऽ ऽ।ऽ ऽ

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण, एक भगण, एक नगण, दो तगण, और दो गुरु होते हैं उसे 'मदाक्राता' छन्द कहते हैं। इसमे चार, छह और सात पर यति होती है।

२ वंशपत्रपतित छन्द—

दिङ्मुनिवंशपत्रपतितं भरनभनलगैः—

ऽ ।।ऽ।ऽ।। ।ऽ।।।।।।ऽ

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक भगण, एक रगण, एक नगण, एक भगण, एक नगण, एक लघु और एक गुरु होते हैं, उसे 'वंशपत्रपतित' छन्द कहते हैं। इसमे दश और सात पर यति होती है।

अन्वयार्थ —(चैत्रे शुक्ले प्रथमदिवसे मातृगर्भे प्रविष्ट:) चैतसुदी एकम के दिन माता के गर्भ मे आये। (मार्गशीर्षे सिते एकादश्यां जननमहत् अभूत्) मगसिर सुदी ग्यारस के दिन जन्माभिषेक हुआ। (च य. व्रतगुण-मणि· जन्मन· तिथौ दीक्षां प्राप्नोत्, और व्रतगुणमणि जिन्होंने जन्म तिथि में दीक्षा ग्रहण की (पौषकृष्णे द्वये च विघटिततम: पूर्णज्ञानं) पुन: पौष वदी दूज को अन्धकार से रहित केवलज्ञान प्राप्त कर लिया ।।३।।

अर्थ —भगवान मल्लिनाथ ने चैतसुदी एकम के दिन माता के गर्भ में प्रवेश किया। मगसिर सुदी ग्यारस के दिन जन्माभिषेक प्राप्त किया। पुन इसी मगसिर सुदी ग्यारस के दिन ही व्रत गुणों की मणिस्वरूप ऐसी जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण की। अनन्तर पौष वदी दूज को मोहांधकार का नाश कर पूर्ण केवलज्ञान प्रगट कर लिया।

अन्वयार्थ —(पञ्चपञ्चाशत् सहस्राणि समानां अस्य जीवित) पचपन हजार वर्ष की उनकी आयु थी। (पञ्चविंशतिचाप सद्देह) पच्चीस धनुष ऊंचा शरीर था (प्रजावतीसुत) और प्रजावती माता के पुत्र थे ।।४।।

अर्थ —भगवान् की आयु पचपन हजार वर्ष की थी। उनके शरीर की ऊंचाई पच्चीस धनुष थी अर्थात् २५×४=१०० हाथ की थी और वे माता "प्रजावती" के पुत्र थे।

अन्वयार्थ —(फाल्गुनपंचमीसिततिथौ) फागुनसुदी पंचमी तिथि मे (शिवपद अगमत्) मोक्षपद को प्राप्त किया। (कनकतनुरुचि मल्लिजिन सतत प्रणौमि) सुवर्ण के समान देह वाले मल्लिनाथ को मैं सतत प्रणाम करता हूँ। (शल्यगत शरण्य अपि त लघु शरण इत) शल्य से रहित और सबको शरण देने वाले ऐसे आपकी मैंने भी शीघ्र ही शरण ली है। सुचिन्हकलश ईप्सितद मुनिगण. नमति) कलशचिन्ह वाले और इच्छित के दाता ऐसे आपको मुनिगण नमस्कार करते हैं ।।५।।

अर्थ —फागुन सुदी पंचमी के दिन आपने मोक्षपद प्राप्त किया है। सुवर्ण के समान जिनकी शरीर कांति है, ऐसे मल्लिनाथ भगवान को मैं सतत प्रणाम करता हूँ। आप शल्य से रहित हैं सबके लिये शरणभूत हैं ऐसे आपकी मैं भी शीघ्र ही शरण मे आया हूँ। आपका चिन्ह कलश का है आप सबको इच्छित फल देने वाले हैं आपको मुनियो का समूह भी नमस्कार करता है।

श्री मुनिसुव्रत-जिनस्तोत्र

हरिणी छन्द[1]—(१७ अक्षरी)

स्वगुणरुचिरैः रत्नैः, रत्नाकरो व्रतशीलभृत् ।
समरसभरैः नीरैः, पूर्णः महानिधिमान् पुमान् ॥
त्रिभुवनगुरुर्विष्णु-र्ब्रह्मा शिवो जिनपुंगवः ।
विगलितमहामोहोऽदोषो जिनो मुनिसुव्रतः ॥१॥

कुसुमितलतावेल्लिता छन्द[2]—(१८ अक्षरी)

कर्तुस्तीर्थस्य, प्रणतविबुधः ते सुमित्रः पितासौ ।
धन्या सोमा सा, त्रिभुवनगुरोर्जन्मदात्री प्रसिद्धा ॥
गर्भे संयातो, द्वितयदिवसे, श्रावणे कृष्णपक्षे ।
जातो वैशाखे, विगलिततमाः कृष्णपक्षे दशम्यां ॥२॥

सप्तदशाक्षरी छन्द—

१ हरिणी छन्द—

रसयुगहयैर्न्सौ म्रौ, स्लौ गो यदा हरिणी तदा—

I I I I I S S S S S I S I I S I S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण, एक सगण, एक मगण, एक रगण, एक सगण, एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'हरिणी छन्द' कहते हैं। इसमे आठ और नौ पर यति होती है।

अष्टदशाक्षरी छन्द—

२ कुसुमितलतावेल्लिता छन्द—

'स्याद्भूतर्त्वश्वैः कुसुमितलतावेल्लिता म्तौ नयौ यौ'—

S S S S S I I I I I S S I S S I S S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में एक मगण, एक तगण, एक नगण और तीन यगण होते हैं, उसे 'कुसुमितलतावेल्लिता' छन्द कहते हैं। इसमे भूत–५, ऋतु–६, अश्व–७ पर यति होती है।

श्रीमुनिसुव्रत जिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(स्वगुणरुचिरैः रत्नैः रत्नाकरः व्रतशीलभृत्) अपने सुन्दर गुणरूपी रत्नों से आप रत्नाकर—समुद्र हैं, व्रत शील से भरे हुये हैं। (समरसभरैः नीरैः पूर्णः) समरसरूप जल से पूर्ण भरे हुये आप (महानिधिमान् पुमान्) महानिधि वाले महापुरुष हैं। (त्रिभुवनगुरुः विष्णु ब्रह्मा शिव जिनपुंगव) आप तीन लोक के गुरु हैं, विष्णु हैं, ब्रह्मा हैं, महादेव हैं और जिनो मे श्रेष्ठ जिनेद्रदेव हैं। (विगलितमहामोह अदोष जिनः मुनिसुव्रत) महामोह से रहित हैं, अठारह दोषों से रहित हैं ऐसे मुनिसुव्रत जिन तीर्थंकर हैं ॥१॥

अर्थ—हे भगवन्! आप गुणरूपी, श्रेष्ठ रत्नो से भरे हुये व्रतशीलो से युक्त एक रत्नाकरसमुद्र हैं। आप में समरसरूपी जल पूर्णरूप से भरा हुआ है। आप निधियों के स्वामी महापुरुष हैं। आप ही तीनलोक के गुरु हैं, आप ज्ञान से जगत् को व्याप्त करने से विष्णु हैं, आप धर्म-सृष्टि के विधाता होने से ब्रह्मा हैं और जगत् मे कल्याण करने से शिव हैं और जिनो मे श्रेष्ठ होने से जिनपुंगव हैं। आपने महामोह को नष्ट कर दिया है। अठारह दोषों से रहित होने से अदोष हैं—वीतरागी हैं ऐसे आप मुनिसुव्रत नाथ तीर्थंकर हैं।

अन्वयार्थ—(तीर्थस्य कर्तुः ते) आप तीर्थंकर के (पिता) जनक (प्रणतदिविज असौ सुमित्र) देवो से नमस्कृत ऐसे सुमित्र महाराज हैं। (धन्या सा सोमा) धन्य हैं वे सोमादेवी माता (त्रिभुवनगुरो जन्मदात्री प्रसिद्धा) जो तीनलोक के गुरु आपकी जन्मदात्री प्रसिद्ध हैं। (श्रावणे कृष्णपक्षे द्वितयदिवसे गर्भे समयात) आप श्रावण कृष्णा द्वितीया को गर्भ में आये। (वैशाखे कृष्णपक्षे दशम्या विगलिततमाः जात) वैशाख वदी दशमी को मोहांधकार के नाशक आपने जन्म लिया ॥२॥

अर्थ—तीर्थ के कर्ता आप तीर्थंकर के पिता का नाम सुमित्र महाराज था। वे देवो और मनुष्यो से भी पूज्य थे। सोमादेवी माता भी धन्य थी जो कि तीनलोक के गुरु आपको जन्म देने वाली प्रसिद्ध हैं। सावन वदी दूज को आप गर्भ मे आये और वैशाख वदी दशमी को आपने अंधकार का नाश कर जन्म लिया है।

सिंहविक्रीडित छन्द[1]—(१८ अक्षरी)

व्रतगुणनिधिभृत् स वैशाखकृष्णे दशम्यां मुनिः ।
सकलविमलबोधभास्वान् नवम्यां च तन्त्रासि वै ।।
सुरनरमुनिभिर्नुता द्वादशी फाल्गुने तामसे ।
शिवसुखसदनं श्रितस्त्वं सदा पाहि भोनाथ ! मां ।।३।।

अनुष्टुप् छन्द—

त्रिंशतसहस्रवर्षायुश्-चापविंशतिसम्मितः ।
वैडूर्यमणिसच्छायः, जिनः कच्छपलाञ्छनः ।।४।।

तत्कुटक छन्द[2]—(१७ अक्षरी)

जगति जनैः पुरी, तव सुराजगृही प्रथिता ।
बहुधनधारया, वसुमतीति मता भुवने ।।
तव वचनामृत, मम मनः सुपिबेत् नितरां ।
जिन ! चरणाम्बुजे, खलु रमेत च ते सतत ।।५।।

---

१ सिंह विक्रीडित छन्द—

'कथितमिह ननौ ररौ चेद्ररौ सिंहविक्रीडितम्'—

। ।। ।।।ऽ ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण और चार रगण हो, उसे 'सिंहविक्रीडित' छन्द कहते हैं। इस छन्द का दूसरा नाम 'नाराच' भी है।

२ तत्कुटक छन्द—

हयदशभिर्नजौ भजजला गुरु तत्कुटकम्—

।।। ।ऽ। ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ

जिस छन्द मे एक नगण, एक जगण, एक भगण, दो जगण एक लघु और एक गुरु हो वह 'तत्कुटक' छन्द है। इसमें सात और दश पर यति है। इसे नर्कुटक छन्द भी कहते हैं। यथा—

'यदि भवतो नजौ भजजला गुरु नर्कुटकम्'—

। । ।।ऽ । ऽ ।।।ऽ ।।ऽ।।ऽ

अन्वयार्थ—(वैशाखकृष्णे दशम्यां स व्रतगुणनिधिभृत् मुनि) वैशाख वदी दशमी को वे व्रत गुणो के समुद्र मुनि हो गये (च तन्मासि नवम्या सकलविमलबोधभास्वान् वै) और उसी मास की नवमी को आप सकल विमल केवलज्ञान रूपी सूर्य हो गये। (फाल्गुने तामसे द्वादशी सुरनरमुनिभिनुता) फागुन वदी बारस देवों, मनुष्यो और मुनियो से भी पूज्य हो गई (शिवसुखसदन श्रित) आपने मोक्ष सुख के धाम को प्राप्त कर लिया (भो नाथ ! त्व मा सदा पाहि) हे नाथ ! आप मेरी सदा रक्षा करे ।।३।।

अर्थ—वैशाख वदी दसमी के दिन आप मुनि दीक्षा लेकर व्रत गुणनिधि के स्वामी हो गये। पुन उसी वैशाख वदी नवमी के दिन आपने सकल विमल केवलज्ञानरूपी सूर्य को प्रगट कर लिया। अनंतर फागुन वदी बारस देव मनुष्य और मुनियो से पूज्य हो गई जब आपने मोक्षसुख के महल को प्राप्त कर लिया। हे भगवन् ! आप सदा मेरी रक्षा करें।

अन्वयार्थ—(त्रिंशत्सहस्रवर्षायु) तीस हजार वर्ष की आयु थी, (चापविंशतिमम्मित) बीस धनुष का शरीर था (वैडूर्यमणिसच्छाय) वैडूर्यमणि के समान काति थी (कच्छपलाछन जिन) और आपका कछुआ चिन्ह था ।।४।।

अर्थ-हे भगवन् ! आपकी तीस हजार वर्ष की आयु थी। बीस धनुष ऊचा शरीर था, अर्थात् २० × ४ = ८० हाथ था। वैडूर्यमणि के समान वर्ण था और आपका चिन्ह कछुआ का था।

अन्वयार्थ—(तव जने पुरी सुराजगृही जगति प्रथिता) आपके जन्म से राजगृही नगरी जगत् मे प्रसिद्ध हो गई। (बहुधनधारया 'वसुमती' इति भुवने मता) बहुत से धन की वर्षा से पृथ्वी 'वसुमती' इस नाम से लोक मे ख्यात हो गई। (तव वचनामृत मम मन नितरा सुपिवेत्) आपके वचनामृत को मेरा मन अतिशय रूप से पीवे (च जिन ! ते चरणाम्बुजे खलु तत तत रमेत) और हे जिन ! आपके चरणकमल मे मेरा मन सदा रमता रहे ।।५।।

अर्थ—हे भगवन् ! आपके जन्म से वह राजगृही पुरी जगत् मे प्रसिद्ध हो गई। बहुत से धन-रत्नो की धारा रूप वर्षा से यह पृथ्वी 'वसुमती' इस नाम स लोक मे मान्य हो गई। हे जिन ! आपके वचनामृत को मेरा मन सदा रुचि से पीवे और आपके चरणकमल मे ही मेरा मन सदा रमता रहे।

श्री नमिजिन स्तोत्र

कोकिलकं छन्द[1]—(१७ अक्षरी)

नमिजिन-पुंगवस्तनुभृतां गुरुरीप्सितदः ।
विजयमहानृपस्तव पिता खलु तीर्थकृतः ॥
गुणमणिवप्पिला,[1] सुतवती भुवि ते जननी ।
वरमिथिलापुरी, सुरभृता किल रत्नभृता ॥१॥

हरनर्तक छन्द[2]—(१८ अक्षरी)

यो द्वितीयदिनेऽसिते, जिन आश्विने, सुदिवश्च्युतः ।
मदरे जननोत्सवः, ह्यसिते शुचौ[2] दशमीतिथौ ॥
तत्तिथौ जिनरूपभृत्, भगवान् नमिर्वनमाश्रितः ।
मार्गशीर्षसितैकया [3]दशमीतिथौ किल केवली ॥२॥

सप्तदशाक्षरी छन्द—

१ कोकिलकं छन्द—

मुनिगुहकार्णवै कृतियति वद कोकिलकम्—

। । । । S । S । । । S । । S । । S

उसी तत्कुटक छद मे यदि मुनि सात गुहक छह और समुद्र चार पर यति हो तो उसे 'कोकिलक' छद कहते हैं ।

अष्ट दशाक्षरी छद—

२ हरनर्तक छन्द—

सौ जजौ भरसयुतौ करिबाणकैर्हरनर्त्तकम्—

S । S । । S । S । । S । S । । S । S

जिस छद के प्रत्येक चरण मे एक रगण, एक सगण, दो जगण, एक भगण, और एक रगण होता है, उसे 'हरनर्तक' छन्द कहते हैं । इसमे करि ८ बाण ५ पर यति होती है । अत मे जितने अक्षर शेष रहते हैं उनके अत मे यति होती है ।

१ वप्रिला भी नाम है । २ आषाढ़े । ३ एक से अधिक दशमी (११) ।

श्री नमिनाथ जिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(नमिजिनपुगव तनुभृता गुरु ईप्सितद.) नमिजिनेश्वर संसारी प्राणियो के गुरु हैं और इच्छित वस्तु के दाता हैं। (खलु तव तीर्थ-कृत पिता विजयमहानृप) आपके तीर्थंकर के पिता विजय महाराज हैं (ते जननी गुणमणि वप्पिला भुवि सुतवती) आपकी माता गुणमणि स्वरूप 'वप्पिला' देवी जगत में पुत्रवती हैं। (वरमिथिलापुरी सुरभृता किल रत्नभृता) श्रेष्ठ मिथिलापुरी देवो से भरी वास्तव मे रत्नो से भरित हुई ॥१॥

अर्थ—हे भगवन् ! आपका नाम नमिनाथ है, आप शरीर धारी प्राणियो के गुरु हैं और इच्छित वस्तु को देने वाले हैं। आप तीर्थंकर हैं आपके पिता विजय महाराजा हैं और आपकी माता वप्पिला देवी गुणमणि स्वरूप जगत् मे श्रेष्ठ पुत्रवती है। श्रेष्ठमिथिलापुरी आपकी जन्म भूमि होने से वह देवो के आगमन से व्याप्त है और रत्नो से भरी हुई है।

अन्वयार्थ—(य जिन आश्विने असिते द्वितीयदिने सुदिवश्च्युत) जो जिनेन्द्र आसोजवदी दूज के दिन स्वर्ग से च्युत हुये थे। (हि शुचौ असिते दशमीतिथौ मन्दरे जननोत्सव) और जिनका आषाढ वदी दशमी तिथि मे सुमेरुपर्वत पर जन्माभिषेक हुआ है। (भगवान् नमि तत्तिथौ जिनरूपभृत् वन आश्रित) भगवान् नमिनाथ ने उसी जन्मतिथि मे जिन-मुद्रा को धारण कर वन का आश्रय लिया (मार्गशीर्षसितैकया दशमीतिथौ किल केवली) मगसिर सुदी ग्यारस के दिन आप केवली हो गये ॥२॥

अर्थ—नमिनाथ भगवान् आसोज वदी दूज के दिन स्वर्ग से च्युत होकर माता के गर्भ मे आये। आषाढ़ वदी दशमी के दिन आपने जन्म लिया तब देवों ने सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक किया। इसी आषाढवदी दशमी के दिन जिनमुद्रा धारण कर दीक्षित हो वन का आश्रय लिया। पुन मगसिर वदी एकादशी को आपके दिव्य केवलज्ञान प्रगट हुआ।

अनुष्टुप् छन्द—

चतुःशून्यैकवर्षायुः,
पंचदशधनुस्तनुः।
नमिरुत्पलचिन्हो मां,
पायाज्जाम्बूनदच्छविः ॥३॥

मेघविस्फूर्जिता छन्द[1]— (१९ अक्षरी)

चतुर्दश्यां स्वामी,
शिवपदमगान्माधवे[1] कृष्णपक्षे।
विशुद्धः सिद्धोऽभूत्,
स्वरसपरमानंदतृप्तो जिनेशः ॥
स्वकं स्वस्मिन् ध्यात्वा,
स्वयमपि जिनः, स्यात्स्वयंभूः शतश्रीः।
नमामि त्वां स्वामिन्! अहमपि च मे,
स्यात्समाधिश्च बोधिः ॥४॥

उन्नीस अक्षरी छंद—

१ मेघ विस्फूर्जिता छन्द—

रसर्त्वश्वैर्यमौ न्सौ ररगुरुयुतौ मेघविस्फूर्जितास्यात्—

I S S S S S I I I I I S S I S S I S S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक यगण, एक मगण, एक नगण, एक सगण, दो रगण और एक गुरु होता है, उसे 'मेघविस्फूर्जिता' छन्द कहते हैं। इसमे ६-६ और ७ वर्णों पर यति होती है।

---

१ वैशाख।

अन्वयार्थ—(चतु. शून्यैकवर्षायु:) दस हजार वर्ष की आयु थी, (पञ्चदशधनुस्तनु:) पन्द्रह धनुष ऊँचाई थी, (उत्पलचिन्ह:) नील कमल चिन्ह था (जांबूनदच्छवि:) सुवर्ण के समान शरीर की कान्ति थी (नमि: मां पायात्) वे नमिनाथ मेरी रक्षा करें ॥३॥

अर्थ—भगवान नमिनाथ की आयु दस हजार वर्ष की थी, शरीर की ऊँचाई पन्द्रह धनुष थी, अर्थात् १५ × ४ = ६० हाथ थी। नील कमल का चिन्ह था और शरीर का वर्ण स्वर्ण के समान सुन्दर था ऐसे नमिनाथ भगवान मेरी रक्षा करें।

अन्वयार्थ—(माधवे कृष्ण चतुर्दश्यां स्वामी शिवपद अगात्) वैशाख वदी चौदस के दिन स्वामी नमिनाथ ने मोक्षपद को प्राप्त कर लिया (स्वरसपरमानदतृप्तः जिनेशः विशुद्ध अभूत्) अपने आत्मा के रस रूप परमानन्द से तृप्त हुये जिनेद्रदेव विशुद्ध होकर सिद्ध हो गये। (नमीश जिन: स्वयं अपि स्वस्मिन् स्वकं ध्यात्वा स्वयंभू स्यात्) नमिनाथ जिनदेव ने स्वयं ही अपने मे अपने को ध्याकर 'स्वयंभू' हो गये। (स्वामिन्!) (हे स्वामिन्!) (अहं अपि त्वां नमामि) मैं भी आपको नमस्कार करता हूँ (च मे समाधि. बोधि च स्यात्) भगवन्! मुझे समाधि और बोधि होवे ॥४॥

अर्थ—वैशाख वदी चौदस को आपने मोक्ष पद प्राप्त किया। आप अपनी आत्मा के रस मय परमानन्द से तृप्त हुये कर्मों के नाश से विशुद्ध सिद्ध हो गये। हे नमिनाथ जिनेश्वर! आप स्वयं ही अपने मे अपने को ध्याकर 'स्वयंभू' हो गये हैं। हे स्वामिन्! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे प्रभो! आपके प्रसाद से मुझे बोधि और समाधि की प्राप्ति होवे।

श्री नेमिजिन स्तोत्र

शार्दूलविक्रीडित छन्द[1]—(१९ अक्षरी)

यावन्नो प्रभवेच्च नेमिभगवन् ! तेंऽघ्रिप्रसादोदयः ।
तावद्दुःखमुपैति जीवनिवहः, तावत्सुखं नाश्नुते ।।
यावद्भक्तिरतस्य मे नहि भवेद्, दृष्टिः प्रसन्ना प्रभोः ।
तावद्धि प्रभवेत् स तापजनको, दुर्वारकर्मोदयः ।।१।।

मत्तेभविक्रीडित छन्द[2]—(२० अक्षरी)

गुणसिन्धोर्जनकः समुद्रविजयो, द्वारावतीशासकः ।
शिवदेव्यां भगवानवाप शिवद, गर्भागम मंगलं ।।
सुरवृंदैरभिपूजितौ च पितरौ, षष्ठ्या सिते कार्तिके ।
सुरशैले जननोत्सवोऽस्य समभूत्, षष्ठ्या सिते श्रावणे ।।२।।

उन्नीस अक्षरी छन्द—

१ शार्दूलविक्रीडित छन्द—

सूर्याश्वैर्मसजस्तताः सगुरवः शार्दूलविक्रीडितम् ।
S S S I I S I S I I I S S S I S S I S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण, एक सगण, एक जगण, एक सगण, दो तगण और एक गुरु हो, उसे 'शार्दूलविक्रीडित' छन्द कहते हैं ।

बीस अक्षरी छन्द—

२ मत्तेभविक्रीडित छन्द—

सभरा नम्यलगिति त्रयोदशयतिर्मत्तेभविक्रीडितम्—
I I S S I I S I S I I I S S S I S S I S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक सगण, एक भगण, एक रगण, एक नगण, एक मगण, एक यगण एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'मत्तेभविक्रीडित' छन्द कहते हैं । इस छन्द का लक्षण इस प्रकार भी है—"सभरान्मौ यलगास्त्रयोदशयतिमत्तेभविक्रीडितम् ।" इसमे १३ और ७ वर्णों पर यति होती है ।

नेमिनाथ जिनस्तोत्र

अन्वयार्थ—(नेमिभगवन् ! यावत् ते अंघ्रिप्रसादोदय. च नो प्रभवेत्) हे नेमिनाथ भगवन् ! जब तक आपके चरणो का प्रसादोदय नहीं होता है (तावत् जीवनिवह. दु ख उपैति) तब तक जीव समूह दु.ख को प्राप्त करता है (तावत् सुख न अश्नुते) तब तक सुख को नहीं प्राप्त कर सकता है (यावत् भक्ति रतस्य मे प्रभोः दृष्टि प्रसन्ना नहि भवेत्) जब तक भक्ति मे रत हुये मुझ पर आप प्रभु की दृष्टि प्रसन्न नही होगी (तावत् हि स. ताप-जनक दुर्वारकर्मोदय प्रभवेत्) तब तक ही वह ताप को उत्पन्न करने वाला दुर्वार कर्मोदय प्रभाव दिखाता है ॥१॥

अर्थ—हे नेमिनाथ भवगन् ! जब तक आपके चरणो का प्रसादोदय नही होता है तब तक ये ससारी जीव दु खो को ही प्राप्त करते रहते हैं, तब तक सुख नहीं प्राप्त कर पाते है। हे देव ! जब तक भक्ति में तत्पर हुए मुझ पर आपकी दृष्टि प्रसन्न नही होगी तभी तक यह सताप का जनक दुर्वार कर्मोदय अपना प्रभाव दिखलाता रहेगा। तात्पर्य यही है कि हे नाथ ! आप मुझ भक्त पर अपनी दृष्टि प्रसन्न कीजिये।

अन्वयार्थ—(द्वारावतीशासक समुद्रविजय) द्वारावती के राजा समुद्रविजय (गुणसिन्धो. जनक) गुणसमुद्र भगवान के पिता हैं। (भगवन् शिवदेव्या शिवद मगल गर्भागम अवाप) भगवान ने शिवादेवी माता के उदर मे कल्याणकारी, मगल रूप गर्भागम प्राप्त किया। (कार्तिके सिते षष्ठ्या) कार्तिक सुदी छठ को (सुरवृन्दै पितरौ च अभिपूजितौ) देवो ने माता पिता की पूजा की (श्रावणे सिते षष्ठ्या) सावन सुदी छठ के दिन (अस्य सुरशैले जननोत्सव समभूत्) इन भगवान का सुमेरुपर्वत पर जन्मोत्सव हुआ ॥२॥

अर्थ—द्वारावती नगरी के राजा समुद्रविजय भगवान के पिता थे और शिवादेवी महारानी भगवान की माता थी। भगवान ने कार्तिक सुदी छठ के दिन माता के गर्भ मे निवास किया वह गर्भ कल्याणक जगत के लिये कल्याणकारी मगलस्वरूप हुआ था। उस समय देवो ने आकर माता-पिता की पूजा की थी। अनतर सावन सुदी छठ के दिन भगवान ने जन्म लिया तब देवो ने भगवान का जन्माभिषेक सुमेरुपर्वत पर किया था।

सुवदना छन्द[1]—(२० अक्षरी)

मुक्त्वा त्वं प्राणिबंध, किल नभसि[1] सिते, षष्ठ्यां जिनपतिः ।
त्यक्त्वा राजीमतीं च, त्रिदशपतिनुतां, दीक्षाश्रियमितः ॥
कैवल्यश्रीः वृणीते, स्वयमपि जिनपं, नीलोत्पलनिभ ।
शुक्लाद्ये ह्याश्विनेऽसौ, सकलगुणनिधिः, विध्वस्तमदनः ॥३॥

वृत्त छन्द[2]—(२० अक्षरी)

यः शुचौ[2] सिते सुसप्तमीतिथौ शिवश्रिय श्रितो जिनोऽस्ति ।
जात ऊर्जयंतपर्वतः सुपूज्यता व्रतैर्युतार्यिकापि ॥
सोग्रसेनतुक् महाव्रतैर्गुणैर्भृता किलैकशाटिका च ।
मे मनः पुनीहि सतत जिनेश्वरो वसेत् मनोम्बुजे हि ॥४॥

---

१ सुवदना छन्द—

ज्ञेयासप्ताश्वषड्भिर्मरभनययुतौ म्लौगः सुवदना—

S S S S I S S I I I I I I S S S I I I S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण, एक रगण, एक भगण, एक नगण, एक यगण, एक भगण, एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'सुवदना' छन्द कहते हैं। इसमे ७-७-६ वर्णों पर यति होती है।

२ वृत्त छन्द—

भ्रोरजौ गलौ भवेदिहेदृशेन लक्षणेन वृत्तनाम् ॥

S I S I S I S I S I S I S I S I S I S I

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक रगण, एक जगण, एक रगण, एक जगण, एक रगण, एक जगण, एक गुरु और एक लघु होता है, उसे 'वृत्त' छन्द कहते है।

---

१. श्रावणे । "श्रावणे तु स्यान्नभा श्रावणिकश्च" इत्यमरकोषे । २ आषाढे ।

अन्वयार्थ—(त्व जिनपति. प्राणिबंध मुक्त्वा) आप जिननाथ ने प्राणियो को बन्धन से छुडाकर (किल नभसि सिते षष्ठ्यां च राजीमतीं त्यक्त्वा) सावन सुदी छठ के दिन राजीमती को भी छोड़ कर (त्रिदश-पतिनुता दीक्षाश्रिय इत) इन्द्रो से पूज्य ऐसी दीक्षा लक्ष्मी को प्राप्त कर लिया। (कैवल्यश्री· स्वयं अपि नीलोत्पलनिभं जिनप वृणीते) कैवल्य लक्ष्मी ने तब स्वय ही नीलकमल के समान कांति वाले आप जिनेंद्रदेव को वरा था। (आश्विने हि शुक्ला द्यो) आसोज सुदी एकम के दिन ही (असो विध्व-स्तमदन सकलगुणनिधि) वे भगवान् कामदेव के विजयी और सपूर्ण गुणो के निधान हुये हैं ॥३॥

अर्थ—आप जिनेन्द्रदेव ने पशुओ को बन्धन से छुडाकर सावन सुदी छठ के दिन राजीमती को छोडकर इन्द्रो से पूज्य दीक्षा ग्रहण कर ली था। पुन आसोजसुदी एकम के दिन आपको केवलज्ञान प्रगट हुआ था। आपके शरीर का वर्ण नीलकमल के समान सुन्दर था आप कामदेव को जीतकर सम्पूर्ण गुणो के निधान हो गये हो।

अन्वयार्थ—(य जिन शुचौ सिते ससप्तमी तिथौ शिवश्रिय श्रित: अस्ति) जिस जिनेन्द्र भगवान ने आषाढ़ सुदी सप्तमी के दिन मुक्ति लक्ष्मी का आश्रय लिया। (ऊर्जयन्तपर्वत सुपूज्यता जात) ऊर्जयन्त पर्वत भी पूज्यता को प्राप्त हो गया (व्रतै युता आर्यिका अपि) व्रतो से सहित आर्यिका भी (सा उग्रसेनतुक्) वह उग्रसेन राजा की पुत्री पूज्यता को प्राप्त हो गई। (महाव्रतै गुणै भृता किल एकशाटिका च) जो कि महाव्रतो से और गुणो से भरित और एक साडी मात्र परिग्रह वाली थी। (भो जिनेश ! मे मन. पुनीहि) हे जिनेद्र ! मेरा मन पावन करे (हि सतत मनोम्बुजे वसे.) और सदा आप मेरे मनकमल मे निवास करे ॥४॥

अर्थ—इन नेमिनाथ भगवान ने आषाढ सुदी सप्तमी के दिन मुक्ति लक्ष्मी को प्राप्त किया है। भगवान् के मुक्ति प्राप्ति से ऊर्जयन्त पर्वत भी पूज्य हो गया और वह व्रतो से युक्त राजीमति आर्यिका भी पूज्य हो गई जो कि राजा उग्रसेन की कन्या थी और महाव्रतो से तथा गुणो से परिपूर्ण एक साडी धारण करने वाली थी।

हे जिनेन्द्रदेव ! आप मेरे मन को पवित्र करे और मेरे मन कमल मे सदा विराजमान रहे।

प्रमदानन छन्द[1]—(२० अक्षरी)

भववारिधौ ब्रुडता मया कथमप्यवाप्य सुशर्मदां ।
व्रतशीलसंयमसंपदं त्वधुना प्रमाद इहास्तु मा ।।
प्रभुनेमिनाथ ! प्रयच्छ शांतिमभीप्सितामविनश्वरीं ।
प्रणमाम्यहं जिनपुंगवं सितशंखचिन्हसमन्वितम् ।।५।।

अनुष्टुप् छन्द—

दशचापसमुत्सेधः, सहस्राब्दायुरन्वितः ।
सिद्धिकांतापतिर्नेमिः, मे स्यात् सर्वार्थसिद्धये ।।६।।

श्री पार्श्वजिन स्तोत्र

स्रग्धरा छन्द[2]—(२१ अक्षरी)

श्रीमान् पार्श्वो जिनेन्द्रः, परमसुखरसानन्दकवैकपिंडः ।
चिच्चैतन्यस्वभावी, भुवि सकलकलेः, कुण्डदण्डप्रचण्डः ।।
भ्राजिष्णुस्त्व सहिष्णुः, कमठशठकृतेनोपसर्गस्य जिष्णुः ।
त्वां भक्त्या नौमि नित्य, समरसिकमना, मे क्षमारत्नसिद्ध्यै ।।१।।

---

१. प्रमदानन छन्द—

'सजजा भरौ सलगाश्च चेदुदितं तदा प्रमदाननम् ।'

।।ऽ ।ऽ ।।ऽ। ऽ।।ऽ।ऽ ।।ऽ।ऽ

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक सगण, दो जगण, एक भगण, एक रगण, एक सगण, एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'प्रमदानन' छन्द कहते हैं।

इक्कीस अक्षरी छन्द—

२ स्रग्धरा छन्द—

'म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् ।'

ऽ ऽऽऽ ।ऽऽ ।। ।।। ।ऽ ऽ ।ऽ ऽ ।ऽऽ

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण, एक रगण, एक भगण, एक नगण और तीन यगण होते हैं, उसे 'स्रग्धरा' छन्द कहते है। इसमे ७-७ और ७ पर यति होती है।

अन्वयार्थ—(भववारिधौ ब्रुडता मया कथ अपि) ससारसमुद्र मे डूबते हुये मैंने जैसे तैसे (व्रतशीलसयमसंपद) व्रतशील सयम की सपत्ति (सुशर्मदा) मोक्ष देने वाली ऐसी सपत्ति (अवाप्य) प्राप्त की है (तु अधुना प्रमाद इह मा अस्तु) उसमे अब मेरा यहाँ प्रमाद न होवे। (प्रभु नेमिनाथ! अविनश्वरी अभीप्सिता शांति प्रयच्छ) हे नेमिनाथ भगवन्! मुझ अविनाशी इच्छित शाति को देवो (सितशखचिह्न समन्वित जिनपुगव प्रणमामि) सफेद शख चिह्न से चिह्नित ऐसे जिनपुगव को मै नमस्कार करता हूँ ।।५।।

अर्थ—हे भगवन्! इस ससार समुद्र मे डूबते हुये मैंने बडी मुश्किल से मोक्ष को प्रदान करने वाली ऐसो व्रतशील और सयमरूपी सम्पत्ति प्राप्त की है, यहाँ अब उसमे प्रमादी न होऊ। हे नेमिनाथ भगवन्! मुझे अविनाशी और अभीप्सित शाति प्रदान कीजिये। आपका श्वेतशख का चिह्न है, आप जिनपुगव हैं। मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

अन्वयार्थ—(दशचापसमुत्सेध) दस धनुष की ऊँचाई थी, (सहस्राब्दायुरन्वित) एक हजार वर्ष की आयु थी, (सिद्धिकातापति नेमि) सिद्धिकाता के स्वामी नेमिनाथ (मे सर्वार्थसिद्धये स्यात्) मेरी सर्व अर्थ सिद्धि के लिये होवे ।।६।।

अर्थ—हे भगवन्! आपके शरीर की दस धनुष की ऊँचाई थी अर्थात् १०×४=४० हाथ थी। आपकी आयु एक हजार वर्ष की थी। ऐसे सिद्धिकाता के पति नेमिनाथ भगवान् मेरे सवमनोरथ सिद्धि के लिये होवे।

पार्श्वनाथ जिनस्तोत्र

अन्वयार्थ (श्रीमान् पार्श्व जिनेन्द्र) श्रीमान पार्श्वनाथ भगवान (परमसुखरसानदकदैकपिंड) परम सुखरस रूप आनन्द कन्द के पिड ही हैं। (चिच्चैतन्यस्वभावी) चिच्चैतन्य स्वभाव वाले हैं। (भुवि सकलकलेकुण्डदण्डप्रचण्ड) इस भूतल पर सम्पूर्ण पाप के समूह को नष्ट करने मे कुशल हैं। (त्व भ्राजिष्णु) आप देदीप्यमान हैं (कमठशठकृतेनोपसर्गस्य जिष्णु सहिष्णु) कमठदुष्ट के द्वारा किये गये उपसर्ग को जीतने वाले होने से महा सहनशील है। (त्वा भक्त्या नौमि नित्य, मैं भक्ति से आपको ही नमस्कार करता हूँ। (समरसिकमना) आप समतारस के रसिकचित्त वाले हैं (मे क्षमारत्नसिद्ध्यै) मेरे क्षमारत्न की सिद्धि के लिये होवे ।।१।।

अर्थ—भगवान् पाश्वनाथ अन्तरग-बहिरग लक्ष्मी के स्वामी है, परमसुख अमृतरूप आनन्दकन्द के एक पिडस्वरूप हैं। चित् चैतन्य स्वभावी हैं। इस भूतल पर सम्पूर्ण पाप समूह को नष्ट करने मे महान् चतुर है। आप देदीप्यमान स्वरूप हैं, कमठ शत्रु के द्वारा किये गये उपसर्ग के विजेता हैं, महान् सहनशील प्रसिद्ध हैं। मैं आपको भक्ति से नित्य ही नमस्कार करता हूँ। आप समतारस से पूरितमना हैं आप मेरे क्षमारत्न की सिद्धि के लिये होवें।

मत्तविलासिनी छन्द[1]—(२१ अक्षरी)

[1]माधवमास्यसिते द्वितये दिवसे किल गर्भमितः प्रभुः।
पौषसुमास्यसितैकयुता दशमीदिवसे जनिमाप सः ॥
जन्मतिथौ च दिशावसनो नवहस्ततनुः खलु तीर्थकृत्।
शालिनवांकुरसद्द्युतिमान् शतवर्षमितायुरवेत् स मां ॥२॥

प्रभद्रक छन्द[2]—(२२ अक्षरी)

ध्याननिमग्नपार्श्वमुनिपं, विलोक्य कमठासुरः कुपितवान्।
मूसलधारयोग्रपवनैर्भयकरमहोपसर्गमिति सः ॥
वन्हिकणान् ववर्ष दृषदः, पिशाचपरिवेष्टितश्च कृतवान्।
मदरशैलवद्दृढमनाः, चचाल नहि योगतो जिनवरः ॥३॥

---

१ मत्तविलासिनी छन्द—

मौ भभभाश्च भरौ यदि कीर्तय पुत्रक ! मत्तविलासिनीम् ॥

S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे छह भगण और एक रगण होता है, उसे 'मत्तविलासिनी' छन्द कहते हैं।

बाईस अक्षरी छन्द—

२ प्रभद्रक छन्द—

भो नरना रनावथ गुर्दिगर्कविरमं प्रभद्रकमिदम्।

S I I S I S I I I S I S I I I S I S I I I S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक भगण, एक रगण, एक नगण, एक रगण, एक नगण, एक रगण, एक नगण और एक गुरु होता है, उसे 'प्रभद्रक' छन्द कहते हैं। इसमे दिक्–१०, अर्क–१२, वर्णों पर यति होती है।

---

१ वैशाखे।

अन्वयार्थ—(माधवमासि असिते द्वितये दिवसे) वैशाख वदी दूज के दिन (प्रभु: किल गर्भं इत:) प्रभु गर्भ में आये। पौषसुमासि असिता एक-युतादशमी दिवसे) पौष माह की ग्यारस के दिन (स: जनि आप) उन्होंने जन्म लिया। (जन्मतिथौ च दिशावसन:) और जन्मतिथि मे ही दिशावस्त्र-धारी हुये। (नवहस्ततनु: खलु तीर्थकृत्) नव हाथ का आपका शरीर था आप तीर्थ के कर्ता थे (शालिनवाकुरसद्द्युतिमान्) हरे धान्य के अकुर के समान उत्तम कांतिवाले थे (शतवर्षमितायु) सौ वर्ष की आपकी आयु थी (स: मा अवेत्) वे मेरी रक्षा करे ॥२॥

अर्थ—हे भगवन्! वैशाख वदी दूज के दिन आप गर्भ मे आये और पौष वदी ग्यारस के दिन आपका जन्म कल्याणक हुआ है। इस पौष वदी ग्यारस के दिन ही आपने दीक्षा लेकर दिगम्बर वेष धारण किया था। आपके शरीर की ऊँचाई नव हाथ थी। आपका वर्ण हरे धान्य के अकुर के समान सुन्दर था और आपकी आयु सौ वर्ष की थी। ऐसे पार्श्वनाथ भगवान मेरी रक्षा करे।

अन्वयार्थ—(ध्याननिमग्नपार्श्वमुनिप) ध्यान मे लीन हुये पार्श्व-नाथको (विलोक्य) देखकर (कमठासुर कुपितवान्) कमठासुर देव कुपित हुआ (स मूसलधारया उग्रपवनै) उसने मूसलजलधारा से उग्रपवन से (भयकर महोपसर्गं इति च कृतवान्) भयकर महाउपसर्ग किया (पिशाच-परिवेष्टित) पिशाच से परिवेष्टि होता हुआ (वान्हिकणान् च दृषद ववर्ष) अग्निकणो को और पत्थर को वर्षाया। (मदरशैलवत् दृढ जिनवर. योगत नहि चचाल) सुमेरु पर्वत के समान अचल महामना जिनराज योग से विचलित नही हुये ॥३॥

अर्थ—हे भगवन्! आपको ध्यान मे निमग्न देखकर कमठासुर कुपित हो उठा। तब उसने मूसल जल धारा, भयकर आधी से आपके ऊपर घोर उपसर्ग किया और तो क्या पिशाचो से वेष्टित होकर उसने बहुत से अग्नि के कण वर्षाये और खूब पत्थर वर्षाये। किन्तु जिनेद्रदेव सुमेरु पर्वत के समान अकम्प रहे, ध्यान से चलायमान नही हुये।

अश्वललित छन्द[1]—(२३ अक्षरी)

फणपतिरासनस्य चलनात् त्वर, सह समाययौ वनितया ।
असितमधौ[1] चतुर्दश दिने, सुबोधरविरुद्ययौच जिन ! ते ॥
गलितमदस्तदा स कमठासुरो जिनविभुं श्रितः सदसि वै ।
जिनवचनौषध किल पपौ, समस्तभवरोगशांतकरणं ॥४॥

मत्ताक्रीडा छन्द[2]—(२३ अक्षरी)

संप्राप्नोत् शुक्लासप्तम्या, नभसि[2] वसुगुणमणिखचितवसुधा।
सम्मेदः शैलेन्द्रो वद्यः, सततमपि गणिमुनिसुरखगनरैः ॥
वाराणस्यां ब्राह्मी सूते, स्म विकसितकृतमुनिहृदयकमल ।
सर्पश्चिन्हो भाति त्रेधा, जिनचरणकमलमहर्मपि च नुवे ॥५॥

तेईस अक्षरी छन्द—

१ **अश्वललित छन्द—**

'यदिह नजौ भजौ भजभलगास्तदाश्वललित हरार्कयति तत् ।
। । । । S । S । । । S । S । । । S । S । । । S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक नगण, एक जगण, एक भगण, एक जगण, एक भगण एक जगण, एक भगण, एक लघु और एक गुरु होता है, उसे 'अश्वललित' छन्द कहते हैं। इसमे हर-११ और अर्क-१२ पर यति होती है।

२ **मत्ताक्रीडा छन्द -**

'मत्ताक्रीडा मौ त्नौ नौ नल्गितिभवतिवसुशरदशयतियुता ।'
S S S S S S S S । । । । । । । । । । । । । S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो मगण, एक तगण, चार नगण, एक लघु और एक गुरु होता है उसे 'मत्तक्रीडा' छन्द कहते हैं। इसमे वसु-८, शर-५ और दश वर्णों पर यति होतो है।

---

१ चैत्रे । २ श्रावण ।

अन्वयार्थ—(आसनस्य चलनात् त्वर फणपति वनितया सह समाययौ) आसन के कपित होने से शीघ्र ही धरणेंद्रदेव अपनी भार्या पद्मावती के साथ वहा आ गये। (असितमधौ चतुर्दशदिने) चैत्रवदी चतुर्दशी के दिन (जिन ! च ते सुबोधरवि उदयौ) हे जिनराज ! आपके केवल ज्ञान सूर्य उदित हो गया। (तदा स कमठासुर गलितमद जिनविभु श्रित) तब उस कमठासुर ने मदरहित होकर जिनेन्द्र देव का आश्रय ले लिया (सदसि वै समस्तभवरोगशांत करणं जिनवचनौषध किल पपौ) और पुन समवसरण मे सम्पूर्ण भवरोग को शात करने वाली ऐसी जिनवचनामृत रूप औषधि को पिया ।।४।।

अर्थ—उस समय आसन के कम्पित होने से शीघ्र ही धरणेद्र देव अपनी देवी पद्मावती के साथ वहा आ गये। उपसर्ग दूर होते ही चैतवदी चतुर्दशी के दिन प्रभु को केवलज्ञान रूपी सूर्य उदित हो गया। उस समय उस कमठ ने भी मद को छोडकर जिननाथ का आश्रय ले लिया। उसने समवसरण मे जिनेद्र भगवान के वचनरूपी औषध को पिया जो कि समस्त भव रोग को शात करने वाली थी। अन्यत्र चैत्रवदी चौथ को केवलज्ञान माना है।

अन्वयार्थ-(नभसि शुक्लासप्तम्या वसुगुणमणिखचितवसुधा सप्राप्नोत्) सावन सुदी सप्तमी के दिन आठ गुणमणि से खचित पृथ्वी को प्राप्त कर लिया। (गणिमुनिसुरखगनरै) गणधर मुनिगण, सुरगण, विद्याधर और मनुष्यो से (सम्मेद शैलेन्द्र सतत अपि वद्य) सम्मेद शैल पर्वतराज हमेशा के लिये भी पूज्य हो गया। (वाराणस्या विकसितकृतमुनिहृदयकमल ब्राह्मी सूते स्म) बनारस नगरी मे मुनियो के हृदय कमल को विकसित करने वाले प्रभु को ब्राह्मी माता ने जन्म दिया था। (सर्प चिन्ह भाति) सर्प उनका चिन्ह शोभित था। (अह अपि च जिनचरणकमल त्रेधा नुवे) मैं भी जिनेद्रव के चरणकमल को मनवचनकाय से नमस्कार करता हू ।।५।।

अर्थ—सावन सुदी सप्तमी के दिन भगवान् पार्श्वनाथ ने मोक्ष को प्राप्त किया जहा पर आठ गुण रूपी मणि से शोभित हुये। उस समय से वह सम्मेद शिखर पर्वत भी गणधर मुनिगण, सुरगण, विद्याधर और मनुष्यो से हमेशा के लिये भी वदित हो गया है। अर्थात् भगवान ने इस सम्मेद शिखर से मोक्ष प्राप्त किया था। बनारस नगरी मे प्रभु का जन्म हुआ था। वहा पर ब्राह्मी (वामादेवी) माता ने मुनियो के हृदय कमल को विकसित करने वाले ऐसे प्रभु को जन्म दिया था अर्थात् भगवान की माता का नाम ब्राह्मी देवी था। भगवान का चिन्ह सर्प का था ऐसे पार्श्वनाथ भगवान के चरणकमलो को मै मनवचनकाय से नमस्कार करता हूँ।

अनुष्टुप् छन्द—

विश्वसेनसुतः पार्श्वः,
त्वत्प्रसादात् क्षमाखने ! ।
सर्वंसहा मतिर्मे स्यात्,
तावद्यावत् शिवो न हि ॥६॥

श्री वीर जिनस्तोत्र

मयूरगति छन्द[1]—(२३ अक्षरी)

सिद्धिवधूप्रियनाथ ! जिनेश्वर !
वीर ! महागुणरत्नसुराशे ! ।
कुण्डपुरे त्रिशलाजननी-
बहुपुण्यवती सुरवृन्दनुतासीत् ॥
मगलद भुवि हर्षकर जिन !
गर्भमवाप शुचौ सितषष्ठ्यां ।
सन्मतिदेव ! सदा मम सन्मतये
भवतात् प्रणमामि मुदा त्वां ॥१॥

तेईस अक्षरी छन्द—

१. मयूरगति. छन्द—
'भरभ सप्तभिरत्र कृता गुरुणा गुरुणा च मयूरगति स्यात् ।'
S I I S I I S I I S I I S I I S I I S I I S S
जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे सात भगण और दो गुरु होते हैं, उसे 'मयूरगति' छन्द कहते हैं ।

अन्वयार्थ—(पार्श्वं विश्वसेनसुतः) पार्श्वनाथ विश्वसेन राजा के पुत्र हैं। (क्षमाखने !) हे क्षमा की खान ! (त्वत्प्रसादात् तावत् मे मतिः सर्वंसहा स्यात्) आपके प्रसाद से तब तक मेरी बुद्धि सर्वंसहा होवे (यावत् शिवं नहि) जब तब मुझे मोक्ष प्राप्त नही होवे ॥६॥

अर्थ—भगवान पार्श्वनाथ के पिता का नाम विश्वसेन था। हे क्षमा की खान भगवन् ! आपके प्रसाद से मेरी मति तब तक सर्वंसहा बनी रहे कि जब तक मुझे मोक्ष प्राप्त न हो जाय।

श्री वीरजिन स्तोत्र

अन्वयार्थ—(सिद्धिवधूप्रियनाथ !) हे सिद्धिप्रिया के प्रियतम ! (वीर जिनेश्वर !) हे वीर जिनेश्वर ! (महागुणरत्नसुराशे !) हे महागुण-रत्नो की राशि भगवन् ! (कुण्डपुरे त्रिशला जननी) कुण्डपुर नगर मे त्रिशला माता (बहुपुण्यवती सुरवृन्दनुता आसीत्) बहुपुण्यवती थी और देवो द्वारा भी नमस्कृत थी (जिन ! शुचौ सितषष्ठ्या) हे जिन ! आषाढ सुदी छठ के दिन (भुवि मगलद हर्षकर गर्भं अवाप) पृथ्वी तल पर मगल-दायी और हर्षकारी गर्भकल्याणक प्राप्त किया था। (सन्मतिदेव ! सदा मम सन्मतये भवतात्) हे सन्मतिदेव ! हमेशा मेरी सद्बुद्धि के लिये होवो (त्वा मुदा प्रणमामि) मैं आपको प्रीति से नमस्कार करता हूँ ॥१॥

अर्थ—हे भगवन् ! हे सिद्धिकाता के प्रियतम ! हे वीर जिनेश्वर ! हे महागुण और रत्नो के समुद्र ! कुण्डपुर मे आपने जन्म लिया था, आपकी माता त्रिशला देवी बहुत पुण्यशालिनी थी और तो क्या वे देवो के समूह से भी नमस्कृत थी।

हे जिनराज ! आषाढ सुदी छठ के दिन आपने गर्भ मे निवास किया था। वह गर्भकल्याणक इस भूतल पर मगलदायी और हर्षकारी हुआ था। हे सन्मतिदेव ! आप हमेशा मुझे सन्मति देवो। मैं आपको हर्ष से नमस्कार करता हूँ।

तन्वी छन्द[१]—(२४ अक्षरी)

चैत्रसिते या, जिनजनिरभवत्, सा त्रययुक्तदशमदिवसे वै ।
देवसुरेन्द्रैः, सुरगिरिशिखरे, जन्ममहोत्सवविधिरभिनीतः ॥
मार्गसुकृष्णे, दशमितदिवसे, रत्नमहाव्रतगुणविधृतस्त्व ।
भूर्युपसर्गं भव इति विहितः ध्यानरतो नहि, विचलितचित्तः ॥२॥

क्रौंचपदा छन्द[२]—(२५ अक्षरी)

घातिविघाती केवलबोधः स्फुरितसकलभुवि निजरविरुदितः ।
माधवमासे[१] शुक्लदशम्या त्रिभुवनमिदमिति करतलफलवत् ॥
श्रावण आद्ये गीस्तव दिव्या भविजनहृदयकमलमुदमकरोत् ।
आयुरभूद् द्वासप्ततिवर्षास्तव जिनवर! मम भव शिवगतये ॥३॥

चौबीस अक्षरी छन्द—

१ तन्वी छन्द—

'भूतमुनीनैर्यतिरिह भतनाः स्भौ भनयाश्च यदि भवति तन्वी ।'

S I I S S I I I I I I S S I I S I I I I I I S S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक भगण, एक तगण, एक नगण, एक सगण, दो भगण, एक नगण और एक यगण होते हैं। उसे 'तन्वी' छन्द कहते हैं। इसमे भूत–५, मुनि–७, इन (सूर्य)–१२ वर्णो पर यति होती है।

पच्चीस अक्षरी छन्द—

२ क्रौंचपदा छन्द—

क्रौञ्चपदा भ्मौ स्भौ ननानान्ना विषुशरवसुमुनिविरतिरिह भवेत् ।

S I I S S S I I S S I I I I I I I I I I I I I I S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक भगण, एक मगण, एक सगण, एक भगण, चार नगण और एक गुरु होता है, उसे 'क्रौञ्चपदा' छन्द कहते हैं। इसमे पाच, पाच, आठ और सात वर्णों पर यति होती है।

---

१ वैशाख महीना।

अन्वयार्थ—(चैत्रसिते या जिनजनि. अभवत् सा त्रययुक्तदशमदिवसे वँ) चैत्रसुदी मे जो जिन जन्म हुआ वह तिथि त्रयोदशी थी। (देवसुरेन्द्रै सुरगिरिशिखरे जन्ममहोत्सवविधि अभिनीत) देवो ने और इन्द्रो ने मेरु-शिखर पर प्रभु की जन्म महोत्सव विधि मनाया था। (मार्गसुकृष्णे दश-मितदिवसे त्व रत्नमहाव्रतगुणविधृत) मगसिर वदी दशमी के दिन आपने महाव्रत और गुणरूपी रत्नो को धारण किया था। (भव इति भूर्युपसर्ग विहित.) भव इस नाम वाले ने बहुत ही उपसर्ग किया (ध्यानरतो नहि विचलित-चित्त) फिर भी ध्यान मे लीन रहे चलचित्त नही हुये ॥२॥

अर्थ—हे भगवन् ! चैत्र सुदी तेरस के दिन आपका जन्म हुआ था, तब देवो ने और इन्द्रो ने सुमेरु पर्वत पर आपका जन्म महोत्सव मनाया था। मगसिर वदी दशमी के दिन आपने जैनेश्वरी दीक्षा ली थी, तब आप महाव्रत गुण और रत्न से विभूषित हुये थे। उस दीक्षित अवस्था मे रुद्र ने आपके ऊपर घोर उपसर्ग किया था, किन्तु आप ध्यान मे अचल रहे थे, चलायमान नही हुये थे।

अन्वयार्थ—(घातिविघाती) घातिया कर्मों का विघात करने वाला (केवलबोध) केवलज्ञान (स्फुरितसकलभुवि) सकल भुवन मे स्फुरित होने वाला (निजरवि उदित) निजसूर्य उदित हो गया। (माधवमासे शुक्ल-दशम्या) वैसाख माह की शुक्ला दशमी के दिन (इद त्रिभुवन करतलफलवत् इति) यह तीनो लोक हाथ की हथेली पर रखे हुए फल के समान झलके थे (श्रावणे आद्ये) सावनवदी एकम के दिन (तव दिव्या गी भविजनहृदय-कमलमुद अकरोत्) आपकी दिव्य वाणी ने भव्यो के मन कमल को विक-सित किया था। (तव आयु द्वासप्ततिवर्ष अभूत्) आपकी आयु बहत्तर वर्ष की थी, (जिनवर ! मम शिवगतये भव) हे जिनेन्द्र ! मेरी शिव गति के लिये होवो ॥३॥

अर्थ—हे भगवन् ! घाति कर्मों का घात करके आपने सकल भुवन को प्रकाशमान करने वाला केवलज्ञानरूपी निज सूर्य को प्रगट किया था। वैसाख सुदी दशमी के दिन आपने इस केवलज्ञान के द्वारा सारे तीनो लोको को हथेली पर रखे हुये फल के समान जान लिया था। पुन सावन वदी एकम के दिन आपकी दिव्य ध्वनि खिरी थी जिससे सभी भव्यो के मनकमल खिल गये थे। आपकी आयु बहत्तर वर्ष की थी। हे जिनवर ! आप मेरी शिवगति के लिये होवो—मुझे मोक्षगति प्रदान करो।

तन्वी छन्द—(२४ अक्षरी)

कार्तिकमासे शिवपदमगमत्
कृष्णचतुर्दशदिवसनिशांते ।
तीर्थसुपावापुरमिह भणितं
सप्तकरोच्छ्रित इति कनकाभः ।।
बालयतिस्त्व जिनवरचरमो
मृत्युजयी खलु मृगपतिचिह्न ।
नौम्यतिवीरं शमदमकथक
वीरमनंतमतुलसुखराशिं ।।४।।

स्यादिति वादः सुवचनममृत
ते जिन ! संसृतिगदमपहर्तुं ।
मारजयी त्वं हरमदहरणो
नाथसुवंशतिलक इह लोके ।।
ज्ञानमतिश्रीः झटिति भवतु मे
भक्तिवशात् तव मुनिगणवंद्या ।
स्वात्मजसिद्धिर्ध्रुवसुखजननी
सन्मतिदेव ! सकलविमला स्यात् ।।५।।

अन्वयार्थ—(कार्तिकमासे कृष्णचतुर्दशदिवसनिशाते) कार्तिक मास की कृष्णा चतुर्दशी के रात्रि के अन्त मे (शिवपद अगमत्) मोक्ष को प्राप्त किया (इह तीर्थसुपावापुर भणित) इस मध्यलोक मे पावापुर तीर्थ कहा गया। (सप्तकराच्छ्रित कनकाभ इति) सात हाथ की ऊँचाई थी और सुवर्ण जैसी काति थी (त्व बालयति) आप बाल ब्रह्मचारी हैं। (जिनवर-चरम) अन्तिम तीर्थंकर हैं, (मृत्युजयी खलु मृगपतिचिन्ह) मृत्यु के विजेता हैं और आपका चिन्ह सिंह का है। (शमदमकथक अनत अतुल-सुखराशि वीर अतिवीर नौमि) शम दम को कहने वाले, अनन्त अतुल सुख के सागर वीर, अतिवीर भगवान को मैं नमस्कार करता हूँ ॥४॥

अर्थ—हे भगवन्! आप कार्तिक वदी अमावस्या के प्रत्यूष काल मे पावापुरी से मोक्ष गये हैं इसलिये वह पावापुरी भी तीर्थ बन गया है। आपकी ऊँचाई सात हाथ थी। आपका शरीर सुवर्ण सदृश देदीप्यमान था। आप बाल ब्रह्मचारी हैं। चौबीस तीर्थंकरो मे अन्तिम तीर्थंकर है, मृत्युजयी हैं, आपका चिन्ह शेर का है। आप कषाय के शमन और इन्द्रियो के दमन का उपदेश देने वाले हैं, अनन्त और अतुल सुख की राशि हैं, आप वीर और अतिवीर नाम को धारण करने वाले है। अत मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

अन्वयार्थ—(जिन! ते स्यात् इति वाद सुवचन अमृत) हे जिन! आपके 'कथचित्' इस प्रकार को कहने वाले वचन अमृत स्वरूप हैं। (ससृतिगद अपहर्तृ) ससार रोग को दूर करने वाले हैं (त्व मारजयी हरमदहरण) आप कामदेव के जेता हैं, रुद्र का मद हरण करने वाले हैं। (इह लोके नाथसुवशतिलक) इस लोक मे नाथ वश के तिलक हैं। (तव भक्तिवशात्) आपकी भक्ति के निमित्त से (मुनिगणवद्या ज्ञानमति श्री झटिति मे भवतु) मुनिगणो से वद्य ऐसी ज्ञानमती लक्ष्मी—केवलज्ञान से सहित लक्ष्मी शीघ्र ही मुझे प्राप्त होवे। (सन्मतिदेव!) हे सन्मति-तीर्थंकर! (ध्रुवसुखजननी सकलविमला स्वात्मजसिद्धि. स्यात्) निश्चल सुख को उत्पन्न करने वाली, सपूर्णतया विमल ऐसी आत्मा से उत्पन्न हुई सिद्धि मुझे प्राप्त होवे ॥५॥

अर्थ—हे भगवन्! आपके वचन 'स्यात्' इस प्रकार के वाद-कथन को कहने वाले होने से अमृतमय हैं और ससार रोग को दूर करने वाले हैं। आप कामदेव के विजेता हैं, रुद्र के मद को दूर करने वाले है। हे देव! आप इस लोक मे नाथवश के तिलक हैं अर्थात् नाथवशी हैं। हे भगवन्! आपकी भक्ति के वश से मुझे मुनियो से वद्य ऐसी ज्ञानमती लक्ष्मी—मुक्ति सम्पदा शीघ्र ही प्राप्त होवे और हे सन्मतिदेव! अचल सुख को देने वाली सकल विमल स्वात्मा से उत्पन्न होने वाली सिद्धि मुझे प्राप्त होवे।

अनुष्टुप् छन्द—

वर्धमानो महावीरः,
श्रीमान् सिद्धार्थनन्दनः ।
त्वत्सस्तुतेः स्मृतेश्चापि,
विघ्नौघः प्रलय व्रजेत् ॥६॥

जीयाद्वीरजिनेन्द्रस्य,
शासनं जिनशासन ।
प्रभवेत् वर्धमानस्य,
धर्मचक्रं सदा भुवि ॥७॥

चतुर्विंशति तीर्थंकर स्तोत्र

अनुष्टुप्—

परमानदसम्पन्नान्,
ससारार्णवपारगान् ।
पुरुदेवादिवीरांतान्,
गुणरूपादिना स्तुवे ॥१॥

अन्वयार्थ—(वर्धमान महावीर श्रीमान् सिद्धार्थ नन्दन) वर्धमान महावीर राजा सिद्धार्थ के नन्दन हैं, (त्वत्सस्तुते च स्मृते अपि) आपकी स्तुति से और आपकी स्मृति से भी (विघ्नौघ प्रलय व्रजेत्) विघ्न समूह नष्ट हा जाते हैं ॥६॥

अर्थ—हे भगवन्! आपका नाम वर्धमान है, महावीर है। आप सिद्धार्थ राजा के नन्दन हैं। हे देव! आपकी स्तुति से और स्मृति से भी विघ्नो का समूह प्रलय को प्राप्त हो जाता है।

अन्वयार्थ—(वीरजिनेन्द्रस्य शासन जिनशासन जीयात्) वीर भगवान का शासन वही हुआ जिनशासन जयशाल होवे। (वर्धमानस्य धर्मचक्र सदा भुवि प्रभवेत्) श्री वर्धमान का धर्मचक्र हमेशा भूतल पर प्रभाव फैलाता रहे ॥७॥

अर्थ—महावीर स्वामी का शासन वही हुआ जिनशासन जयशील होवे और श्री वर्धमान भगवान का धर्मचक्र—जैन धर्म सदा इस भूतल पर अपना प्रभाव फैलाता रहे।

चतुर्विंशति तीर्थंकर स्तोत्र

अन्वयार्थ—(परमानदसपन्नान् ससारार्णवपारगान् पुरुदेवादिवीरान्तान्) जो परमानद सम्पन्न हैं, ससार समुद्र से पार हो चुके हैं ऐसे ऋषभदेव से महावीर पर्यंत चौबीस तीर्थंकरो की (गुणरूपादिना स्तुवे) मैं उनके गुण रूप, वश, चिह्न, मुक्तिस्थल आदि के द्वारा स्तुति करता हूँ ॥१॥

अर्थ—जो परम आनद को प्राप्त कर चुके हैं, ससार समुद्र से पार हो चुके हैं ऐसे ऋषभदेव से लेकर महावीर पर्यंत जो चौबीस तीर्थंकर हैं, इन चौबीसो तीर्थंकरो की मैं उनके गुण, रूप, वश आदि के द्वारा स्तुति करता हूँ।

(वंश द्वारा स्तुति)

अपवाह छन्द[1]—(२६ अक्षरी)

शांतिः कुंथुवरजिनप-

निजकुलमणि-भुवनतिलककुरुवंश्यास्ते ।

नेमिः सुव्रतजिन इह,

निजकुलरविरिति हरिनुतयदुवंश्यो च ॥

पार्श्वश्चोग्रकुलतिलक,

इति च महित-सुरनरखगपतिभिर्देवः ।

वीरो नाथकुलसुमणिरपि

मम निजसुखमयशिवततये स्युस्ते ॥२॥

छब्बीस अक्षरी छन्द—

१ अपवाह छन्द—

मो ना. षट् सगगिति यदि नवरसरसशरयतियुतमपवाहाख्यम् ।

ऽ ऽ ऽ ।।। । ।। ।।।।।।।।।।।।।।।।ऽऽऽ

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे एक मगण, छह नगण, एक सगण और दो गुरु होते हैं, उसे 'अपवाह' छन्द कहते हैं। इसमे नौ, छह, छह और पाच वर्णों पर यति होती है ।

वंश का वर्णन

अन्वयार्थ—(शांति कुंथुवर जिनपनिजकुलमणिभुवनतिलककुरुवंश्या ते) श्री शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरनाथ ये तीर्थंकर अपने कुल के मणि और भुवन के तिलक होते हुए भी कुरुवंशी थे। (नेमि सुव्रतजिन इह निजकुलरवि इति च हरिनुतयदुवंश्यौ) नेमिनाथ और भगवान् मुनिसुव्रत जिन ये यदुवंशी थे। (पार्श्व उग्रकुलतिलक च महितसुरनरखगपतिभि देव च इति) भगवान पार्श्वनाथ उग्रवंश के तिलक थे और ये देव, मनुष्य तथा विद्याधरो से पूजित देवाधिदेव थे। (वीर: अपि नाथकुलसुमणि) महावीर भगवान् भी नाथवंश के मणि थे, (ते मम निजसुखमयशिवततये स्यु) ये सभी तीर्थंकर व इनके वंश मुझे अपने सुखमय कल्याण परम्परा के लिए होवे ॥२॥

अर्थ—श्री शांतिनाथ, कुंथुनाथ और अरहनाथ ये कुरुवंश मे उत्पन्न हुए हैं। ये अपने कुल के मणिस्वरूप थे और इस जगत के तिलक थे। भगवान् मुनिसुव्रत और भगवान् नेमिनाथ ये दोनो अपने कुल के सूर्य थे और श्रीकृष्ण नारायण से नमस्कृत थे तथा यदुवंश मे जन्मे थे। भगवान् पार्श्वनाथ उग्रवंश के तिलक थे और देवो से, मनुष्यो से तथा विद्याधरो से पूजित थे। भगवान् महावीर स्वामी नाथवंश के मणि थे—प्रकाशमान सूर्य थे। ये सभी तीर्थंकर व इनके वंश मेरे लिये स्वात्म सुखस्वरूप मोक्ष को प्रदान करे।

भुजगविजृंभित छन्द[1]—(२६ अक्षरी)

इक्ष्वाकौ वंशे शेषाः स्युः,
त्रिभुवनपतिशतविनुताः, स्ववशदिवाकराः।
स्याद्वादाम्भोधेः चन्द्रास्ते,
दुरितरविज-तपनमपाहरतु जिनेश्वराः ॥

स्वात्माधीन सौख्यं लब्ध्वा,
त्रिभुवनशिरसि किल गता, विभाति सदैव ते।
बोधिप्राप्तिं मह्यं सिद्धिं च
जिनवरगुणगणयुतां, दिशतु चतुष्टयीं ॥३॥

---

१ भुजग विजृम्भित छन्द—
वस्वीशाश्वच्छेदोपेत ममतनयुगनरसलगैर्भुजङ्गविजृम्भित।
S S S S S S S S I I I I I I I I I I I S I S I I S I S
जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो मगण, एक तगण, तीन नगण, एक रगण, एक सगण, एक लघु और एक गुरु होते हैं, उसे 'भुजग विजृम्भित' छन्द कहते हैं। इसमे वसु–८, ईश ११ और अश्व ७ वर्णों पर यति होती है।

अन्वयार्थ–(त्रिभुवनपतिशतविनुता स्ववशदिवाकरा शेषा इक्ष्वाको वशे स्यु) तीनो लोको के सौ इद्रों से नमस्कृत और अपने वश के सूर्य ऐसे शेष तीर्थंकर इक्ष्वाकु वश मे हुये हैं। (स्याद्वादाम्भोधे चद्रा ते जिनेश्वरा. दुरितरविजतपन अपाहरन्तु) ये स्याद्वाद रूपी समुद्र के बढाने हेतु चद्रमा हैं ऐसे ये तीर्थंकर मेरे पापरूपी सूर्य से उत्पन्न हुये सताप को दूर करे। (स्वात्माधीन सौख्य लब्ध्वा किल त्रिभुवनशिरसि गता. सदाकाल विभाति) इन सभी तीर्थंकरो ने अपने आत्मा के अधीन सुख को प्राप्त करके तीनलोक के मस्तक पर पहुँच गये हैं वहाँ पर हमेशा हमेशा शोभायमान होते रहेगे। (मह्य बोधिप्राप्ति जिनवरगुणगणयुता चतुष्टयी च सिद्धि दिशतु) ये तीर्थंकर मुझे बोधि की प्राप्ति जिनेंद्र भगवान के गुणसमूह से सहित अनत चतुष्टय को और सिद्धि को प्रदान करे ।।३।।

अर्थ—त्रिभुवन के सौ इद्रो से वदित, अपने वश के भास्कर ऐसे शेष-सत्रह तीर्थंकर इक्ष्वाकुवश मे हुये हैं। ये सभी तीर्थंकर स्याद्वादरूपी समुद्र को बढाने मे चन्द्रमा के समान हैं। मेरे पापरूपी सूर्य से उत्पन्न हुये सताप को—ससार के दु खो को दूर करने वाले होवे। इन सभी तीर्थंकरो ने अपनी आत्मा से उत्पन्न हुये ऐसे अतीन्द्रिय सुख को प्राप्त कर लिया है पुन तीनलोक के अग्रभाग पर जाकर विराजमान हो गये हैं। ये वहाँ पर अनत-अनत काल तक विराजमान रहेगे। ये चौबीसो तीर्थंकर मुझे रत्नत्रय की प्राप्तिरूपबोधि प्रदान करे, तथा जिनेंद्रदेव के गुणो से सहित अनतचतुष्टयरूप आर्हंत्य लक्ष्मी व मुक्ति प्रदान करे।

भावार्थ—चौबीस तीर्थंकरो मे शाति, कुथु और अरनाथ ये तीन तीर्थंकर कुरुवशी हुये हैं। नेमिनाथ और मुनिसुव्रतनाथ यदुवश मे जन्मे हैं। पार्श्वनाथ उग्रवश के तिलक थे। भगवान् महावीर नाथवशी थे शेष सत्रह तीर्थंकर इक्ष्वाकुवश मे जन्मे हैं। इन सभी तीर्थंकरो ने अपनी आत्मा के पूर्णसुख को प्राप्त कर लोक के अग्रभाग को प्राप्त कर लिया है वे सिद्ध भगवान् अब आगे सदाकाल वही विराजमान रहेगे। ये सभी मुझे रत्नत्रय स्वरूप बोधि और अनत चतुष्टयमय सिद्धि को प्रदान करे।

(वर्ण द्वारा स्तुति)

चण्डवृष्टिप्रयातदण्डक छन्द[1]—(२७ अक्षरी)

शशिकरधवलौ सुचन्द्रप्रभः
पुष्पदंतश्च तौ सुव्रतो नेमिनाथः प्रभू ।
शिखिगलसमकांतिमन्तौ सुपद्म-
प्रभो वासुपूज्यो जिनौ पद्मपुष्पच्छवी ॥

मरकतमणिसद्द्युती द्वौ सुपार्श्वश्च
पार्श्वः प्रभू शेषतीर्थंकराः षोडश ।
प्रवरकनकसन्निभा वर्णमूर्त्या
युताश्चाप्यमूर्ताः सुचिन्मूर्तयः पांतु मां ॥४॥

सत्ताईस अक्षरी छन्द—

१ चण्डवृष्टिप्रयातदण्डक छन्द—

'यदिह नयुगलं ततः सप्तरेफास्तदा चण्डवृष्टिप्रयातो भवेद्दण्डकः ।'

। । । । । । ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण और सात रगण हो, उसे 'चण्डवृष्टिप्रयातदण्डक' छन्द कहते हैं। इन छन्दो मे पाद के अन्त मे यति होती है।

वर्ण का वर्णन

अन्वयार्थ—(सुचन्द्रप्रभः च पुष्पदंत शशिकरधवलौ) चंद्रप्रभ भगवान और पुष्पदत भगवान् चंद्रकिरण के समान उज्ज्वल वर्ण के थे (सुव्रत· नेमिनाथ तौ प्रभू शिखिगलसमकातिमन्तौ) मुनिसुव्रतभगवान और नेमिनाथ ये दो प्रभु मयूर कठ के समान नील वर्ण वाले थे। (सुपद्मप्रभ वासुपूज्य जिनौ पद्मपुष्पच्छवी) पद्मप्रभ भगवान और वासुपूज्य भगवान् ये दोनो तीर्थंकर लाल कमल के समान छवि वाले हैं। (सुपार्श्वं च पार्श्वं द्वौ प्रभू मरकतमणिसद्द्युतौ) सुपार्श्वनाथ और पार्श्वनाथ ये दो प्रभु मरकतमणिके समान हरितवर्ण वाले हैं। (शेषतीर्थंकरा षोडश प्रवरकनकसन्निभा) शेष सोलह तीर्थंकर तपाये हुये श्रेष्ठ सुवर्ण के समान कातिवाले हैं। (वर्णमूर्त्या युता अपि अमूर्ता. च चिन्मूर्तय. मा पातु) ये सभी तीर्थंकर वर्ण वाले शरीर से सहित होते हुये भी अमूर्तिक हैं और चैतन्यमूर्तिस्वरूप हैं ये सभी तीर्थंकर मेरी रक्षा करे ॥४॥

अर्थ—चन्द्रप्रभ भगवान और पुष्पदत भगवान चद्रमा की किरणो के समान श्वेत वर्ण के थे। मुनिसुवतनाथ और नेमिनाथ भगवान् मयूर के कठ के समान अथवा वैडूर्यमणि के समान नील वर्ण के थे। पद्मप्रभ और वासुपूज्य भगवान लालकमल के समान वर्ण वाले थे। सुपार्श्वनाथ और पार्श्वनाथ भगवान्, मरकतमणि के समान हरे वर्ण वाले थे। शेष सोलह तीर्थंकर ऋषभदेव आदि तपाये हुये उत्तम सुवर्ण के समान सुन्दर थे। ये सभी तीर्थंकर व्यवहारनय से वर्णमय शरीर से सहित थे तो भी निश्चयनय से वर्णादि से रहित अमूर्तिक थे और चैतन्यमूर्तिस्वरूप थे। ऐसे ये तीर्थंकर भगवान सदा मेरी रक्षा करे।

(निर्वाणभूमि की स्तुति)

प्रचितकदण्डक छन्द[1]—(२७ अक्षरी)

वृषभजिन इह कैलाशशैले शिवं,
प्राप्तवान् वासुपूज्यः सुचम्पापुरे च ।
बलहरिविनुतनेमिः सुधी-
रूर्जयन्तेऽवीरश्च पावापुरे मोक्षमापुः ।।

प्रमदवनयुतसम्मेदशैले जिना
विंशतीर्थंकरास्ते च सिद्धिं प्रजग्मुः ।
अहमपि दृढमनाः पंचकल्याण-
पूजास्थलान्यत्र तत्पावनानि प्रवन्दे ।।५।।

सत्ताईस अक्षरी छन्द—

१ प्रचितक दण्डक छन्द—

प्रचितकसमभिधोधीरधीभिः स्मृतो दण्डको नद्वयादुत्तरैः सप्तभिर्यैः ।
। । । । । । । S S । S S । S S । S S । S S । S S । S S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण में दो नगण और सात यगण हो, उसे 'प्रचितक दण्डक' छन्द कहते हैं ।

निर्वाण क्षेत्र का वर्णन

अन्वयार्थ—(इह वृषभजिन कैलाशशैले शिव प्राप्तवान्) यहां भगवान् वृषभदेव कैलाशपर्वत से मोक्ष गये हैं। (च वासुपूज्य सु चपापुरे) और वासुपूज्य भगवान चपापुर से मोक्ष गये हैं। (बलहरिविनुतनेमि सुधी ऊर्जयते च अतिवीर पावापुरे मोक्ष आपु) बलभद्र और नारायण से नमस्कृत नेमिनाथ भगवान् ऊर्जयत पर्वत से और महावीर भगवान् पावापुर से मोक्ष गये हैं। (च विशतीर्थंकरा जिना प्रमदवनयुतसम्मेदशैले सिद्धि प्रजग्मु) और बीस तीर्थंकर भगवान् प्रमदनाम के वन से सहित ऐसे सम्मेदशिखर पर्वत से मोक्ष गये हैं। (अह अपि दृढमना अत्र तत्पचकल्याण-पूजास्थलानि पावनानि प्रवदे) मैं भी दृढ चित्त होकर यहा उन पवित्र पचकल्याणपूजा के स्थल को वदना करता हूँ ॥५॥

अर्थ—भगवान् ऋषभदेव कैलाशपर्वत से मोक्ष गये हैं। भगवान वासुपूज्य चपापुरी से निर्वाण गये हैं। बलभद्र और नारायण से नमस्कृत नेमिनाथ भगवान गिरनार पर्वत से मोक्ष गये है, महावीर भगवान पावापुरी से मोक्ष गये हैं। शेष बीस तीर्थंकर प्रमदवन से सुशोभित ऐसे सम्मेदशिखर पर्वत से निर्वाण गये हैं। मैं भी यहा एकाग्रचित होकर उन पावन निर्वाणभूमि एव पचकल्याणक पूजा के स्थान की वदना करता हूँ।

(बालयति की स्तुति)

अर्णोदण्डक छन्द[1]—(३० अक्षरी)

प्रणतसुरपतिस्फुरन्मौलिमालामहा-
रत्नमाणिक्यरश्मिच्छटारजितांघ्रे ! प्रभो ! ।
सुरभितभुवनोदर त्वत्पदांभोरुहं
प्राप्य भव्या जनाः सौख्यपीयूषपान व्यधुः ।।

मुनिपतिनुतवासुपूज्यः मल्लिर्जिनो
नेमिपार्श्वौ महावीरदेवश्च पंचेति ये ।
परिणयरहिताः कुमाराश्च निष्क्रम्य
दीक्षावधूटीवरा भक्तितस्तान् सदा नौम्यहं ।।६।।

तीस अक्षरी छन्द—

१ अर्णो दण्डक छन्द—

प्रतिचरणविवृद्धरेफाः स्युरार्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दामशंखादयः ।
। । । । । । S । S S । S S । S S । S S । S S । S S । S S । S S । S

जिस छन्द के प्रत्येक चरण मे दो नगण और आठ रगण हो, उसे 'अर्णोदडक' छन्द कहते हैं ।

पांच बालयति का वर्णन

अन्वयार्थ—(प्रणतसुरपतिस्फुरन्मौलिमालामहारत्नमाणिक्यरश्मिच्छटारंजितांघ्रे ! प्रभो !) नमस्कार करते हुये इन्द्रों के स्फुरायमान मुकुटों में लगी हुई माला में लगे हुए महारत्न और माणिक्य की किरणों की छवि से आपके चरणयुगल रंजायमान हैं, ऐसे हे प्रभो ! (सुरभितभुवनोदरं त्वत्पदाम्भोरुहं प्राप्य भव्याः जनाः सौख्यपीयूषपानं व्यधुः) सुरभित किया है सारे विश्व को जिन्होने ऐसे आपके चरणकमल को प्राप्त करके भव्य जीव सौख्यरूपी अमृत को पीते हैं। (मुनिपतिनुतवासुपूज्य. सुमल्लिः जिनः नेमिपार्श्वौ च महावीरदेव इति ये पच) मुनियो के नाथ गणधरदेवो से नमस्कृत ऐसे वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर भगवान इस प्रकार ये पाच तीर्थंकर (परिणयरहिता च कुमारा. निष्क्रम्य दीक्षावधूटीवराः) ब्याह नही करके कुमार अवस्था में ही दीक्षा लेकर दीक्षारूपी स्त्री के वर हो गये (अह सदा तान् भक्तितः नौमि) मैं हमेशा उन पाच बालयति तीर्थंकरों को भक्ति से नमस्कार करता हूँ ॥६॥

अर्थ—हे प्रभो ! नमस्कार करते हुये इन्द्रो के चमकते हुये मुकुटो मे जो मालाये लटक रही हैं उनमे महारत्न-माणिक्य लगे हुये हैं, उन मुकुटो के रत्नो की किरणों से आपके चरणकमल रजित हो रहे हैं अर्थात् भगवान् के चरणों मे इन्द्रों के नमस्कार करने से उनके मुकुटो के रत्नो की आभा भगवान् के श्रीचरणो में पड रही है। ऐसे इन्द्रो द्वारा नमस्कृत हे भगवन् ! सारे विश्व को गुणसुगन्धि से सुगन्धित करने वाले ऐसे आपके चरणकमलो का आश्रय लेकर भव्यजीवों ने सौख्यरूपी अमृत का पान किया है। आप मुनियो के अधिपति ऐसे गणधर देवो से वंदित हैं। ऐसे वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ पार्श्वनाथ और महावीर स्वामी ये पांच तीर्थंकर विवाह न करके कुमार अवस्था में ही दीक्षा लेकर तपश्चर्यारूपी स्त्री के पति हो गये हैं। उन पाच बालयति तीर्थंकरो को मैं भक्तिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।

अनुष्टुप् छन्द—

पंचकल्याणकैः चिन्हैः,
जन्ममुक्तिस्थलैः कुलैः ।
आयुर्वर्णोच्छितैर्पित्रो-र्नाम्ना
चापि जिनाः स्तुताः ॥७॥

एकशून्यशरद्वय्के,
वीराब्दे हस्तिनापुरे ।
पूर्णिमायां नभः शुक्ले,
पूर्णोऽयं संस्तवस्त्वभूत् ॥८॥

जय कल्याणकल्पद्रुः,
'ज्ञानमत्या' कृतः स्तवः ।
यस्तं नित्यं पठेत् भक्त्या,
स ईप्सितश्रिय श्रयेत् ॥९॥

स्तुति में वर्णित विषय

अन्वयार्थ—(पंचकल्याणकैः चिन्हैः जन्म-मुक्तिस्थलैः कुलैः) पंच-कल्याणक तिथियों से, चिन्हों से, जन्मस्थान और मुक्तिस्थल से, कुल-वंश से, (आयुर्वर्णोच्छ्रितैः च पित्रोः नाम्ना अपि जिना स्तुताः) आयु से, शरीर वर्ण से, शरीर की ऊँचाई से और माता-पिता के नाम से भी यहाँ तीर्थंकरों की स्तुति की गई है ॥७॥

अर्थ—इस चतुर्विंशति स्तोत्र में तीर्थंकरों की पचकल्याणक तिथियो का, उनके चिन्हों का, उनकी जन्मनगरी और निर्वाण भूमि का, उनके वंश का, उन तीर्थंकरों की आयु, शरीरवर्ण और शरीर की ऊँचाई का तथा उनके माता और पिता के नाम का वर्णन किया है। इस प्रकार उन तीर्थंकरों के जीवन परिचय द्वारा उनको स्तुति की गई है।

भावार्थ—यहा एकाक्षरी छन्द से लेकर सत्ताईस अक्षरी छन्दों तक चौबीस तीर्थंकरो की स्तुति की गई है। जिसमे प्रत्येक स्तुति मे उन-उन तीर्थंकरो की पचकल्याणक तिथिया, उन-उन तीर्थंकरो के चिह्न, उन-उन जन्मस्थान, मुक्ति प्राप्त स्थलो का वर्णन है, उन-उन तीर्थंकरो के वंश, आयु, शरीर के वर्ण और ऊँचाई का वर्णन दिया है तथा माता-पिता के नाम भी दिये गये हैं। अत यह स्तोत्र बहुत ही महत्वपूर्ण है।

स्तुति रचना का काल

अन्वयार्थ—(हस्तिनापुरे वीराब्दे एकशून्यशरद्वयंके) हस्तिनापुर क्षेत्र पर वीर नि० सवत् एक, शून्य, पाच और दो अक—२५०१ मे (नभःशुक्ले पूर्णिमायां इय तु संस्तव पूर्णो अभूत्) श्रावणशुक्ला पूर्णिमा तिथि के दिन यह सस्तवन पूर्ण हुआ है ॥८॥

अर्थ हस्तिनापुर तीर्थ क्षेत्र पर पच्चीस सौ एक (२५०१) निर्वाण सम्वत् मे श्रावण सुदी पूर्णिमा के दिन मैंने यह चौबीस तीर्थंकर स्तवन पूर्ण किया है।

स्तुति का सार्थक नाम

अन्वयार्थ—(अय ज्ञानमत्या कृत कल्याणकल्पद्रु स्तव) यह मुझ ज्ञानमती आर्यिका के द्वारा किया गया 'कल्याणकल्पद्रुम' नाम का स्तोत्र है। (य. भक्त्या नित्य त पठत् सः ईप्सितश्रिय श्रयेत्) जो भक्ति से नित्य ही इसको पढ़ेगा वह मनवाछित लक्ष्मी को प्राप्त करेगा ॥९॥

अर्थ—मैंने ज्ञानमती आर्यिका ने यह 'कल्याणकल्पद्रुम' नाम से स्तुति बनाई है। जो भक्त भक्तिपूर्वक नित्य ही इसको पढ़ेगे, वे मनोवाछित लक्ष्मी को प्राप्त करेंगे।

वृत्तरत्नाकरे ख्यातैः,
छन्दोभिः समवृत्तकैः ।
चतुर्विंशजिना भक्त्या,
कल्याणाद्यैः नुता मया ॥१०॥

यावत् जैनेन्द्रधर्मोऽयं,
प्रभवेत् भुवि शांतिकृत् ।
तावत् स्तोत्रमिदं स्थेयात्,
भव्याम्भोजं विकासयन् ॥११॥

इति कल्पतरुस्तोत्रम् ।

छन्दों का वर्णन

अन्वयार्थ—(वृत्तरत्नाकरे ख्यातै समवृत्तकै. छन्दोभि.) 'वृत्तरत्नाकर' नाम के छन्दग्रन्थ मे प्रसिद्ध ऐसे समवृत्त नाम के छन्दो द्वारा (मया भक्त्या कल्याणाद्यै चतुर्विंशजिना नुता) मैंने भक्ति से कल्याणक आदि के द्वारा चौबीस तीर्थंकरो को नमस्कार किया ॥१०॥

अर्थ—वृत्तरत्नाकर नाम का छन्द ग्रन्थ है उसमे समवृत्त छन्दो के भेद हैं। उनमें से श्री छन्द से लेकर अर्णोदण्डक नाम से तीस अक्षरी छन्द तक छन्दो को इन चौबीस तीर्थंकरो के पच्चीस स्तोत्रो मे प्रयोग किया गया है। इन स्तोत्रो मे पचकल्याणक आदि का वर्णन करते हुये स्तुति रचना की गई है।

यह स्तुति अमर रहे

अन्वयार्थ—(यावत् अय जैनेद्रधर्म शातिकृत् भुवि प्रभवेत्) जब तक यह जिनेद्रदेव का धर्म शातिकारी इस जगत् मे प्रभावशील रहे (तावत् भव्याम्भोज विकासयन् इद स्तोत्र स्थेयात्) तब तक भव्यकमलो को विकसित करते हुये यह स्तोत्र स्थित रहे ॥११॥

अर्थ—जब तक यह जिनेद्रदेव का धर्म-जैनधर्म शाति को करने वाला इस पृथ्वी तल पर प्रभावशील रहे तब तक भव्यरूपी कमलो को विकसित करता हुआ यह "कल्याणकल्पद्रुम" स्तोत्र इस जगत् मे विद्यमान रहे।

इति कल्याण कल्पतरु स्तोत्रम्।



छन्द-विज्ञान

मंगलाचरण

सिद्धाः सिध्यंति सेत्स्यति, त्रैकाल्ये ये नरोत्तमाः ।
सर्वार्थसिद्धिदातारः, ते मे कुर्वन्तु मंगलम् ।।१।।

भगवान वृषभदेव ने "सिद्ध नम" मत्र का उच्चारण करके दाहिनी तरफ बैठी हुई "ब्राह्मी पुत्री" को "अक्षरविद्या" और बायी तरफ बैठी हुई "सुदरी पुत्री" को "अकविद्या" पढाई। अक्षरविद्या के अ आ आदि स्वर और क ख ग आदि व्यजन की अपेक्षा दो भेद हैं, इन अक्षरावली को "सिद्धमातृका" भी कहते हैं और इकाई, दहाई आदि स्थानो के क्रम से अकविद्या को गणित शास्त्र कहते हैं। भगवान ने अपनी दोनो पुत्रियो को और भरत आदि एक सौ एक पुत्रो को समस्त विद्याये और कलाये सिखाई थी। सभी विद्याओ मे "वाड्मय" मूल है।

महापुराण मे वाड्मय का लक्षण किया है—

पदविद्यामधिच्छन्दोविचिर्ति वागलकृतिम् ।
त्रयीं समुदितामेता तद्विदो वाड्मय विदु ।।१११।।

तदा स्वायभुव नाम पदशास्त्रमभूत् महत् ।
यत्तत्परशताध्यायै रतिगम्भीरमब्धिवत् ।।११२।।

छन्दोविचितिमप्येव नानाध्यायैरुपादिशत् ।
उक्तात्युक्तादिभेदांश्च षड्विंशतिमदीदृशत् ।।११३।।

प्रस्तार नष्टमुद्दिष्टमेकद्वित्रिलघुक्रियाम् ।
सख्यामथाध्वयोग च व्याजहार गिरापतिः ।।११४।।

उपमादीनलकारास्तन्मार्गं द्वयविस्तरम् ।
दश प्राणानलकारसंग्रहे विभुरभ्यधात् ।।११५।।

वाड्मय के जानने वाले गणधरादि देव व्याकरण शास्त्र, छन्द शास्त्र और अलकार शास्त्र इन तीनो के समूह को वाड्मय कहते हैं। उस समय स्वयभू अर्थात् भगवान् वृषभदेव का बनाया हुआ एक बडा भारी व्याकरणशास्त्र प्रसिद्ध हुआ था उसमे सौ से भी अधिक अध्याय थे और

वह समुद्र के समान अत्यन्त गम्भीर था। इसी प्रकार उन्होने अनेक अध्यायो में छन्द शास्त्र का भी उपदेश दिया था और उसके उक्ता अत्युक्ता आदि छब्बीस भेद भी दिखलाये थे। अनेक विद्याओ के अधिपति भगवान् ने प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, एकद्वित्रिलघुक्रिया, सख्या और अध्वयोग छन्द शास्त्र के इन छह प्रत्ययो का भी निरूपण किया था। भगवान् ने अलकारो का सग्रह करते समय अथवा अलकार सग्रह ग्रन्थ मे उपमा रूपक, यमक आदि अलकारो का कथन किया था, उनके शब्दालकार और अर्थालकार रूप दो भेदो का विस्तार के साथ वर्णन किया था और माधुर्य, ओज आदि दश प्राण अर्थात् गुणो का भी निरूपण किया था।

वर्तमान मे उपलब्ध दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के ग्रन्थो मे सबसे सरल व्याकरण "कातत्र रूपमाला" है। श्री पूज्यपाद आचार्य विरचित जैनेन्द्र व्याकरण के सूत्रो की टीका के निमित्त से अनेक व्याकरण हैं जिनमे से "जैनेन्द्रप्रक्रिया", "शब्दार्णवचन्द्रिका", "जैनेन्द्रमहावृत्ति" ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। "शाकटायन व्याकरण" भी प्रसिद्ध है। अलकार ग्रथो मे "वाग्भटालकार", "काव्यानुशासन" "अलकार-चितामणि" आदि प्रसिद्ध हैं। छन्द ग्रन्थ भी अनेक हैं। "वृत्तरत्नाकर" पुस्तक मे वर्णिक छन्दो के एकाक्षरी से लेकर छब्बीस अक्षरी तक बहुत से छन्द लक्षण मुझे देखने को मिले। उन्ही के आधार से मैंने एकाक्षरी "श्रीछन्द" से लेकर छब्बीस अक्षरी भुजगविजृंभित छन्दो तक एक सौ इकतालिस (१४१) छन्दो मे यह "कल्याण-कल्पतरु" स्तोत्र रचना की है। अन्त मे सत्ताईस अक्षरी दो और तीस अक्षरी एक ऐसे तीन दडक छन्दो का भी प्रयोग हैं। मध्य मे कई जगह "आर्यागीति" और "गीति" ऐसे दो मात्रिक छन्द लिये गये हैं। अत इस स्तोत्र मे एक सौ छयालीस छन्दो को लिया गया है। इस स्तोत्र मे साथ ही साथ छन्दो के नाम दिये गये हैं और नीचे उन छन्दो के लक्षण भी दे दिये गये हैं, जिससे स्तोत्र के पाठको को छन्द ज्ञान भी हो जायेगा। यहा छन्द शास्त्र के ज्ञान के लिये कुछ आवश्यक विषय दिये जा रहे हैं।

छंद शास्त्र के आवश्यक विषय—

आचार्यों ने छन्द के दो भेद कहे हैं—१ मात्रा छन्द और २ वर्ण-छन्द। वर्ण छन्द मे आठ गण होते हैं। उनको कहने वाला सूत्र या श्लोक कठाग्र कर लेना चाहिए।

आठ गणों का सूत्र—

"यमाताराजभानसलगाः ।"

इसी सूत्र से आठ गणो का और लघु-गुरु का अर्थ निकाला जाता है। यथा—

यमाता-यगण। मातारा-मगण। ताराज-तगण।
। ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ।
राजभा-रगण। जभान-जगण। भानस-भगण। नसल-नगण।
ऽ । ऽ । ऽ । ऽ । । । । ।
सलगा-सगण। ल-लघु। गा गुरु।
। । ऽ । ऽ

अथवा दूसरी प्रकार से श्लोक मे—

मस्त्रिगुरुस्त्रिलघुश्च नकारो, भादिगुरुर्पुनरादिलघुर्यः ।
जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः, सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुस्तः ॥

१- म त्रिगुरु—तीन गुरु मगण—ऽ ऽ ऽ
२- त्रिलघु च नकारो—तीन लघु नगण—। । ।
३- भादिगुरुः—आदिगुरु भगण—ऽ । ।
४- पुन आदिलघु य.—आदि लघु यगण—। ऽ ऽ
५- गुरुमध्यगत ज —मध्यगुरु जगण—। ऽ ।
६ रलमध्य —मध्य लघु रगण—ऽ।ऽ
७ अन्तगुरु स —अतगुरु सगण—।।ऽ
८ अन्तलघु तः कथित.—अतलघु तगण—ऽऽ।

गुरु और लघु किन-किन को कहा जाता है ?

सानुस्वारो विसर्गान्तो, दीर्घो युक्तपरश्च य. ।
वा पादान्ते त्वसो ग्वक्रो, ज्ञेयो न्यो मात्रिको लृजुः ॥

अर्थ—अनुस्वार सहित (अं, कं) अन्त मे विसर्ग वाले (अः कः) दीर्घ (आ, का), जिसके आगे का अक्षर संयुक्त है ऐसे सिद्ध, जिष्णु आदि, अक्षर दीर्घ हैं, तथा पाद के अन्त से रहने वाला, आवश्यकयानुसार लघु भी दीर्घ हो जाता है। गुरु का रूप वक्र (ऽ) हैं और लघु का रूप सरल (।) है।

क्रम संज्ञा किसको है ?

पादादाविह वर्णस्य संयोगः क्रमसंज्ञकः ।
पुरःस्थितेन तेन स्याल्लघुतापि क्वचिद् गुरो. ।।

अर्थ—पाद-चरण के आदि में होने वाले सयुक्त अक्षर को "क्रम" सज्ञा है । इस क्रम के पूर्व ह्रस्व अक्षर भी दीर्घ हो जाता है, किंतु कही-कही पर ह्रस्व देखा जाता है । जैसे—

"अल्पव्ययेन सुदरि, ग्राम्यजनो मिष्टमश्नाति ।"

इसमे द्वितीय पाद की आदि के "ग्रा" इस सयुक्ताक्षर की क्रम सज्ञा है । अत इसके पूर्व के "सुन्दरि" के "रि" को गुरु-दीर्घ मानना चाहिये था किंतु ऊपर नियम मे "क्वचित्" शब्द आने से इसे ह्रस्व ही माना गया है क्योकि दीर्घ करने मे छद भग हो जाता । लेकिन यदि यहाँ "सुन्दरी" यह री दीर्घ होता तो उसे ह्रस्व नही कर सकते थे क्योकि लघु नही होता ।

यति किसे कहते हैं ?

प्रत्येक पाद के अन्त मे जो विराम होता है उसे यति कहते हैं । छदो के नियम के अनुसार एक पाद के मध्य मे भी यति होती हैं । जैसे—

तुरगरसयतिनौ ततो गः क्षमा ।

इस क्षमा छद मे एक चरण मे ही सात और छह वर्णों पर यति मानी है ।

छंद शास्त्र में किन-किन शब्दों से क्या-क्या अर्थ लेना ?

अब्धिभूतरसादीनां, ज्ञेयाः संज्ञास्तु लोकतः ।
ज्ञेय पादश्चतुर्थांशो, यतिर्विच्छेदसंज्ञित· ।।

अर्थ—छद शास्त्र मे अब्धि—समुद्र वाचक शब्दो से "चार" भूत से पाँच, रस से छह् लेना । आदि पद से अश्व-घोडा वाचक शब्दो से सात, मुनि वाचक शब्दो से सात, वसु और नाग शब्द से आठ, ग्रह शब्द से नव, दिशा शब्द से दश, रुद्र शब्द से ग्यारह और आदित्य-सूर्यवाची शब्द से बारह सख्या ली जाती है । श्लोक के चौथे भाग को पाद या चरण कहते हैं, प्रत्येक श्लोक मे चार पाद होते हैं । विच्छेद या विराम को "यति" कहते हैं, इसको विरति भी कहते हैं ।

'अलकार चितामणि' ग्रथ मे छद—काव्य रचना करने के लिये कुछ नियम विशेष बताये है उन्हे यहा दिया गया है—

जिनेन्द्र भगवान की स्तुति दिव्यवाणी प्रदान करती है। जो व्यक्ति भक्ति-विभोर होकर जिन भगवान् की स्तुति करता है—गुणस्तवन करता है, उसे दिव्यवचन शक्ति प्राप्त होती है।

काव्य रचना के नियम

वर्णभेद विजानीयात् कवि. काव्यमुखे पुन.।
सद्वर्णं सद्गण कुर्यात्, सपत्सतानसिद्धये[1] ॥८४॥

कवि को काव्य रचना के प्रारम्भ मे ही वर्णो के स्वरूप और भेद को सम्यक् प्रकार जान लेना चाहिये। सम्पत्ति और सन्तान के इच्छुक कवि काव्य के प्रारम्भ मे शुभ वर्ण और शुभ गणो का प्रयोग करे।

काव्य के प्रारम्भ मे उक्त वर्ण और उत्तम गण का प्रयोग करने से पाठक और काव्य निर्माता कवि को शीघ्र ही सम्पत्ति की प्राप्नि होती है तथा जो कवि सद्वर्ण और शुभगण का काव्य के प्रारम्भ मे प्रयोग नही करता उसकी तथा काव्य पाठ की सम्पत्ति और सन्तति की क्षति होती है।

वणो का शुभाशुभत्व—

झ, ज च, छ, ट, ठ, ड, ढ, ण, थ, प, फ, ब, भ, म, र ल, व और द मे ये वर्ण अ और क्ष के बिना अन्य वर्णों के साथ सयुक्त रहने पर काव्य की आदि मे इनका प्रयोग अशुभ माना जाता है तथा उक्त वर्णों के अतिरिक्त अन्य वर्णों का सयोग काव्यारम्भ मे शुभकारक होता है।

गणों के देवता और उनका फल—

मगण के देवता भूमि, नगण के स्वर्ग, मगण के जल और भगण के देवता चन्द्रमा हैं। इन चारो गणो को मागलिक माना गया है। इनका काव्य के प्रारम्भ मे प्रयोग शुभ कारक है।

तगण के देवता आकाश, जगण के सूर्य, रगण के अग्नि और सगण के देवता पवन हैं। ये चारो अशुभ हैं, अत काव्यारम्भ मे इनका प्रयोग वर्जित है। नगण को मध्यस्थ अर्थात् सामान्य माना गया है।

---

१ अलकार चिन्तामणि पृ० २० से।

गणदेवता और फलबोधक चक्र—

नाम	स्वरूप	देवता	फल	शुभाशुभत्व
यगण	। ऽ ऽ	जल	आयु	शुभ
मगण	ऽ ऽ ऽ	पृथ्वी	लक्ष्मी	शुभ
तगण	ऽ ऽ ।	आकाश	शून्य	अशुभ
रगण	ऽ । ऽ	अग्नि	दाह[1]	अशुभ
जगण	। ऽ ।	सूर्य	रोग	अशुभ
भगण	ऽ । ।	चन्द्रमा	यश	शुभ
नगण	। । ।	स्वर्ग	सुख	शुभ
सगण	। । ऽ	वायु	विदेश	अशुभ

पदारम्भ मे त्याज्य वर्ण—

पद के प्रारम्भ मे विन्दु, विसर्ग, ज और ञ का व्यवहार नही करना चाहिए। इसी प्रकार काव्य के प्रारम्भ मे भ और ष वर्ण का का प्रयोग सर्वथा त्याज्य है।

काव्य के प्रारम्भ मे स्वरवर्णों के प्रयोग का फल—

काव्य के प्रारम्भ मे "अ" अथवा "आ" के होने से अत्यन्त प्रसन्नता, इ या ई के होने से आनन्द, उ या ऊ के होने से धन लाभ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ के होने से अपयश ए, ऐ, ओ, औ के रहने से कवि, नायक तथा पाठक को महान् सुख होता है।

काव्य की आदि मे व्यञ्जनवर्णों के प्रयोग का फल—

काव्य के प्रारम्भ मे क, ख, ग, घ के रहने से लक्ष्मी, चकार रहने से अपयश, छकार रहने से प्रीति और सुख दोनो की प्राप्ति तथा जकार के रहने से मित्र लाभ होता है। झ के रहने से भय, तथा त के रहने से कष्ट, ठ के रहने से दु ख, ड के रहने से शुभ फल, ढ के रहने से शोभाहीनता, द के रहने से भ्रान्ति ण के रहने से सुख, त और थ के रहने से युद्ध एव द और ध के रहने से सुख की प्राप्ति होती है। 'न' के रहने से प्रताप की वृद्धि, प वर्ग

१ रगण का फल विनाश और मृत्यु भी माना है।

के रहने से भय, सुख की समाप्ति, कष्ट और जलन, 'य' के होने से लक्ष्मी की प्राप्ति, रेफ के रहने से जलन एव ल और व के रहने से अनेक प्रकार की आपत्तियो की उपलब्धि होती है । श के रहने से सुख, ष से कष्ट, स के रहने से सुख, ह से जलन, ल से नाना प्रकार के क्लेश और क्ष के रहने से सभी प्रकार की वृद्धि होती है ।

इस प्रकार सत्य फल के प्रदान करने वाले सभी वर्णों का विवेचन किया गया । तैल और कर्पूर के सम्मिश्रण के समान अशुभाक्षरो का सयोग काव्य की आदि मे सर्वथा त्याज्य है ।

गणों के प्रयोग और उनका फलादेश—

अभीष्ट और अनिष्टफल देने वाले प्रत्येक गण के फल को अवगत कर लेना चाहिए । काव्यारम्भ मे यगण का प्रयोग होने से धन की प्राप्ति, रगण के रहने से भय और जलन तथा तगण के होने से शून्य फल की प्राप्ति होती है अर्थात् सुख और दु ख प्राप्त नही होते, सर्वथा फलाभाव रहता है ।

काव्य की आदि मे भगण के होने से सुख, जगण के प्रयोग से रोग, सगण से विनाश, नगण के प्रयोग से धनलाभ और मगण के प्रयोग से शुभफल की प्राप्ति होती है ।

देवता, भद्र या मगल प्रतिपादक शब्द कवियो द्वारा निन्द्य नही माने गये हैं । आशय यह है कि अशुभ और निन्द्य वर्ण या गण भी देवता, भद्र और मगलवाचक होने पर त्याज्य नही । प्रवर कवियो के द्वारा गण अथवा वर्ण से भी भद्र, मगल इत्यादि अर्थ के प्रतिपादन करने वाले शब्द अशुभ, फलप्रद नही माने गये । अत वे काव्य की आदि मे निन्द्य नही हैं ।

काव्य के भेद—

इस प्रकार वर्णों की रचना से सुन्दर काव्य पद्य, गद्य और मिश्र के भेद से तीन प्रकार का होता है ।

काव्य के तीन भेद और रचना करने की विधि—

काव्य के तीन भेद हैं—(१) छन्दोमय, (२) अछन्दोमय, (३) और गद्य-पद्य मिश्रित । कवि काव्य का प्रारम्भ निबद्ध-स्वरचित और अनिबद्ध-पर रचित गद्य, पद्य या मिश्रितरूप-चम्पू से करता है । आशय यह है कि पद्य, गद्य और चम्पू के भेद से काव्य तीन प्रकार का होता है । कवि काव्य

रचना का प्रारम्भ अपने द्वारा रचित छन्द या गद्य से अथवा अन्य कवियों द्वारा रचित छन्द या गद्य से करता है।

काव्यारम्भ का नियम—

काव्य का आरम्भ आशीर्वादात्मक, नमस्कारात्मक और वस्तु निर्देशात्मक रूप मगल से करना चाहिए।

काव्य का प्रारम्भ स्वरचित छन्द या गद्य से करना निबद्ध और अन्य कवियो द्वारा रचित छन्द या गद्य से करना अनिबद्ध कहलाता है।

कवि को अपनी रचना मे दूसरे के काव्य के सुन्दर शब्द या अर्थ को, छाया को ग्रहण कर काव्य रचना नही करनी चाहिए, ऐसा करने से वह लोक मे पश्यतोहरचोर कहलाता है।[1]

छन्द के भेद—

छन्द के दो भेद हैं—वर्णछन्द, मात्रा छन्द। जिनके प्रत्येक चरण मे अक्षरो की गणना हो उन्हे वर्ण छन्द कहते हैं और जिनके प्रत्येक चरण मे मात्राओ की गणना की जाती है वे मात्रा छन्द हैं। वर्ण छन्द मे यगण, मगण आदि से और लघु, गुरु से व्यवस्था है एव मात्रा छन्द मे ४-४ मात्राओ के गण माने गये हैं।

वर्ण छन्द के सम, विषम आदि भेद—

युक्सम विषमं जायुक्-स्थान सद्भिर्निगद्यते।
सममर्ध-सम वृत्त, विषम च तथापरम्॥

अर्थ—छन्द के तीन भेद हैं—सम, विषम और अर्धसम। जिस श्लोक के चारो चरण एक समान लक्षण वाले हो उसे "समवृत्त"–"समछन्द" कहते हैं। जिस श्लोक के चारो चरण भिन्न भिन्न लक्षण वाले हो उसे "विषमवृत्त" कहते हैं तथा जिस श्लोक का प्रथम चरण तीसरे चरण के समान हो और दूसरा चरण चतुर्थ चरण के समान हो उसे "अर्धसमवृत्त" कहते हैं।

समवृत्त किसे कहते हैं ?

आरभ्यैकाक्षरात्पादा-देकैकाक्षरवर्द्धितैः।
पृथक्छदो भवेत्पादैर्यावत्षड्विशति गत॥

---

१ अलकार चितामणि पृ० २० से २४।

अर्थ—एक-एक अक्षर से आरम्भ करके एक-एक अक्षर को बढाकर छब्बीस अक्षरो तक एक-एक चरण वाले भिन्न-भिन्न जाति वाले वर्णात्मक छन्द होते हैं। अर्थात् एक-एक अक्षर के पाद वाले "उक्ता" छन्द से आरम्भ करके "उत्कृति" नाम के २६ अक्षरो के एक-एक पाद वाले छन्द होते हैं।

दंण्डक छंदों के भेद—

तदूर्ध्वं चण्डवृष्ट्यादि-दण्डका परिकीर्तिता ।
शेषगाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिता ॥

अर्थ—जिस छन्द के एक चरण मे २६ से अधिक अक्षर होते हैं उनकी चण्डवृष्टि आदि "दण्डक" सज्ञा होती है।

जिस छन्द मे तीन अथवा छह चरण होते हैं उनकी गाथा सज्ञा होती है और जिसमे गुरु—लघु का क्रम भी भिन्न हो उनकी भी गाथा सज्ञा होती है।

समवृत्त—वर्णात्मक छंदों के छब्बीस भेद—

उक्ताऽत्युक्ता तथा मध्या, प्रतिष्ठाऽन्या सपूर्विका ।
गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च, बृहती पंक्तिरेव च ॥
त्रिष्टुप् च जगती चैव, तथातिजगती मता ।
शक्वरी सातिपूर्वा स्यादष्ट्यत्यष्टी ततः स्मृतेः ॥
धृतिश्चातिधृतिश्चैव, कृतिः प्रकृतिराकृतिः ।
विकृतिः सङ्कृतिश्चैव, तथातिकृतिरुत्कृतिः ॥

अर्थ—एक अक्षर से प्रारम्भ कर छब्बीस अक्षरो के पाद वाले छन्दो की नामावली इस प्रकार है—१ उक्ता, २ अत्युक्ता, ३ मध्या, ४ प्रतिष्ठा, ५ सुप्रतिष्ठा, ६ गायत्री, ७ उष्णिक्, ८. अनुष्टुप्, ९ बृहती, १० पक्ति, ११. त्रिष्टुप्, १२. जगती, १३ अतिजगती, १४ शक्वरी, १५. अतिशक्वरी, १६. अष्टि, १७ अत्यष्टि, १८ धृति, १९ अतिधृति, २० कृति, २१ प्रकृति, २२. आकृति, २३ विकृति, २४ सकृति, २५. अतिकृति और २६. उत्कृति। एकाक्षर चरण वाला छन्द "उक्ता" है। दो अक्षर पाद वाला छन्द "अत्युक्ता" है। तीन अक्षर पाद वाले छन्द "मध्या" हैं इत्यादि। इन प्रत्येक छन्दो मे अनेक भेद होते हैं। यहा "उक्ता" आदि छब्बीस नामो को सामान्य की अपेक्षा "जाति" सज्ञा है। और इनके भेदो को "अवातर" सज्ञा है।



समवर्ण छन्द

छब्बीस जाति छन्दों के अवांतर छन्द भेद

अब 'उक्ता' आदि 'जाति' छन्दो के 'श्री, स्त्री, केसा, मृगी' आदि अवातर भेदो को कहते हैं—)*

उक्ता छन्द (१ अक्षरी)

१. श्रीछन्द ।

अत्युक्ता छन्द (दो अक्षरी)

१. स्त्री छन्द ।

मध्या छन्द (तीन अक्षरी)

१ केसा, २ मृगी, ३ नारी ।

प्रतिष्ठा छन्द (चार अक्षरी)

१ कन्या, २ व्रीडा, ३. लासिनी, ४ सुमुखी, ५. सुमति, ६. समृद्धि ।

सुप्रतिष्ठा छन्द (पांच अक्षरी)

१ पंक्ति, २ प्रीति, ३ सती, ४. मदा ।

गायत्री छन्द (छह अक्षरी)

१ शशिवदना, २ तनुमध्या, ३ सावित्री, ४ नदी, ५. मुकुल, ६ मालिनी, ७. रमणी, ८ वसुमती, ९ सोमराजी ।

उष्णिक् छन्द (सप्त अक्षरी)

१. मदलेखा, २ कुमारललिता, ३ मधुमती, ४ हसमाला, ५ चूड़ामणि ।

अनुष्टुप् छन्द (अष्ट अक्षरी)

१. प्रमाणिक, २ चित्रपदा, ३. विद्युन्माला, ४. माणवक, ५ हसरुत, ६ नागरक, ७ नाराचिका, ८ समानिका, ९ वितान, १० अनुष्टुप् ।

---

*इन सभी समवर्ण छन्दो के लक्षण 'कल्याणकल्पतरु स्त्रोत' में यथा स्थान नीचे दिये गये हैं ।

बृहती छन्द (नव अक्षरी)*

१. हलमुखी, २ भुजगशिशुभृता ।

पंक्ति छन्द (दश अक्षरी)

१ शुद्धविराट्, २ पणव, ३ मयूरसारिणी, ४. रुक्मवती, ५. मत्ता, ६. मनोरमा, ७. मेघवितान, ८ मणिराग, ९ चपकमाला, १०. त्वरित गति ।

त्रिष्टुप् छन्द (एकादश अक्षरी)

१ उपस्थिता, २ एकरूप, ३ इन्द्रवज्रा, ४ उपेन्द्रवज्रा, ५ उपजाति, ६ सुमुखी, ७ दोधक, ८ शालिनी, ९ वातोर्मी, १० भ्रमरविलसित, ११ स्त्री छन्द (श्री), १२ रथोद्धता, १३ स्वागता, १४ पृथ्वी (वृत्ता), १५ सुभद्रिका (चद्रिका), १६ वैतिका (श्येनिका), १७ मौक्तिकमाला, १८ उपस्थित ।

जगती छन्द (द्वादश अक्षरी)

१ चन्द्रवर्त्म, २. वशस्थ, ३ इन्द्रवशा, ४ द्रुतविलबित, ५ पुट, ६ तोटक, ७ प्रमुदितवदना, ८. उज्ज्वला ९ वैश्वदेवी, १०. कुसुमविचित्रा, ११ जलधरमाला, १२ नवमालिनी (नवमालिका), १३ प्रभा, १४ मालती, १५ तामरस, १६ भुजगप्रयात, १७ स्रग्विणी, १८ मणिमाला, १९ प्रमिताक्षरा, २० जलोद्धतगति, २१ प्रियवदा, २२ ललिता ।

अतिजगती छन्द (त्रयोदश अक्षरी)

१. क्षमा, २. प्रहर्षिणी, ३ अतिरुचिरा, ४ चचरीकावली, ५ मजुभाषिणी, ६ मत्तमयूर, ७ चद्रिका ।

शक्वरी छन्द (चतुर्दश अक्षरी)

१. वसततिलका, २. असबाधा, ३. अपराजिता, ४ प्रहरणकलिका, ५ अलोला, ६ इन्दुवदना ।

अति शक्वरी छन्द (पचदश अक्षरी)

१ शशिकला, २ मालिनी, ३ चन्द्रलेखा, ४ प्रभद्रक, ५ स्रक्, ६. मणिगणनिकर, ७ कामक्रीडा, ८. एला (अतिरेखा) ।

अष्टि छन्द (सोलह अक्षरी)

१ ऋषभगजविलसित, २. वाणिनी ।

---

*इन छन्दो के लक्षण कल्याणकल्पतरु स्तोत्र के साथ दिये गये हैं ।

अत्यष्टि छन्द (सप्तदश अक्षरी) *

१ शिखरिणी, २ पृथ्वी, ३ मदाक्रांता, ४ वशपत्रपतित, ५ हरिणी, ६ तत्कुटक (नर्कुटक), ७ कोकिलक ।

धृति छन्द (अष्टादश अक्षरी)

१ कुसुमितलतावेल्लिता, २ सिंह विक्रीडित, ३ हरनर्तक ।

अतिधृति छन्द (उन्नीस अक्षरी)

१ मेघविस्फूर्जिता, २ शार्दूलविक्रीडित ।

कृति छन्द (बीस अक्षरी)

१ मत्तेभविक्रीडित, २ सुवदना, ३ वृत्त, ४ प्रमदानन ।

प्रकृति छन्द (इक्कीस अक्षरी)

१ स्रग्धरा, २. मत्तविलासिनी ।

आकृति छन्द (बाईस अक्षरी)

१ प्रभद्रक ।

विकृति छन्द (तेईस अक्षरी)

१. अश्वललित, २. मत्ताक्रीडा, ३ मयूरगति ।

सकृति छन्द (चौबीस अक्षरी)

१ तन्वी ।

अतिकृति छन्द (पच्चीस अक्षरी)

१ क्रौंचपदा ।

उत्कृति छन्द (छब्बीस अक्षरी)

१ अपवाह, २ भुजगविजृंभित ।

दण्डक (सत्ताईस अक्षरी)

१ चण्डवृष्टिप्रयात, २ प्रचितक ।

दण्डक (तीस अक्षरी)

१ अर्ण दण्डक ।

---

*इन सभी छन्दो के लक्षण कल्याणकल्पतरुस्तोत्र के साथ दिये गये हैं ।

विशेष—इस स्तोत्र मे एकाक्षर चरण वाले छन्द से लेकर छब्बीस अक्षर चरण वाले छदो तक एक सौ चालीस छद लिये गये है। पुन. सत्ताईस अक्षर चरण वाले दो दण्डक छद एव तीस अक्षर पाद वाला एक दण्डक छद ऐसे तीन दण्डक छद लिये गये हैं। मध्य मे चार जगह मात्रा छद के प्रयोग हैं, जिसमे पृ० २८, ३२ और ६४ पर आर्यागीति छद हैं तथा पृ० ६० पर गीतिछद का प्रयोग है। ऐसे इस स्तोत्र मे कुल एक सौ पैंतालिस (१४५) छदो को लिया गया है। इस ग्रथ मे यथा स्थान नीचे उन-उन छदो के लक्षण भी दे दिये गये है।

दण्डक छन्द

प्रतिचरणविवृद्धरेफा स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दाम-शखादय ।

जिसके प्रत्येक चरण मे दो नगण और सात रगण के बाद एक-एक रगण बढते हुये हो उनके अर्ण, अर्णव, व्याल आदि नाम होते है। यथा—

१ दो नगण आठ रगण से युक्त 'अर्ण दडक' छद होता है।

२ दो नगण और नव रगण से युक्त 'अर्णव दण्डक' होता है।

३ दो नगण और दश रगण से सहित 'व्याल दण्डक' है।

४ दो नगण और ग्यारह रगण युक्त 'जीमूत दण्डक' है।

५ दो नगण और बारह रगण सहित 'लीलाकर दण्डक' है।

६ दो नगण और तेरह रगण सहित 'उद्दामदण्डक' होता है।

७ दो नगण और चौदह रगण से युक्त 'शखदण्डक' होता है।

इस प्रकार से एक-एक रगण को बढाते हुये दो नगण के बाद 'तीन सौ इकतीस' रगण तक वृद्धि करके एक कम एक हजार अक्षर तक बढाये जाते है। इसमे यह अतिम दण्डक माना गया है।

प्रचितकसमभिधो धीरधीभि स्मृतो दण्डको नद्वयादुत्तरै सप्तभिर्यै । जिसमे दो नगण के बाद यगण हो उसे 'प्रचितक दण्डक' कहते हैं। इसमे एक-एक यगण बढाते हुये भोगावली, विरुदावली आदि नाम माने गये हैं।

अर्धसमवर्ण छन्द

जिस श्लोक मे प्रथम और तृतीय चरण एक समान तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण एक समान हो उसे "अर्धसमछन्द" कहते हैं। यहां प्रथम तृतीय चरण को "विषम" तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण को "सम" कहा गया है। उनमे से कतिपय अर्धसम छन्दो का लक्षण यहां दिये जा रहे हैं।

१ वपुचित्र छन्द का लक्षण—

विषमे यदि सौ सलगा दले
। । ऽ । । ऽ । । ऽ । ऽ
भौ युजि भाद् गुरुकावपुचित्रम् ।।१।।
ऽ । ।　ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

जिसमे विषम अर्थात् पहले और तीसरे चरण मे तीन सगण एक लघु और एक गुरु हो, तथा सम—दूसरे और चौथे चरण मे तीन भगण और दो गुरु हो उसे "वपुचित्र" छद कहते हैं।

२ द्रुतमध्या छन्द का लक्षण—

भत्रयमोजगत गुरुणो चेद्
ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ
युजि च नजौ ज्ययुतौ द्रुतमध्या ।।२।।
। । । । ऽ　। । ऽ । । ऽ ऽ

जिस छद से विषम मे तीन भगण और दो गुरु हो तथा सम मे एक नगण दो जगण और एक यगण हो उसे "द्रुतमध्या" छद कहते है।

३ वेगवती छन्द का लक्षण—

सयुगात्सगुरु विषमे चेद्
। । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ
भाविह वेगवती युजि भाद्गौ ।।३।।
ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ ऽ

जिस छद के विषम पादो मे तीन सगण और एक गुरु हो तथा "सम" पादो मे तीन भगण और दो गुरु हो उसे "वेगवती" छद कहते हैं।

४ भद्रविराट् छन्द का लक्षण—

ओजे तपरौ जरौ गुरुश्चे-
ऽ ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ
न्म्सौ ज्गौग् भद्रविराट् भवेदनोजे ।।४।।
ऽ　ऽ　ऽ । । ऽ । ऽ । ऽ ऽ

जिस छद से विषम पादो मे तगण के परे एक जगण एक रगण और एक गुरु हो तथा सम पादो मे मगण, सगण, जगण और दो गुरु हो उसे "भद्रविराट्" छद कहते है।

५ केतुमति छन्द का लक्षण—

असमे सजौ सगुरुयुक्तौ
I I S I S I I I S S
केतुमती समे भरनगाद्ग ॥५॥
S I I S I S I I I S S

जिसमे विषम चरणो मे सगण, जगण, सगण और एक गुरु हो तथा सम चरणो मे भगण, रगण, नगण और दो गुरु हो उसे "केतुमती" छंद कहते हैं।

६ ललिता छन्द का लक्षण—

ससजा विषमे यदा गुरु
I I S I I S I S I S
सभरा स्याल्ललिता समे लगौ ॥६॥
I I S S I I S I S I S

जिस श्लोक के विषम पादो मे दो सगण एक जगण और एक गुरु हो तथा सम पादो मे सगण, भगण, रगण, लघु और गुरु हो उसे ,'ललिता" छद कहते हैं।

७ हरिणप्लुप्ता छन्द का लक्षण—

सयुगात् सलघू विषमे गुरु—
I I S I I S I I S I S
युंजिनभौ च भरौ हरिणप्लुप्ता ॥७॥
I I I S I I S I I S I S

जिस श्लोक के विषम चरणो मे तीन सगण, लघु और गुरु हो और युजिसम चरणो मे नगण, भगण, भगण और रगण हो उसे "हरिणप्लुता" छन्द कहते हैं।

यहाँ तक अर्ध समवर्ण छदो का प्रकरण हुआ।

विषम वर्ण छन्द

१ पदचतुरूर्ध्व छन्द का लक्षण—

मुखपादोऽष्टभिर्वर्णैः,
परेऽस्मान्मकरालयैः क्रमाद्वृद्धः ।
सतत यस्य विचित्रं , पादैः सम्पन्नसौन्दर्यम्,
तदभिहितममलधीभि पदचतुरूर्ध्वाभिध वृत्तम् ॥१॥

इसके प्रथम पाद मे आठ वर्ण, द्वितीय मे बारह वर्ण, तृतीय मे सोलह वर्ण एव चतुर्थ चरण मे बीस वर्ण होते है । यह चतुरूर्ध्व छद है ।

विशेषार्थ—इन छन्दो मे अक्षरो का नियम है गणो का कोई नियम नही है ।

२ आपीड छन्द का लक्षण—

प्रथममुदितवृत्ते,
विरचितविषमचरणभाजि ।
गुरुकयुगलनिधने इह कलित आडा,
विधृतरुचिरपदविततियतिरिति भवति पीडः ॥२॥

इसका लक्षण भी पद चतुरूर्ध्व के समान है इसमे अत मे प्रत्येक पाद मे दो गुरु होते हैं । इसे आपीड छद कहते हैं ।

३ कलिका छन्द का लक्षण—

प्रथममितरचरणसमुत्थ,
श्रयति स यदि लक्ष्म ।
इतरदितरमदितमपि यदि च तुर्यं,
चरणयुगलकमविकृतमपरमिति कलिका सा ॥३॥

इसमे ऊपर कहे गये छद का द्वितीय चरण का लक्षण प्रथम चरण मे किया है एव प्रथम चरण का द्वितीय मे किया है । तृतीय और चतुर्थ का लक्षण आपीड के समान ही है । ऐसे इस छद को "कलिका" छद कहते हैं ।

४ लवली छन्द का लक्षण—

द्विगुरुयुतसकलचरणान्ता,
मुखचरणगतमनुभवति च तृतीयः ।
अपर इह च लक्ष्म,
प्रकृतमखिलमपि यदि दमनु भवति लवली सा ॥४॥

इसमे प्रथम पाद मे बारह अक्षर, द्वितीय मे सोलह, तृतीय मे आठ अक्षर एव चतुर्थ पाद मे पूर्ववत् बीस अक्षर होते है। यह लवली छन्द है।

५ अमृतधारा छन्द का लक्षण—

प्रथममधिवसति यदि तुर्यं, चरमचरणपदमवसितगुरुयुग्मम् ।
निखिलमपरमुपरिगतमिति ललितपदयुक्ता, तदिदममृतधारा ।।५।।

इसमे प्रथम पाद मे बारह अक्षर, द्वितीय मे सोलह, तृतीय मे बीस और चौथे मे आठ अक्षर होते हैं। यह "अमृतधारा" नाम का विषम छद है।

६ उद्गता छन्द का लक्षण—

सजसादिमे सलघुकौ च, नसजगुरुकंथोद्गता ।
त्र्यङ्घ्रिगतभनजला गयुता, सजसा जगौचरणमे कत पठेत् ।।६।।

प्रथम पाद मे सगण, जगण, सगण लघु, द्वितीय पाद मे नगण, सगण, जगण, गुरु, तृतीय पाद मे भगण, नगण, जगण, लघु-गुरु और चतुर्थ पाद मे सगण, जगण, सगण, जगण और गुरु से युक्त "उद्गता" छद है।

७ सौरभक छन्द का लक्षण—

चरणत्रय व्रजति लक्ष्म, यदि निखिलमुद्गतागतम् ।
नौं भगौ भवति सौरभकम्, चरणे यदीह भवतस्तृतीयके ।।७।।

जिसके चरणत्रय अर्थात् प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ चरण उद्गता के समान हो एव तृतीय चरण मे रगण, नगण, भगण, गुरु हो वह "सौरभक" छद है।

८ ललित छन्द का लक्षण—

नयुग सकारयुगल च, भवति चरणे तृतीयके ।
तदुवितमुरुमतिभिर्ललितम्, यदि शेषमस्य खलु पूर्वतुल्यकम् ।।८।।

इसमे भी पूर्व के उद्गता छद के समान प्रथम, द्वितीय एव चतुर्थ चरण हो एव तृतीय चरण मे दो नगण, दो सगण हो वह "ललित" छद है।

९ प्रवर्धमान छन्द का लक्षण—

नौ पादेऽथ तृतीयके सनौ नसयुक्तौ,
प्रथमाङ्घ्रिकृतयति. प्रवर्धमानम् ।

त्रितयमपरमपि पूर्वसदृशमिह भवति,
प्रततमतिभिरिति गदित खलु वृत्तम् ॥६॥

इसके प्रथम चरण मे मगण, सगण, जगण, भगण और दो गुरु, द्वितीय चरण मे सगण, नगण, जगण, रगण, एक गुरु, तीसरे चरण मे दो नगण, एक सगण, दो नगण और एक सगण एव चतुर्थ चरण मे तीन नगण, एक जगण, एक यगण हो वह 'प्रवर्धमान' छन्द है ।

यहाँ तक विषम छन्दो का प्रकरण हुआ ।

मात्रा छन्द

मात्रा छद मे वर्णो की गणना न होकर मात्राओ की गणना होती है। इसमे सरल-लघु को एक मात्रा एव वक्र-गुरु की दो मात्राये ली जाती हैं।

मात्रा छन्द के पाच गण—

ज्ञेया सर्वान्तमध्यादि-गुरवोऽत्र चतुष्कला ।
गणाश्चतुर्लघूपेता., पचार्यादिषु सस्थिता. ॥

अर्थ—मात्रा छद चार-चार मात्रा वाले पाच गण होते है। पहले गण मे सर्वगुरु (ऽ ऽ), दूसरे गण मे अन्त्य गुरु (। । ऽ), तीसरे गण मे मध्य गुरु (। ऽ ।), चौथे गण मे आदि गुरु (ऽ । ।) और पाचवे गण मे चारो लघु (। । । ।) होते है ।

१ आर्या छन्द का लक्षण—

लक्ष्मैतत्सप्त गणा गोपेता भवति नेह विषमे ज. ।
ऽ ऽ ऽ ऽ　। । ऽ　ऽ ऽ ऽ　। । । ऽ ।　। । ऽ ऽ
षष्ठोऽय न लघू वा, प्रथमेऽर्धे नियतमार्याया ॥१॥
ऽ ऽ ऽ । । ऽ　ऽ　। । ऽ ऽ　। । । ऽ ऽ ऽ

पूर्वार्ध का लक्षण—

आर्या छन्द के पूर्वार्ध मे गुरु सहित सात गण होते हैं तथा विषम स्थान मे प्रथम, तृतीय, पचम और सप्तम स्थान मे जगण नही होता है। छठे स्थान मे जगण, नगण और एक लघु विकल्प से होता है। इसमे चार मात्रा वाले गण होते हैं।

षष्ठे द्वितीयलात्परके न्ले मुखलाच्च सयतिपदनियमः ।
S S I S I S I I S S I I S I I I I I I I I S
चरमेऽर्धे पचमके तस्मादिह भवति षष्ठो ल ॥२॥ युग्म
I I S S S I I S S S I I I I I S S S

यदि छठे स्थान मे चतुर्लघुरूप गण हो तो उस गण के दूसरे लघु से प्रथम गण के अत मे यति होती है। यदि छठे गण से परे सातवा गण चतुर्लघु हो तो उसके पहले लघु के पूर्व मे—छठे गण के अत मे यति होती है।

उत्तरार्ध का लक्षण—

यदि पाँचवा गण चतुर्लघु रूप हो तो उसके पूर्व मे अर्थात् चौथे गण के अत मे यति करना चाहिए आर्याछन्द के उत्तरार्ध मे नियम से छठा गण लघु रूप ही होना है चतुर्मात्रिक नही होता। यही प्रथमार्ध से द्वितीयार्ध मे विशेषता होती है।

विशेषार्थ—अन्यत्र आर्याछन्द का सरल लक्षण इस प्रकार है—

यस्या प्रथमे पादे, द्वादश मात्रास्तथा तृतीयेपि ।
S S I I S S S S I I S S I S I S S S
अष्टादशद्वितीये चतुर्थके पचदश सार्या ॥
S S I S I S S I S I S S I I I S S

जिसके प्रथय और तृतीय चरण मे बारह मात्रा और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण मे अठारह एव पद्रह मात्रा हो वह आर्या छद है।

२ गीति छन्द का लक्षण--

जिसके प्रथम और तृतीय चरण मे १२-१२ मात्रा हो एव द्वितीय और चतुर्थ चरण मे १८-१८ मात्रा हो वह "गीति छद" है ॥२॥

३ उपगीति छन्द का लक्षण—

जिसके प्रथम और तृतीय चरण मे १२-१२ मात्रा और द्वितीय-चतुर्थ चरण मे १५-१५ मात्रा हो वह "उपगीति छद" है ॥३॥

४ उद्गीति छन्द का लक्षण—

जिस छद मे प्रथम और तृतीय चरण मे १२-१२ मात्रा हो, तथा द्वितीयचरण मे १५ मात्रा एव चतुर्थ चरण मे १८ मात्रा हो वह "उद्गीति" छद है ॥४॥

५ आर्यागीति छन्द का लक्षण—

जिसके प्रथम और तृतीय चरण मे १२-१२, मात्रा हो, तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में २०-२० मात्रा हो वह "आर्यागीति छद" है ॥५॥

६ वैतालीय छन्द का लक्षण—

षड्विषमेऽष्टौ समे कलास्ताश्च समे स्युर्नो निरन्तरा. ।
S I I S S I S I S S I I S S S I S I S
न समात्र पराश्रिता कला, वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरु. ॥६॥
I I S I I S I S I S S S S S S I S I S

जिस मात्रा छन्द मे प्रथम और तृतीय चरण मे—विषम पादो मे छह मात्राए हो तथा सम पादो मे आठ मात्राए हो तथा सम पाद की मात्राए केवल लघु ही न हो अपितु गुरु-लघु से युक्त हो और सम मात्राए आगे की मात्रा से परस्पर मिली हुई भी न हो तथा सभी पादो के अन्त मे एक रगण, एक लघु और एक गुरु हो उसे "वैतालीय" छन्द कहा जाता है। अर्थात् इसमे विषम पाद मे चौदह-चौदह मात्रा और समपाद मे सोलह-सोलह मात्रा होती है।

७ औपच्छदसिक छन्द का लक्षण—

वैतालीय छद के चारो चरणो मे एक-एक गुरु को और रख दिया जाए तो उसे "औपछन्दसिक" छन्द कहते है ॥७॥

८. वक्त्रअनुष्टुप् छन्द का लक्षण—

वक्त्र नाद्यान्नसौ स्यातामब्धेर्योऽनुष्टुभि ख्यातम् ॥८॥
S S S S I S S S S S S S I S S S

जिस छन्द के पहले अक्षर के पश्चात् नगण और सगण न हो तथा चौथे अक्षर के पश्चात् यगण जरूर रहे उसे अष्टाक्षर चरण वाला "वक्त्र-अनुष्टुप्" छन्द कहते है।

९ पथ्यावक्त्र छन्द का लक्षण—

युजोर्जेन सरिद्भर्तु पथ्यावक्त्र प्रकीर्तितम् ॥९॥
I S S I I S S S S S S S I S I S

जिस छन्द के द्वितीय और चतुर्थ चरणो मे चौथे अक्षर के पश्चात जगण हो उसे "पथ्यावक्त्र छन्द" कहते है।

१० युग्मविपुला छन्द का लक्षण—

यस्या लः सप्तमो युग्मे सा युग्मविपुला मता ॥१०॥

S S S S I S S S S S I I I S I S

जिस छन्द के समपाद मे सातवा अक्षर लघु हो उसे "युग्मविपुला छन्द" कहते हैं।

११ अचलधृति छन्द का लक्षण—

द्विकगुणितवसुलघुरचलधृतिरिति ॥११॥

I I I I I I I I I I I I I I I I

जिस छन्द मे सोलह अक्षर लघु ही हो उसे "चलधृति" छन्द कहते हैं।

१२ चित्रा छन्द का लक्षण—

वाणाष्टनवसु यदि लश्चित्रा ॥१२॥

S S I I I I I I S S S

जिस छन्द की पाचवी, आठवी और नवमी मात्रा लघु हो उसे "चित्रा" छन्द कहते है।

१३ उपचित्रा छन्द का लक्षण—

उपचित्रा नवमे परियुक्ते ॥१३॥

I I S S I I S I I S S

जिस छन्द की नवमी मात्रा दसवी मात्रा से युक्त हो उसे "उपचित्रा" छन्द कहते है। अथवा आठवी मात्रा के बाद भगण और दो गुरु वाला भी "उपचित्रा" छन्द कहा जाता है।

१४ शिखा छन्द का लक्षण—

शिखिगुणितदशलघुरचितमपगतलघुयुगलमपरमिदमखिलम् ।

I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I S

सगुरु शकलयुगलकमपि सुपरिघटितललितपदविततति भवति शिखा ।१४।

I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I S

जिस छन्द के पूर्वार्ध मे अट्ठाईस लघु, अन्त मे एक गुरु होवे तथा उत्तरार्ध मे तीस लघु और एक गुरु होवे उसे "शिखा" छन्द कहते है।

१५ अतिरुचिरा छन्द का लक्षण—

त्रिगुणनवलघुरवसितिगुरुरिति

। । । । । । । । । । ।　। । । । ।

दलयुगलकृततनुरतिरुचिरा ॥१५॥

। । । । । । । । । । । । ।　। ऽ

जिस छन्द मे पूर्वार्ध और उत्तरार्ध दोनो मे ही सत्ताईस लघु और एक गुरु हो उसे "अतिरुचिरा" छन्द कहते है ।

यहा मात्रा छन्द का प्रकरण पूर्ण हुआ ।

"गाथा" छन्द का लक्षण—

"आर्या" छन्द का लक्षण ही "प्राकृत" मे गाथा का लक्षण है ।

पढम बारह मत्ता, बीए अट्ठारहेहि सजुत्ता ।

। । ऽ ऽ । ।　ऽ ऽ　ऽ ऽ　ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ

जह पढम तह तीअ, दहपचविहूसिअ गाहा ॥१॥

। ।　। । ऽ　। ।　ऽ ऽ　। । ऽ । । ऽ । ऽ　ऽ ऽ

अर्थ—जिसके प्रथम चरण मे बारह मात्रा, द्वितीय चरण मे अठारह मात्रा, तृतीयचरण मे प्रथम के समान हो बारह मात्रा और चौथे चरण मे पद्रह मात्रा हो उसे "गाथा" कहते हैं ।

यहाँ गाथा के प्रकरण मे सात भेद माने गये हैं । गाहू, गाथा, विगाथा, उद्गाथा, गाहिनी, सिहिनी, और स्कधक ।

१ गाहू—जिसके प्रथम-तृतीय चरण मे १२-१२, द्वितीय-चतुर्थ चरण मे १५-१५ मात्रा हो ऐसा यह ५४ मात्रा वाला "गाहू" छद है । इसे ही सस्कृत मे "उपगीति" कहा है ॥१॥

२ गाथा—सस्कृत की आर्या छद का लक्षण ही प्राकृत मे "गाथा" है । इसे ऊपर मे दिया है । इसमे ५७ मात्रा हैं ॥२॥

३ विगाथा—जिस छद के प्रथम व तृतीय चरण मे १२-१२ मात्रा तथा द्वितीय चरण मे १५ मात्रा एव चतुथ चरण मे १८ मात्रा हो वह "विगाथा" है । इसे सस्कृत मे "उद्गीति" कहते है । इसमे भी ५७ मात्रा हैं ॥३॥

४ उद्गाथा—जिसके प्रथम और तृतीय चरण मे १२-१२ मात्रा एव द्वितीय और चतुर्थ चरण मे १८-१८ मात्रा हो वह "उद्गाथा" है । इसे सस्कृत मे "गीति" कहते हैं । इसमे ६० मात्रा हैं ॥४॥

५ गाहिनी—जिसके प्रथम चरण मे १२ द्वितीय चरण मे १८ तृतीय चरण मे १२ और चतुर्थ चरण मे २० मात्रा हो वह "गाहिनी" है। इसमे ६२ मात्रा हैं ॥५॥

६ सिहिनी—लिसके प्रथम चरण मे १२ द्वितीय चरण मे २० तृतीय चरण मे १२ और चतुर्थ चरण मे १८ मात्रा हो वह "सिहिनी" है। इसमे भी ६२ मात्रा हैं ॥६॥

७ स्कधक—जिसमे चार-चार मात्रा के ८-८ गण हो, मतलब पूर्वार्ध और उत्तरार्ध मे ३२-३२ मात्राये हो वह "स्ककध" हैं इसे सस्कृत मे "आर्यागीति" कहते हैं। इसमे ६४ मात्रा है ॥७॥

हिंदी छन्दशतक ग्रन्थ मे गाथा के प्रकरण मे गाहिनी छन्द भी लिया है। जिसके प्रथम-तृतीय चरणो मे १२-१२ मात्रा और द्वितीय चरण १८ मात्रा तथा चतुर्थचरण मे १६ मात्रा हो वह 'गाहिनी' छद है।

अनादि निधन णमोकार मन्त्र भी गाथा है, इस महामन्त्र-णमोकार मन्त्र मे ५८ मात्रायें हैं—

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाण णमो आइरियाण ।
। S । । S S S । S । S S । S S । । S S
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ॥
। S । S S S S । S S S S । S S S

इस मत्र मे प्रथम चरण मे ११ मात्रा, द्वितीय चरण मे १६ मात्रा, तृतीय चरण मे १२ मात्रा और चतुर्थ चरण मे १६ मात्राये हैं। यहाँ 'सिद्धाण' पद मे सयुक्ताक्षर से पूर्व 'सि' को दोघ लेना चाहिये था किन्तु 'सि' को ह्रस्व ही रखा है क्योकि सयुक्त के पूर्व वर्ण पर यदि स्वराघात न हो तो छद शास्त्र मे उसे ह्रस्व मानते है।[1]

दोहा का लक्षण—

जिसके प्रथम और तृतीय चरण मे छह कला का पहला गण, चार कला का दूसरा गण और तीन कला का तीसरा गण हो, तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण मे छहकला का प्रथम गण, चार कला का दूसरा गण एव एक

१ 'मगल मन्त्र णमोकार—एक अनुचिंतन' पुस्तक पृ० ६८।

लघु हो उसे "दोहा" कहते हैं। इसमे ४८ मात्रायें होती है। यह प्राकृत के अपभ्रंश भेद मे अधिकतर आता है ॥१॥

यथा—जे जाया झाणग्गिया कम्मकलकडहेवि।
S SS SS IS S IISIISI
णिच्च णिरजण णाणमउ, सो परमप्पु णवेवि ॥१॥
S I ISII S III S IISI ISI

हिन्दी दोहा—हिन्दी भाषा मे भी "दोहा" छन्द प्रसिद्ध है। इसमें प्रथम-तृतीय चरण मे १३-१३ एव द्वितीय चतुर्थ चरण मे ११-११ मात्राये होती हैं। इसे अर्धसम छन्द माना है ॥२॥

दोहा—तीन रत्न के हेतु मै, नमू अनतों बार।
SI SI S SIS IS ISS SI
ज्ञानमती की याचना, पूरो नाथ अवार ॥१॥
SIIS S SIS SS SI ISI

इस प्रकार यहाँ 'छन्दो विज्ञान' ग्रन्थ पूर्ण हुआ।

इति भद्र भूयात्



प्रशस्तिः

तीर्थेशः शांतिनाथो य, पूर्णशातिप्रदायक ।
शांति दद्यात् स मे नित्य, पुष्यात् सर्वं समीहितम् ॥१॥
एकशून्यशरद्व्यके, वीराब्दे हस्तिनापुरे ।
जिनकल्पतरुस्तोत्र, कल्याणार्थं कृत मया ॥२॥
एकशतपचचत्वा-रिशत् छदोभिरिष्यते ।
वन्ह्येकवाणयुग्माकेऽनुवादो भाषया कृत ॥३॥
छन्दोज्ञानाय सर्वेषा, ज्ञात्वेद वाङ्मयाशकम् ।
वृत्तलक्षणयुक्त च, स्तोत्र सर्वोत्तम मतम् ॥४॥
वृत्तरत्नाकरादीना-माधारेण हि साप्रतम् ।
छन्दोविज्ञाननामाय, ग्रन्थ सकलितो मया ॥५॥
वस्वेकवाणयुग्माके, वीराब्दे हस्तिनापुरे ।
अक्षयाख्यातृतीयायां, पूर्यते ग्रन्थ एष वै ॥६॥
गणिन्या ज्ञानमत्याय, तावत्स्थेयात् कृत स्तव ।
यावज्जैनेन्द्रधर्मोऽय, कुर्यात् जगति मगलम् ॥७॥

अर्थ—जो तीर्थकर शान्तिनाथ भगवान् पूर्ण शान्ति को प्रदान करने वाले हैं वे मुझे शान्ति को देवे और सम्पूण मनोरथ को सफल करें। हस्तिनापुर क्षेत्र पर वीरनिर्वाण सवत् एक, शून्य, शर-पाच और दो अर्थात् "अकाना वामतो गति " इस न्याय के अनुसार २५०१ मे (श्रावण शुक्ला पूर्णिमा के दिन) मैंने कल्याण के लिये श्री जिनेन्द्रदेव का "कल्पतरु स्तोत्र" अर्थात् "कल्याण कल्पतरु स्तोत्र" बनाया है। इसमे एक सौ पैतालीस छन्दो का प्रयोग किया है। पुन वह्नि-तीन, एक, वाण-पाच और दो के अक अर्थात् वीर नि० स० २५१३ मे (ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी के दिन) मैंने इस स्तोत्र का हिन्दी पद्यानुवाद किया। छन्द शास्त्र को वाङ्मय का एक अवयव जानकर सभी को छन्दो का ज्ञान कराने के लिए इस स्तोत्र मे सर्वत्र मैंने वृत्त-छन्द के लक्षण भी दे दिये हैं अत यह स्तोत्र सर्वश्रेष्ठ स्तोत्र माना गया है—बन गया है ॥१ से ४॥

भावार्थ—इस स्तोत्र मे १४५ छन्दो के लक्षण आ गये हैं। इनमे एक सौ तेतालिस छन्द समवर्ण छन्द हैं, और दो मात्रा छन्द हैं।

वीर नि० सवत् वसु—आठ, एक, बाण-पाच और युग्म—दो के अक ऐसे २५१८ मे, अक्षय तृतीया (वैशाख शुक्ला तीज के दिन) मैंने "छन्दो विज्ञान" नाम का ग्रन्थ सकलित किया है, इसमे "वृत्तरत्नाकर" "छन्दो-मजरी" आदि के आधार से वर्णछन्द और मात्रा छन्दो को लिया है ।।५-६।।

विशेषार्थ—प्रारम्भ मे छन्द के नियम, और काव्य रचना के लिए आवश्यक जानकारी दी गई हैं। पुन "उक्ता" आदि भेद-प्रभेदो को दिखलाया गया है। स्तोत्र मे समवर्ण छन्दो के लक्षण दिये गये हैं अत यहा उनके नाम मात्र रखे गये हैं। पुन अर्धसम, विषम वर्ण छन्दो के कुछ लक्षण दे दिये हैं। आगे मात्रा छन्दो के कुछ भेद देकर गाथा छन्द के भी भेद दे दिये हैं।

गणिनी ज्ञानमती आर्यिका द्वारा रचित यह "स्तोत्र ग्रन्थ" तब तक इस जगत् मे स्थित रहे कि जब तक यह "जैनधर्म" जगत मे मगल करता रहे। अर्थात् जब तक ससार मे जैनधर्म विराजमान रहे तब तक यह स्तोत्र ग्रन्थ भी जगत् मे स्थित रहे यही मेरी मगल भावना है ।।७।।

इति भद्र भूयात्



एकाक्षरी-कोश:

विश्वाभिधानकोशानि प्रविलोक्य प्रभाष्यते ।
अमरेण कवीन्द्रेणैकाक्षरनाममालिका ॥१॥

अ कृष्ण आ स्वयभूरि काम ई श्रीरुरीश्वर ।
ऊ रक्षण ऋ ॠ ज्ञेयौ देवदानवमातरौ ॥२॥

लृर्देवसूर्लॄ वराही भवेदेर्विष्णुरै शिव ।
ओर्वेधा औरनत स्याद ब्रह्म परम् अ शिव ॥३॥

को ब्रह्मात्मप्रकाशार्के क स्याद्वायुयमाग्निषु ।
क शीर्षे सुसुखे कुस्तु भूमौ शब्दे च कि पुन ॥४॥

स्यात्क्षेपनिन्दयो प्रश्ने वितर्के च खमिन्द्रिये ।
स्वर्गे व्योम्नि मुखे शून्ये सुखे सविदि खो रवौ ॥५॥

गस्तु गातरि गधर्व्वे गा गीतौ गो विनायके ।
स्वर्गे दिशि पशौ वज्रे भूमाविन्दौ जले गिरि ॥६॥

घस्तु सुघटीशे घा किकिण्या च घुर्व्वनौ ।
ङ मञ्जने ङो वृप-भेजिने च चन्द्रचौरयो ॥७॥

च सूर्ये कच्छपे छ तु निर्मले जस्तु जेतरि ।
विजये तेजसि वाचि पिशाच्या जि जवेऽपि च ॥८॥

झो नष्टे रवे वायौ ञो गायने र्घघरध्वनौ ।
ट पृथिव्या करटे च ठो ध्वनौ ठो महेश्वरे ॥९॥

शून्ये बृहद्ध्वनौ चद्रमडले ड शिवे ध्वनौ ।
ढो भये निर्गुणे शब्दे ढक्काया णस्तु निश्चये ॥१०॥

ज्ञाने तस्तस्करे क्रोडपुच्छयोस्ता पुनर्दया ।
थो भीत्राणे महीध्रे द पत्न्या दा दातृदानयो ॥११॥

बन्धे च धा गुह्ये केशे धातरि धीर्मतौ ।
धूर्भारकर्पचितासु नो नरे बन्धु बुद्धयो ॥१२॥

निस्तु नेतरि नु स्तुत्या नौ सूर्ये पस्तु पातरि ।
पावने जलयाने च फो झझाजलफेनयो ॥१३॥

भा कातौ भूर्भुव स्थाने भीर्भये म शिवे विधौ ।
चद्रे शिरसि मा माने श्रोमात्रौर्वारणेऽव्ययम् ॥१४॥

मु पुंसि बधने यस्तु मातरिश्वनि यं यश ।
यास्तु यातरि खट्वागे याने लक्ष्म्या च रो धृतौ ।।१५।।
तीव्रे वैश्वानरे कामे रा स्वर्णे जलदे ध्वनौ ।
री भ्रमे रुर्भये सूर्ये ल इद्रे चलनेपि च ।।१६।।
ल तैले ली पुन श्लेषे ली भये वो महेश्वरे ।
व पश्चिमदिशास्वामी व इवार्थे स्मरेऽप्ययम् ।।१७।।
शं शुभे शा तु शोभाया शी शयने शु निशाकरे ।
ष श्लिष्टे पुनर्गर्भे विमोक्षे ष परोक्षके ।।१८।।
सा लक्ष्म्या हो निपाते च हुस्ते दारुणि शूलिनि ।
क्ष क्षेत्ररक्षसीत्युक्ता माला प्राक्सूरिसम्मता ।।१९।।

इति एकाक्षरी नाममाला समाप्ता ।।



एकाक्षरी-कोश

विश्व नाम के कोश को देखकर "अमर कवीन्द्र" ने यह एकाक्षर नाम माला बनाई है । "अ" श्रीकृष्ण का वाचक है "आ" स्वयभू का वाचक है "इ" काम का, "ई" श्री–लक्ष्मी का, "उ" ईश्वर का, "ऊ" रक्षण का, 'ऋ ॠ" देव और दानव की माता के वाचक है । "लृ" देवमाता का, "लॄ" सूकरी या पृथ्वी का, "ए" विष्णु का, "ऐ" शिव का, "ओ" ब्रह्मा का, "औ' अनत का, "अ" पर ब्रह्म का और 'अ " शिव का वाचक है । "क" पुल्लिग मे, "क " ब्रह्मा, आत्मा, प्रकाश, सूर्य, वायु, यम और अग्नि अर्थ मे है । 'क"नपुमकलिग मे क शब्द मस्तक एव अच्छ सुख के अर्थ मे है । "कु" भूमि और शब्द का वाचक है । "कि" शब्द पुन , आक्षेप, निदा, प्रश्न और वितर्क अर्थ मे है । "ख" नपुसकलिग मे "ख" शब्द इन्द्रिय, स्वर्ग, आकाश, मुख, शून्य, सुख और सवेदन अथ मे है । "ख" पुल्लिग हाने पर सूर्यवाची है । "ग" शब्द गायक और गधर्व अर्थ मे है, "गा" गाने अर्थ मे है और "ग" शब्द विनायक, स्वर्ग, दिशा, पशु, वज्र, भूमि, चन्द्र, जल और वाणी अर्थ मे है । "घ" शब्द सुघटीश अर्थ मे, 'घा" किकणी अर्थ मे और "घु" ध्वनि अर्थ मे है । "ङ" नपुसकलिग मे होने पर मजन अर्थ मे और "ङ" पुल्लिग मे धर्म अर्थ मे है ।

"च" शब्द चन्द्र, चोर, सूर्य और कछुवा अर्थ मे है। "छ" शब्द निर्मल अर्थ मे है। "ज" शब्द जेता-जीतने वाला, विजय, तेज, बचन और पिशाची वाचक है। "जि" शब्द वेग अर्थ मे है। "झ" शब्द नष्ट, रवि और वायु अर्थ मे है। "ञ" शब्द गायन मे और घर्घर ध्वनि मे है।

"ट" शब्द पृथ्वी और करट अर्थ मे है। "ठ" शब्द ध्वनि, महेश्वर, शून्य, वृहदध्वनि और चन्द्रमण्डल अर्थ मे है। "ड" शब्द शिव और ध्वनि मे है। "ढ" शब्द भय, निर्गुण, शब्द और ढक्कन अर्थ मे है "ण" शब्द निश्चय और ज्ञान अर्थ मे है।

"त" शब्द तस्कर, क्रोड अक और पुछ (पूछ) अर्थ मे है। "ता" शब्द दया अर्थ मे है। "थ" भय से रक्षा अर्थ मे और महापर्वत अर्थ मे है। "द" शब्द नपुसकलिग मे होने पर पत्नी वाचक है। "दा" शब्द दाता, दान और बध अर्थ मे है। "धा" शब्द गुह्य, केश, धाता, बुद्धि और मति अर्थ में है। "धू" शब्द भार, कपन और चिता अर्थ मे है "न" शब्द मनुष्य, बध, और बुद्ध अर्थ मे है "नि" शब्द नेता अर्थ मे है। "नु" स्तुति अर्थ मे, "नौ" सूर्य अर्थ मे है।

"प" शब्द पाता-रक्षक अर्थ मे, पावन और जलयान-जहाज अर्थ मे है। "फ" झझा और जल फेन के अर्थ मे है। "भा" काति और भर्भव स्थान के अर्थ मे है। "भी" भय अर्थ मे है। "म" शिव विधि, चद्र और मस्तक अर्थ मे है। "मा" मान, श्री, माता अर्थ मे है। "मा" अव्यय होने पर वारण अर्थ मे है "मु" पुरुष और बधन अर्थ मे है।

"य" शब्द मा ारिश्वा अर्थ मे है। "य" नपुसकलिग मे यश मे है। "या" शब्द याता, खटवाग, यान और लक्ष्मी अर्थ मे है। "र" शब्द धैर्य, तीव्र, वैश्वानर-अग्नि और काम अर्थ मे है। "रा" शब्द स्वर्ण, मेघ और ध्वनि अर्थ मे है। "री" शब्द श्रम अर्थ मे "रु" शब्द भय और सूर्य अर्थ मे है। "ल" शब्द इन्द्र और चलन अर्थ मे है। "व" शब्द महेश्वर, पश्चिम दिशा के स्वामी अर्थ मे, "इव" अर्थ मे और स्मर-कामदेव अर्थ मे है।

"श" शब्द नपुसकलिग मे होने पर शुभ अर्थ मे है। "शा" शब्द शोभा अर्थ मे, "शी" शयन अर्थ मे और "शु" निशाकर-चद्रमा आदि अर्थ मे है। "ष" आलिगन अर्थ मे, पुनर्गर्भ, विमोक्ष और परोक्ष अर्थ मे है। "सा" लक्ष्मी अर्थ मे है। "हो" निपात है। "हु" शब्द दारु और शूलधारी अर्थ मे है। "क्ष" शब्द क्षेत्र और राक्षस अर्थ मे है। इस प्रकार प्राचीन आचार्यो से सम्मत यह "एकाक्षर नाममाला" मैने कही है।

